❀ मलयसुन्दरी रास ❀

पूज्य गुरुदेव प्रज्ञापुरुष युगप्रभावक
स्व० आचार्य श्री जिन कान्तिसागर सूरीश्वरजी म. सा.
के प्रधान शिष्य

गणिवर्य मणिप्रभसागर

अर्थ सहयोग

पूजनीया प्रर्वात्तिनी आगम ज्योति श्री सज्जन श्रीजी म सा
श्री शशिप्रभा श्री जी म सा की प्रेरणा से
श्री विमलचद जी भडारी की धर्मपत्नी
सौ श्रीमती कमलेश देवी के १६ उपवास
की तपश्चर्या के उपलक्ष मे
श्री इन्द्रचन्दजी, विमलचदजी, पद्मचदजी, ज्ञानचदजी भडारी
जयपुर

मलयसुन्दरी रास— गणिवर्य मणिप्रभसागर

कान्ति प्रकाशन— वाडमेर द्वारा प्रकाशित

मूल्य— १० रुपये



पूज्य गणिवर्य श्री मणिप्रभसागर जी म. सा. से वासक्षेप
ग्रहण करते हुए सौ० कमलेश देवी विमलचंदजी भंडारी
(१६ उपवास की तपश्चर्या के उपलक्ष में)

भागी भागी आई सारी दे दी, जो थी बुरी खबर ॥२४

नृप मूर्च्छित हो गिरा धरा पर, पवन डालने लगे स्वजन ।
मूर्च्छा हटे घटे सिर गर्मी, लेप लगाते घिस चन्दन ॥२४

सावचेत होकर नृप करता, विलापात अपने मुख से ।
पहले मैं मर जाता तो छुट, जाता इस भारी दुख से ॥२४

मेरी दानी महादक्ष थी, विपदागम उसको सूझा ।
मैं न बचा पाया अब किसकी, स्तवना करूँ करूँ पूजा ॥२४

दुखी स्वयं हो अपने दुख से, दुखी बनाता औरों को ।
चोर यथा चोरी सिखलाता, अपने साथी चोरों को ॥२४

सचिवों ने मिल कहा चलो, उठ शीघ्र महारानी के पास ।
कहीं आ गया होवे वापिस, एक बार जो निकला सांस ॥२४

लडखडते पांवों से चलकर, परिकर युत नरवर आया ।
पड़ी हुई निश्चेष्ट नैन से, निरखी रानी की काया ॥२४

बहुत बडा आघात लगा दिल, वज्रपात से भी भारी ।
मूर्च्छित हो गिर गया वहीं पर, छिड़का ले शीतल वारी ॥२५

मानो क्रम सा बना देख लो, मूर्च्छा आती आता होश ।
वपु में दँष्ट्राघात नहीं व्रण, देख किया सबने संतोष ॥२५

क्यों किस विधि से प्राण गए फिर, वैरी सुर ने प्राण हरे ।
विशेषज्ञ के विना बात का, अंतिम निर्णय कौन करे ॥२५

स्त्री का दायाँ नेत्र फडकना, बहुत अमगल माना है।
मैं बैठा हूँ पास तुम्हारे, मुझे कही ना जाना है ॥२३३॥
तुम्हे हो गया कुछ भी तो मैं अग्नि शरण हो जाऊँगा।
दे आहुति स्वय की रानी !, पहले तुम्हे बचाऊँगा ॥२३४॥
आश्वासन देकर रानी को, राज सभा मे आया आप।
सिंहासन पर स्थित होकर ही, नरवर कर सकता इन्साफ ॥२३५॥
रानी महलो मे उठ आई, उपवन मे मन शात नही।
फडक रहा है नेत्र दाहिना, क्षण भर भी विश्रात नही ॥२३६॥
घर से बाहर बाहर से घर, सूर्य शिखर पर चढ आया।
शय्या शयित महारानी की, शिथिल पडी सुन्दर काया ॥२३७॥
मानो नीद आ गई अन्तिम, हिले डुले ना खोले नैन।
सुने श्रवन ना मुख से निकले, पीडा मिश्रित मीठे बैन ॥२३८॥
वेगवती दासी भग करके आई, राजा जी के पास।
कहा निकलने वाला ही है, चपकमाला जी का सास ॥२३९॥
तू कहा गई छोड रानी को, बतला दे सारा वृतात।
सुनने लगा समाचार सब, दासी कहती आद्योपात ॥२४०॥
कही नही आराम मिला वे, महलो मे आकर सोई।
पत्र पुष्प लाने को मुझको, भेजा पास नही कोई ॥२४१॥
सभी जीमने चले गयें मै, लाई चुनकर पत्र सुमन।
आ के देखा तो रानी का, शीतल पडा लगा सब तन ॥२४२॥

कहाँ गई तूं पता बता दे, मैं भी वहीं चला आऊँ।
निरखूं तेरा स्नेहमयी मुख, तृप्त स्वयं में हो पाऊँ ॥२६३॥

ऐसे कहते कहते मूर्च्छित, होकर के नृप गिर जाता।
प्राण पखेरू उड़ जायेंगे, पिंजर अस्थिरता पाता ॥२६४॥

गोल्ला नदी किनारे चलकर, मेरी करो चिता तैयार।
मरा हुआ क्या जीऊँ मेरे, मर जाने में समझो सार ॥२६५॥

गीले नैंन बना सब बोले, हमें न करिये आप अनाथ।
पानी बिना मछलियां जीवे, कभी न होने वाली बात ॥२६६॥

सूर्य अस्त होने पर विकसित, कमलाकर रह सके नहीं।
डाली से गिर पड़े फूल फल, पृथ्वी ऊपर पके नहीं ॥२६७॥

बिना आपके हम लोगों का, कोई भी आधार नहीं।
सिवा स्वयं के हम सब का कुछ, करते आप विचार नहीं ॥२६८॥

कोई द्वेषी दुश्मन आकर, हमला कर ले राज्य न छीन।
समझो बात नाथ धर धीरज, आप चतुर सिर मौर प्रवीन ॥२६९॥

देवी के मर जाने का दुख, हम सबको सहना होगा।
कर्मो के सम्मुख नतमस्तक, बन करके रहना होगा ॥२७०॥

नर, नरवर, केशव, चक्रीश्वर, तीर्थंकर देवेन्द्र महान।
कर्मो के आगे हारे सब, कर्मजाति ऐसी बलवान ॥२७१॥

छिपा न कुछ भी मेरे से पर, मैंने उसको दिया वचन।
तेरे संग प्राण त्यागूँगा, तेरा मेरा स्नेह सघन ॥२७२॥

मुख्य सचिव ने सेनापति ने, परामर्श कर लिया तुरत ।
रानी के पीछे राजा भी करे, स्वय का कही न ग्रत ॥२५३॥
राजा विना राज्य की रक्षा, करने वाला अन्य नही ।
इसके लिए उपाय ढूढने, जाना उचित ग्ररण्य नही ॥२५४॥
मरी नही है रानी इसके प्राण, नाभि मे ग्रटक पडे ।
करे उपाय पुन जीवित हो, वैद्य बुलाये वडे-वडे ॥२५५॥
सुन नृप वोला वही करो वस, जिससे रानी जी जाये ।
इसके जीने से महलो मे, मेरे जी मे जी ग्राये ॥२५६॥
तान्त्रिक मान्त्रिक ग्रौर चिकित्सक, ग्राए होने लगा इलाज ।
ग्रभी जिला देंगे हम इसको, सव देते है ये ग्रावाज ॥२५७॥
समय टालने के खातिर ही, मुख्य सचिव ने चाल चली ।
लेकिन खारे पानी से कब, कोई कैसी दाल गली ॥२५८॥
मणि ग्रौषधि मन्त्रादिक सारे, निष्क्रिय निवडे रात गई ।
मुख्य सचिव सेनापति बोले, हाथ नही सव वात गई ॥२५९॥
हुग्रा सवेरा ग्रव राजा को, रोके कैसे मरने से ।
जीना होना तो जी जाती, उपचारो के करने से ॥२६०॥
घडी दिवस सम, दिवस मास सम, मास वर्ष सम बीतेगा ।
तेरे विना मुझे जीवन मे, कौन स्नेह से जीतेगा ॥२६१॥
धिग् सत्ता, धिग् वैभव, कौशल, तेरे को न जिला पाया ।
विना निमत्रण तुझको लेने, कैसे काल चला ग्राया ॥२६२॥

सरिता के तट रखी रथी अथ, चिता सजाने लोग लगे ।
असगे कोई नही परस्पर, सभी यहां पर लोग सगे ॥२८३॥
सरिता जल में स्नान हेतु अथ, राजा उतर पड़ा सोत्साह ।
साथ जलूँगा आज चिता में, दिए वचन की कर परवाह ॥२८४॥
इतने में पानी में बहता, आया सूखा ठूंठ बड़ा ।
बाहर इसे निकालो बोला, सचिव किनारे खड़ा खडा ॥२८५॥
कुछ कमती दिखते है लक्कड़, ये आयेगा काम यही ।
तैराको ! उतरो जल भीतर, आगे बह जाए न कही ॥२८६॥
क्षण में खींच उसे लाकर के, सबके सम्मुख डाल दिया ।
मानो तत्र स्थित लोगों ने, पूर्णतया संभाल लिया ॥२८७॥
राजा सचिव नागरिक सारे, बोले काठ बंधा कैसे ।
बंधन काटो छुरियों से, आदेश दे दिया है ऐसे ॥२८८॥
बंधन खुलते ही दो टुकड़े, हुए काठ के अलग वहीं ।
उसमें चपकमाला रानी, रानी कोई और नहीं ॥२८९॥
चन्दनमयी विलेपन तन से, कस्तूरी सी उठी सुगन्ध ।
गल में मुक्ताहार मनोहर, नयन नींद से आधे बन्द ॥ २९०॥
यह क्या ? यह क्या ? हुई हर्ष ध्वनि, शोक घटा फट गई तुरंत ।
जीवित रानी का यों मिलना, एक नही आश्चर्य अनन्त ॥२९१॥
जिसे जलाने को हम लाए, वह है या यह है रानी ।
हम कैसे पहचाने माने, जाने सच केवल ज्ञानी ॥२९२॥

मेरा वचन न टला आज तक, अब कैसे टल जाएगा ।
मेरे मरने के पीछे फल, जो आना सो आयेगा ॥२७३॥
इसीलिए न विलब करो तुम, करो चिता की तैयारी ।
मौन हो गए मत्रीश्वर सब, नही नृपाज्ञा स्वीकारी ॥२७४॥
खडे पास मे लोग दूसरे, उनको यह आदेश दिया ।
ये न करे तो करो भई[1] तुम, कहना यथा हमेश किया ॥२७५॥
बाल वृद्ध नर नारी सारे, शोकाकुल हो साथ चले ।
नही किसी को पता कौनसे, चौराहे से हो निकले ॥२७६॥
नही किसी ने लिया अन्नजल, नही किसी ने बोला बोल ।
कौन कौन आया है देखा, नही किसी ने आखे खोल ॥२७७॥
सूना है मन, सूना है तन, सूना वचन, वाक्य ससार ।
सूना शहर, दिशाये सूनी, नीलगगन-वत् शून्याकार ॥२७८॥
पशुओ ने भी लिया न चारा, पक्षी चुगते चूर्ण नही ।
काली चिडिया किसी पथिक को, उडकर देती सूण नही ॥२७९॥
पिता समान प्रजा को पाला, कौन उसे अब पालेगा।
दुख सागर से हाथ पकड कर, बाहर कौन निकालेगा ॥२८०॥
आप नही जाते मरने को, हम सब जाते मरने को ।
दाता कौन मिलेगा हमको, पेट हमारा भरने को ॥२८१॥
धैर्य, शौर्य, औदार्य, दक्षता, दान, सत्य कारुण्य, महान ।
निराधार हो गए आज से इन्हे कौन देगा अब स्थान ॥२८२॥

यथास्थान सब बैठे मिलकर, अचरज का कुछ पार नहीं ।
रानी बोली सुनो सुनाऊँ, दू-ज्यादा विस्तार नहीं ॥३०३॥
नेत्र फड़कता रहा दाहिना, कहीं नहीं आराम मिला ।
सोई महलों में आ कर के, दासी को इक काम भुला ॥३०४॥
किसी दुरात्मा ने आकर के, मेरा कर अपहरण लिया ।
सूने गिर के शिखर पहुँच कर, मुझे वहीं पर छोड़ दिया ॥३०५॥
पता नहीं वह गया कहां पर, निष्ठुर निर्दय छली महान ।
रणस्थली में वनस्थली में, पुण्य स्वयं का बली महान ॥३०६॥
उठी शिला से भय से कांपी, देखा इधर उधर वन में ।
सिंह व्याघ्र के शब्द श्रवण में, भय पैदा करते मन में ॥३०७॥
जाऊँ कहाँ कहाँ सुख पाऊँ, जान बचाऊँ मैं कैसे ।
क्षण में बुरे विचार हृदय में, लाऊँ मैं ऐसे ऐसे ॥३०८॥
झपापात करूं या फांसी, खाकर मरूं गिरूं जल में ।
फट जाए जो हृदय दुःख से, छुट जाऊँ मैं इक पल में ॥३०९॥
रही कहीं पर मेरी नगरी, रहे कहीं प्रिय प्राणेश्वर ।
रही कहाँ मैं आज अकेली, जीऊँ अथवा जाऊँ मर ॥३१०॥
जीवित सौ सौ भद्र देखता, सूक्ति सत्य है संस्कृत की ।
इसीलिए मरना न चाहिए, गति में त्वरता स्वीकृत की ॥३११॥
आगे जाते वहीं जिनालय, मिले ऋषभ प्रभु के दर्शन ।
अंधकार में दीप ज्योति ज्यों, उपजाती है आकर्षण ॥३१२॥

देख रहा हूँ या मैं सपना, घुसी काष्ठ मे यह कैसे ।
कैसे वहकर आई जल मे, पल मे प्रकट हुई कैसे ॥२९३॥

क्रीडा करते हुए उकरडे, पर मिल जाए रत्न अमोल ।
मिली भाग्य से रानी हमको, चागे ओर वजाओ ढोल ॥२९४॥

शिविका मे शव को सभालो, सुन आदेश गए नौकर ।
'हा हा ठगा गया मैं' कहता, दिखा मृतक जाता उडकर ॥२९५॥

हाथ मसलता दात पीसता, लाल लाल दिखलाता नेत्र ।
क्षण मे शव अदृश्य हो गया, स्वच्छ पवित्र हो गया क्षेत्र ॥२९६॥

जान नौकरो मे यह व्यतिकर, विस्मित आनदित भूपाल ।
देवी ! दया करो हल करदो, उलझे यहा अनेक सवाल ॥२९७॥

उत्तर के वदले देवी ने, पूछ लिए है प्रश्न महान् ।
गीले वस्त्रो नदी किनारे, आप पधारे क्यो पुनवान ॥२९८॥

एकत्रित क्यो हुए लोग ये, क्यो ये चिता रचाई है ? ।
क्या कोई मर गया वताओ, शिविका उसको लाई है ॥२९९॥

राजा वोला इन प्रश्नो का, उत्तर पीछे दे दूंगा ।
तुम अपना वृतात सुनाओ, शाति सौख्य मै पालूगा ॥३००॥

गई कहाँ तू, घुसी काठ मे, मिला कहा से मुक्ताहार ।
किसने जल मे तुझे वहाई, प्रश्न चार से जुडे हजार ॥३०१॥

रानी वोली ऐसे हो तो, वैठो वड की छाया मे ।
वाणी मे शीतलता होगी, शीतलता सव काया मे ॥३०२॥

समर्पण

पूज्य आचार्य प्रवर, परम सहृदयी,

वात्सल्य वारिधि

तपोगच्छाधिपति

आचार्य श्रीमद्विजययशोदेवसूरीश्वर जी म. सा.

को

सादर........

—मणिप्रभसागर

मरुस्थली मे मिले कमल खिल, जाय कल्पतरु आगन मे ।
मिले जहाज महासागर मे, खुशी वही जिनदर्शन मे ॥३१३॥
स्तुति की प्रभु की सेवा भी की, शात-मना हो त्रिकरण शुद्ध ।
इतने मे आ देवी कोई, बोली वचन विशेष प्रबुद्ध ॥३१४॥
यह तेरी जिनभक्ति देखकर, और देखकर तेरा कष्ट ।
हो आकृष्ट चली आई मैं, श्री जिन शासन देवी स्पष्ट ॥३१५॥
चक्रेश्वरी नाम है मेरा, अपर नाम मलया मेरा ।
मेरे होते हुए यहा पर, बाल न बिगडेगा तेरा ॥३१६॥
साधर्मिकी बहन तू मेरी, मेरा वदन कर स्वीकार ।
पूछ लिये मैंने देवी से, प्रश्न भविष्य विचार उदार ॥३१७॥
कौन मुझे लाया क्या फिर से, स्वजन बन्धु मिल पायेंगे ।
अथवा मुझे ढूढते मेरे, पीछे वे मर जायेंगे ॥३१८॥
देवी बोली वीरधवल का, वीरपाल था भ्राता एक ।
राज्य हडपने की इच्छा से, रखता महाद्वेप अविवेक ॥३१९॥
विविध उपाय सोचता करता, जैसे नृप मारा जाए ।
किया शस्त्र का वार अचानक, सभल गए नृप बच जाए ॥३२०॥
एक प्रहार किया उनने फिर, वीरपाल मर गया वही ।
मरकर भूत बना इस गिर पर, भूला पिछला वैर नही ॥३२१॥
छल अन्वेपण करता पीछे, फिरता मार नही पाया ।
पुण्य प्रबल हो आयु दीर्घ हो, सकुशल बनी रहे काया ॥३२२॥

फिर सोचा है चम्पाजी से, राजाजी का परम स्नेह ।
कहा जा सके ऐसे जैसे, एक प्राण हैं दो हैं देह ॥३२३॥

देवी के मरने से पीछे, राजा भी मर जायेगा ।
मेरे मन का सोचा समझा, काम सहज सर जाएगा ॥३२४॥

तुझे मारने को भी देवर, पूर्णतया निकला असमर्थ ।
कोई किसे मारदे ऐसे, तो करणी हो जाए व्यर्थ ॥३२५॥

अवसर पा अपहरण कर लिया, मलय शिखर पर छोड़ गया ।
देख दीर्घ आयुष्य पुण्य बल, हाथ दूर से जोड़ गया ॥३२६॥

तुझे अकेली देख शीघ्र मैं, चल आई हूँ तेरे पास ।
क्या दूं तुझे माँग मन इच्छित, जिनवाणी पर कर विश्वास ॥३२७॥

आप प्रसन्न अगर मेरे पर, 'अपत्यदा भव' दो वरदान ।
राजा बोला, बोलो रानी, क्या अपने होगी सन्तान ॥३२८॥

होगा पुत्र तथा पुत्री का सुन्दरि ! जोड़ा एक भला ।
देवी ने जो दिया वचन वह, कभी नहीं खाली निकला ॥३२९॥

इतने दिन तक उस दुश्मन ने, संतति का कर रखा निरोध ।
उसे रोक दूंगी मैं अब से, दूंगी शिक्षा दूंगी बोध ॥३३०॥

नृप ने की तत्काल प्रशंसा, माँगा तैंने ठीक सही ।
मति आती है काम स्वयं की, साहजी वाली सीख नहीं ॥३३१॥

इसके सिवा और क्या तेरा, देवों ने उपकार किया ।
हार दिखाकर बोली उसने, मोती वाला हार दिया ॥३३२॥

अपने हाथो से पहनाया, 'लक्ष्मीपुज' वताया नाम ।
इसे पहन कर रखने से ही, पूरे हो जाते सब काम ॥३३३॥
प्रभावकारी दुर्लभ है यह, देगा अति सुन्दर सतान ।
देवी द्वारा प्राप्त हुआ यह, सबसे बहुत बडा वरदान ॥३३४॥
मैंने पूछा दुष्ट देव वह, गया कहाँ क्या किया वहाँ ।
चन्द्रावती पुरी मे पहुँचा, त्वत् शव रच रख दिया वहाँ ॥३३५॥
देख अचानक तुझे अचेतन, वीरधवल ने पाया कष्ट ।
जाने वही और क्या जाने, कैसे हो वाणी से स्पष्ट ॥३३६॥
जीयेंगे वे ? मुझे मिलेंगे ? दुःख प्रश्न कर लिए तुरन्त ।
सात पहर के बाद मिलेंगे, हर्षित भी होंगे अत्यन्त ॥३३७॥
विद्याधरी एक इतने मे, आई दासी साथ लिए ।
पूछा है तू कौन अकेली, मैंने दुखडे सुना दिए ॥३३८॥
इसके आने से वह देवी, चली गई अदृश्य हुई ।
विद्याधरी सुरी के द्वारा, कभी नही सस्पृश्य हुई ॥३३९॥
दुखडे सुनकर दुःख मनाना, स्वाभाविक मन सज्जन का ।
दुखडे सुनकर हर्ष मनाना, स्वाभाविक गुन दुर्जन का ॥३४०॥
रूपवती स्त्री रानी होकर, सूने गिर पर कष्ट सहे ।
साहस वाला कोई हो तो, जा विधना से स्पष्ट कहे ॥३४१॥
तुझे स्वय तेरी नगरी मे, अभी सुरक्षित आती छोड ।
किन्तु मुझे विद्या साधन का, सुन्दर समय मिला बेजोड ॥३४२॥

बात एक है और आ रहे, मेरे प्रिय पति विद्याधर।
रूप देखकर मोहित होकर, करले स्त्री ले जाकर घर ॥३४३॥

मेरी सौत बने तू ऐसे, आए दुख का अन्त नहीं।
तुझे सुरक्षित अन्य स्थान पर, पहुँचा दूं ये पंथ सही ॥३४४॥

ऐसे कहकर वो ले आई, किसी नदी के तट ऊपर।
मैं ही जानू जो बीती सो, आए संकट संकट पर ॥३४५॥

मुझे मार डालेगी अथवा, लटका देगी शाखा पर।
जल में कहीं बहा देगी ये, जाने या माने ईश्वर ॥३४६॥

सूखा लक्कड़ पड़ा किनारे, विद्या से दो भाग किये।
समा सके सोई स्त्री उसमें, जो पाये सोभाग लिए ॥३४७॥

कस्तूरी कर्पूर आदि से, किया विलेपन मेरे तन।
फिर मुझसे कहती, आ देवी !, करूँ सुरक्षित शील रतन ॥३४८॥

मुझे सुलाकर भाग दूसरा, ढँका रखा उसके ऊपर।
फिर क्या किया पता ना मुझको, आई यहां स्वयं बहकर ॥३४९॥

बोला सचिव सुबुद्धि बुद्धि से, उसने सरिता में डाला।
तुम्हें मारने से विद्या में, दिखा विघ्न आने वाला ॥३५०॥

उसी काष्ठ को आते देखा, हमने बाहर लिया निकाल।
बंधन काटे, चीरा-फाड़ा, देखा अच्छी तरह संभाल ॥३५१॥

उसमें से मिल गई आप ये, पुण्य हमारा बहुत प्रबल।
सात पहर पश्चात मिलन का, कथन देव का हुआ सफल ॥३५२॥

नृप बोला जाना न किसी ने, भूत उपद्रव है कुल पर।
बहुत समय के बाद सामने, आई परिस्थितियाँ खुलकर ॥३५३॥
हे रानी! अपहार तुम्हारा, कुलाचार बनकर आया।
उग्रौषधि सेवन से जैसे कचन बन जाती काया ॥३५४॥
भट्टारिका सुरी के मदिर, पास रख दिए काष्ट युगल।
इतिहासो की ये सामग्री, रहे सुरक्षित रहे सबल ॥३५५॥
सुयश शिखर पर चढा भूप का, सूर्य शिखर पर ज्यो आया।
क्षुधा सहन करने मे अक्षम, दिखती हम सबकी काया ॥३५६॥
सचिव विनय से करे निवेदन, चले अन्न जल ग्रहण करे।
रानी राजा गजारूढ हो, मगल जय ध्वनिया पसरे ॥३५७॥
चारण विरदावलियाँ बोले, सुहागने मगल गाती।
कुमारियाँ ले कलश शीश पर, देने शकुन चली आती ॥३५८॥
पहुँच महल मे सब लोगो को, सम्मानित कर विदा किया।
यथा योग्य सत्कार-दान दे, फर्ज स्वय का अदा किया ॥३५९॥
स्नान ध्यान कर प्रभु पूजन कर, भोजन कर निवृत्त हुए।
पुनर्जन्म सा मान महोत्सव, करने नृपति प्रवृत्त हुए ॥३६०॥
फूलो की शय्या से उठती, भीनी-भीनी मधुर सुगन्ध।
ज्योत्स्ना पसर रही पृथ्वी पर, मन्द पवन बहता सानद ॥३६१॥
महलो मे साम्राज्य शान्ति का, वीर धवल लेते आराम।
विरह वेदना रही न तन मे, मनमे क्यो न सुहाये काम ॥३६२॥

हास्य विनोद कौतूहल क्रीडा, करते निद्राधीन बने ।
रानी बनी द्विजीवा जीवन, जीवन से रंगीन बने ॥३६३॥

ज्यों ज्यों समय निकलता जाये, गर्भ चिन्ह सब दिखते स्पष्ट।
सयम पूर्वक रहने वाली, स्त्री को होता अधिक न कष्ट ॥३६४॥

गर्भावस्था के नियमों का, आवश्यक पालन करना ।
ऊँचे भाव बनाये रखना, शिशु का संचालन करना ॥३६५॥

इच्छायें रानी की पूरी, कर देता नृप वीरधवल ।
मास सवा नौ बीते जनमा, रानी जी ने एक युगल ॥३६६॥

पुत्र तथा पुत्री दोनों का, सुन्दराति सुन्दर आकार ।
वेगवती ले गई बधाई, पहुँची राजा के दरबार ॥३६७॥

मुकुट सिवा राजा ने अपने, आभूषण दे दिए उतार ।
उतार दिया दासी के सिर से, दासीपन का सारा भार ॥२६८॥

दश दिन उत्सव जाय मनाया, राज्यादेश निकाला है ।
दिन जैसा हो रहा रात में, पुर भर में उजियाला है ॥३६९॥

स्वर्णदीप प्रज्वलित हो रहे, स्वर्णकलश स्थापित पथ पर ।
हर घर पर ध्वज लगा फहरने, वदनवार बंधी घर घर ॥,३७०॥

कारागार कर दिए खाली, साफ सफाई करने को ।
दश दिन बदी नहीं बनाये, कारागृह को भरने को ॥३७१॥

किसी जीव की कहीं न हिंसा, खेले कोई नहीं शिकार ।
पटह अमारि किया उद्घोषित, जीए सुखपूर्वक संसार ॥३७२॥

जिन पूजा जिन भक्ति शक्ति मे, बढकर करते नर नारी ।
धर्म ध्यान मे ज्ञान ध्यान से, बढे पुण्य की फुलवारी ॥३७३॥

सोना चादी रतन धान्य धन, बँटता है खुल्ले हाथो ।
फूल पुष्प तावूल वसन ले, अनुभव करते सुख साती ॥३७४॥

नही गेह मे नही देह मे, समा सका है हर्ष महान ।
इसीलिए चुन लिया हर्ष ने, चारो ओर खुला मैदान ॥३७५॥

वारागना नाच दिखलाती, दुदुभियाँ वजती प्यारी ।
उत्सव से कोई न अलग है चाहे नर चाहे नारी ॥३७६॥

प्रीतिभोज का वृहदायोजन, किया गया उत्सव के बाद ।
स्नेही स्वजन प्रजाजन लेते, मिठाइयो का मीठा स्वाद ॥३७७॥

मलया देवी की करुणा से, प्राप्त हुई है ये सतान ।
उसका नाम याद रखने को, नामकरण रखना धर ध्यान ॥३७८॥

मलयकेतु सुन मलय सुन्दरी, नाम सुता का रखा गया ।
जब देखो तब सबको लगता, शिशुओ का मुख नया नया ॥३७९॥

विद्या विना न नर की शोभा, वालक हो चाहे वाला ।
जिसके आगे भैंस बरावर, दिखता हो अक्षर काला ॥३८०॥

मलय और मलया को भेजा, कलाचार्य के पास तुरन्त ।
कठिन विषय भी सरल बने, यदि विद्यार्थी हो प्रतिभावत ॥३८१॥

चौंसठ और वहत्तर सारी, कला हस्तगत कर ली है ।
विद्या गुरु ने प्रसन्नता से, अपनी आत्मा भरली है ॥३८२॥

हयक्रीड़ा गजक्रीड़ा क्रीड़ा, सीखी है तलवारों की ।
योद्धा रण में किया न करते, चिंता फिकर प्रहारों की ॥३८३॥

धनुष बाण ले लक्ष्यवेध जब, करता मलय कुमार भला ।
हर्षचकित हो सभी बोलते, इसको कहते बाण कला ॥३८४॥

बाल्यावस्था गई किशोरावस्था, पार गई तन से ।
अब दोनों की भेंट हुई है, उठते प्यारे यौवन से ॥३८५॥

वय:संधि पर सहज बिगड़ना, किन्तु संभलना कठिन महान ।
गधा उम्र इसको कहते हैं, होता बहुत अधूरा ज्ञान ॥३८६॥

उत्सुकता हो अहंकार हो, तब हो जाता है भटकाव ।
संरक्षण हो सबल उसी का, संभव माना गया बचाव ॥३८७॥

मलया करुणा की प्रतिमा थी, माता से सिंचित संस्कार ।
मन से कोमल तन से कोमल, कोमल वचनों की भंडार ॥३८८॥

कुटुंबियों को प्राणों से भी, लगती थी प्यारी मलया ।
काम काज से लाज साज से, पड़ती थी न्यारी मलया ॥३८९॥

लंबे लंबे घुंघराले थे, केश घने काले काले ।
मानो यहां सभा करते हैं, मधुकर होकर मतवाले ॥३९०॥

स्निग्ध स्निग्ध थे नैन मनोहर, मानो खिले कमल कोमल ।
जिसपर तिरछी नजर पड़े वह गिरे वहीं होकर घायल ॥३९१॥

शालिग्राम सोने सी कोमल, काया पाई मलया ने ।
वट तरु जैसी गहरी शीतल, छाया पाई मलया ने ॥३९२॥

अवयव सुगठित पठित पाठसम, यथास्थान शुभ मानोन्मान ।
कहा उतार चढाव कहा पर, पडित पथिक करे पहचान ।।३९३।।

सीधी सरल नासिका दीपे, दीपे ज्यो शुक की नासा ।
ऊँची नाक रहे दुनिया मे, बोल रहा ऐसी भाषा ।।३९४।।

अधर लाल लटके न अधर पर, पतले दोनो एक समान ।
बडी नही मुह फाड दिखाये, क्यो दतावलि और जबान ।।३९५।।

उजले दात बनाते आए, अतर का आरोग्य विशेष ।
मैले दाँत आँत भी मैली, ऐसे कहते वैद्य हमेश ।।३९६।।

आओ इधर मनोज विराजो, आमत्रण दे रहे उरोज ।
बोझ लगे दुनिया के मन को, मलया गिने न इनको बोझ ।।३९७।।

गति, मति, व्यवहृति बनी व्यवस्थित, यौवन के आ जाने से ।
होता पूर्ण तृप्ति का अनुभव, मन चाहा फल पाने से ।।३९८।।

धात्री वेगवती को लेकर, वन मे क्रीडा को जाती ।
कोई नही रोकने वाला, नही किसी से शरमाती ।।३९९।।

रुके विकास नही अगो का, उठी उमगो का भी साथ ।
अबुधि से क्या अनजानी है, उठी तरगो वाली बात ।।४००।।

घर के भीतर रहने वाली, शत प्रतिशत क्या है सोना ।
चाहे कही रहे जाए नर, जो होना है वो होना ।।४०१।।

बुद्धि विवेक जगाया जाए, पीछे कुछ दी जाए छूट ।
असावधानी अपनी हो तब, हर कोई ले जाए लूट ।।४०२।।

कैसे रक्षा करना इसकी, शिक्षा लो दो आप सभी।
लड़के और लड़कियाँ ये जो, होंगे हो मां बाप कभी ॥४०३॥

अपनी कमजोरी अपने को, खाती है यह सच्ची बात।
बदले युग के साथ बदलना, चलना सबको सबके साथ ॥४०४॥

चिन्तन अस्थानीय नहीं यह, 'गणि मणि' की चल रही कलम।
आप कहो या नहीं कहो, मैं कर देता हूँ यहीं अलम् ॥४०५॥

दोहे

मलय मुन्दरी का लिखा मैंने पहला खण्ड।
खंड खंड में बाँटकर, लिखना चरित अखंड ॥१॥

सुत जनमा जनमी सुता, प्रभुता लाये साथ।
अलग नहीं 'मणि-मणिप्रभा' अंगुलियों से हाथ ॥२॥

वैवाहादिक के लिए, लिखित लेख दे काम।
'मणि' क्यों करता जगत फिर, नाम और बदनाम ॥३॥

सुने पढ़ें धीरज रखें, चखें कथा का स्वाद।
करे किसी से भी नहीं, 'गणि-मणि' वाद-विवाद ॥४॥



द्वितीय खण्ड

दोहे

श्री दादा गुरु जिन कुशल-सकुशल दे आशीष ।
'गणि-मणि' रचित चरित्र के पद्य-पद्य उष्णीष ॥१॥
साथी सतो से मिले, सेवा शुभ सहयोग ।
रहे उपस्थित प्रेम से नियमित श्रोता लोग ॥२॥
भगे अलसता विवशता, तन मन आये स्फूर्ति ।
मलय सुन्दरी चरित की, खडी करूँ मै मूर्ति ॥३॥

तर्ज— राधेश्याम

पृथ्वी स्थान नगर अति सुन्दर, 'सूरपाल' वसुधापति तत्र ।
पद्मावती सती पटरानी, सुख समृद्धि शाति सर्वत्र ॥ १ ॥
सुन्दर राजकुमार महाबल, बुद्धिमान बलवान विशेष ।
भय मे कपित कभी न होते, जिसके आत्म असख्य प्रदेश॥ २ ॥
विद्या सिद्ध पुरुष इक आया किया कुवर ने उठ सत्कार ।
पडित परम प्रसन्न हो गया, प्रेम भरा पाकर व्यवहार ॥ ३ ॥
उसने विद्यायें बतलाई, रूप बदल देने वाली ।
इसने एक एक कर सीखी, अनुभव द्वारा अजमा ली ॥ ४ ॥

विद्या सिद्ध पुरुष को सत्कृत, सम्मानित कर किया विदा।
महापुरुष की महिमा पर मर्हि, मन से होती रही फिदा ॥ ५ ॥

वीर धवल के पास कार्यवश, नृप ने भेजा मन्त्रीगण।
राजकुमार पूछता नृप से, कर आऊँ मैं देशाटन ॥ ६ ॥

ज्ञान बढ़े सम्मान बढ़े निज, कुलाभिमान सुख बढ़े चढ़े।
देशाटन जो नहीं करे नर, वे विद्यायें व्यर्थ पढ़े ॥ ७ ॥

देश-देश के वेश, रीतियों, भाषाओं का ज्ञान मिले।
घर पर बैठे बैठे किसको, राम-कृष्ण भगवान मिले ॥ ८ ॥

पित्राज्ञा ले प्रतिनिधियों संग, चले वहां से राजकुमार।
सहयोगी का वेष बनाकर, पहुँचे वीर धवल दरबार ॥ ९ ॥

वीर धवल राजा की भारी, सभा शान से जुडी सकल।
द्वारपाल आकर के बोला, शीश झुकाकर दिखा अकल ॥ १० ॥

पृथ्वी स्थान पुरी से आए, सचिव और उनके साथी।
नृप के दर्शन करना चाहते, आज्ञा यों मांगी जाती ॥ ११ ॥

लिवा लाइये उनको अन्दर, द्वारपाल जा ले आया।
रख उपहार सभी ने अपना, शीश झुकाया सुख पाया ॥ १२ ॥

प्राभृत कर स्वीकार भूप ने, बिठलाया करके सत्कार।
दरबारों का होता ही है, अलग-अलग अपना व्यवहार ॥ १३ ॥

नृप ने पूछा सूरपाल नृप, सकुशल हैं परिवार समेत।
परम हितैषी मित्र हमारे, किसी तरह का कहीं न द्वैत ॥ १४ ॥

भुजा दंड करि-शुंड सरीखे, जिसके गले पड़ेंगे जा ।
नारी महा भाग्य शालिनी, पता नहीं वो होगी का ॥ २५ ॥
दशों दिशाएं द्योतित करने, को दश नख दश दीप जले ।
बड़े भाग्य हैं मेरे मनगत, सकल मनोरथ आज फले ॥ २६ ॥
अधर लाल लगते अति सुंदर-सुंदर स्वच्छ प्रवाल समान ।
मानो मुझे देखने बाहर, निकला अन्तर राग महान ॥ २७ ॥
उठे कपोल काम-दर्पण सम, कंधो को छूते दो कान ।
केश कलाप कृष्ण भौरों सा, कहते लक्षण पुरुष प्रधान ॥ २८ ॥
उत्तम अंग रंग भी उत्तम, उत्तम गुण लक्षण वारा ।
चित्र-व्यस्त सी सगी निरखने, अपने मन नैनों द्वारा ॥ २९ ॥
है ये कौन कहाँ से आया, मेरा चित्त चुराया है ।
भोजपत्र पर श्लोक युगल लिख, उस पर तुरंत गिराया है ॥ ३० ॥
आप कौन ? क्या नाम ?, कहाँ के रहने वाले आप भले ।
मेरा चित्त चुराने वाले, पहले देखे नहीं मिले ॥ ३१ ॥
वीरधवल राजा की कन्या, मलय सुन्दरी क्वांरी मैं ।
हुई आपकी तन से मन से, जाऊँ वारी वारी मैं[१] ॥ ३२ ॥
पढ़ा महाबल ने यह पन्ना, ऊपर झांका नैनों से ।
मिलना ऐसे ही होता है, नैनों वाली सैनों से ॥ ३३ ॥

---

(१) कोऽसि त्व तव किं नाम, क्व वास्तव्योऽसि सुन्दर ।
कथय त्वयका जह्वे, मनो मे क्षिपता दृशम् ॥ १ ॥
अह तु वीरधवल-भूपते स्तनया कनी ।
त्वदेकहृदया वर्ते, नाम्ना मलय सुन्दरी ॥ २ ॥

सविनय सचिव खडा हो बोला, सभी तरह से है ग्रानन्द ।
कृपा धर्म की ग्रौर ग्रापका, स्नेह भरा सच्चा सबध ॥ १५ ॥
देख महाबल को राजा ने, पूछा है ये कौन कुमार ?
कहा चतुर नर ने धीरे मे, मम लघु भ्राता है सरकार ॥ १६ ॥
यहा घूमने साथ ग्रा गया, उत्तर ग्रति सक्षिप्त दिया ।
राजा ने सुन ग्रपना ग्राशय, उसी समय ही बदल लिया ॥ १७ ॥
राजकुमार ग्रगर होता तो, मलय सुदरी दे देते ।
ग्राए ग्रवसर का ग्रवसर पर, भारी लाभ उठा लेते ॥ १८ ॥
जिसके लिए यहा ग्राए वो, कार्य निवेदन किया गया ।
ठहराने के लिए ग्रतिथि गृह, इन लोगो को दिया गया ॥ १९ ॥
कुवर महाबल चला घूमने, लेकर कुछ साथी नोकर ।
नए ग्रादमी को न पता है, निकले किधर किधर होकर ॥ २० ॥
राजभवन के नीचे होकर, लगा निकलने जब सुकुमार ।
खिडकी मे बैठी मलया ने, निरखा इसको नजर पसार ॥ २१ ॥
रूप रग से हुई प्रभावित, ग्राहत हुई काम से भी ।
दर्शन प्रथम-प्रथम पाया है, परिचित नही नाम से भी ॥ २२ ॥
शशि मडल सा है मुख मडल, कमल समान खिले दो नैन ।
इनके दर्शन पाते ही क्यो, बना ग्राज यह मन बेचैन ॥ २३ ॥
विशाल वक्ष स्थल पर कोई, भाग्यशालिनी सोयेगी ।
पूर्व जन्म कृत पुण्य पुज से, धन्य-धन्य वो होयेगी ॥ २४ ॥

मलय सुन्दरी जिसमें रहती, वो मंजिल ऊपर वाली।
जिस खिड़की में देखा अब, वह खिड़की पड़ी दिखी खाली॥ ४४॥

मिलना उससे और बोलना, संभव नहीं अंधेरे में।
कमजोरी है बिना मिले ही, लौट पहुँचना डेरे में॥ ४५॥

भरी छलांग कोट को लाँघा, साहस धर ऊपर आया।
राजभवन की पहली मंजिल, आगे पंथ नहीं पाया॥ ४६॥

वीर धवल राजा की रानी, कनकवती का यहां निवास।
बैठी हुई अकेली उसके, पास न कोई दासी दास॥ ४७॥

देख कुंवर को लगी सोचने, बड़ा साहसी सुन्दर नर।
पहरेदारों से बच करके, कैसे ये आया ऊपर॥ ४८॥

विद्याधर या महापुरुष है, बोली हुई विमोहित मन।
इधर आइये विराजिये जी, ह़ाजिर तन धन राजभवन॥ ४९॥

राज कुमार सोचता ऐसे, राजस्वसा या है रानी।
मै जो प्रणयाधीन बन गया, फिर क्या है आनी जानी॥ ५०॥

परदाराव्रत खंडित करना, उचित नहीं मेरे खातिर।
उत्तर समयोचित देने को, सम्मुख हुआ कुंवर हाजिर॥ ५१॥

मलय सुन्दरी के हित लाया, वस्तु उसे दे आऊँ मैं।
है वह कहां मुझे बतलाओ, भाग कहीं ना जाऊँ मैं॥ ५२॥

तदनन्तर जो आप कहेंगी, वही करूंगा सारा काम।
झूठ बोल कर करना पड़ता, समय देखकर प्यारा काम॥ ५३॥

मिले नैन से नैन दूर से, मन से हुए उसी क्षण पास।
लोचन मे लोचन मिलने पर, मन पर पडता प्रेम प्रकाश ॥ ३४ ॥
पूर्व जन्म के सम्बन्धो की, कर लेते लोचन पहचान।
प्रिय मे राग द्वेप अप्रिय से, ऐसे वतलाते भगवान ॥ ३५ ॥
कुमार सोचे इसने अपना, परिचय मुझे दिया प्यारा।
उत्तर देना इससे मिलना, आवश्यक मन निरधारा ॥ ३६ ॥
इतने मे पीछे मे आया, इसे वुलाने को नर एक।
रहने दो अव अधिक घूमना, लगभग लिया शहर फिर देख ॥ ३७ ॥
चलो उतारे पर त्वरता से, करना अपने को प्रस्थान।
अन्यमनस्क कुमार चल पडा, बोल रहा वन कर वेभान ॥ ३८ ॥
अहो अहो नृप महल मनोहर, गोपुर युत युत वातायन।
इन्हे देखने को आया हो, गया यही रुकने का मन ॥ ३६ ॥
पीछे मुड मुड देख रहा है, पर नर ले आया आवास।
बैठा हुआ महावल सोचे, मन से तन से वना उदास ॥ ४० ॥
दे न सका उत्तर निज परिचय, कैसे होगा मेल मिलाप।
चला गया तो रह जायेगा, जीवन भर मन पश्चाताप ॥ ४१ ॥
सध्या हुई हुआ अधेरा, तैयारी ये लोग करे।
मै जाऊँ मिल आऊँ उससे, प्रेमी मरने मे न डरे ॥ ४२ ॥
नही किसी से कहा अकेला, चला अधेरे मे आया।
अधेरे मे दिखे नही मुह, दिखे नही किसकी काया ॥ ४३ ॥

]

लज्जा मौन छोड़ कर बोली, जाने दूंगी नहीं कुमार।
निष्ठुर बनकर जाओगे तो, पहले मुझे जाइए मार ॥ ६४ ॥

स्वागत यही आपका समझो, आत्मसमर्पण हो स्वीकार।
आज गले में पहनाती हूँ, लक्ष्मी पुंज नाम का हार। ६५ ॥

इसे मानलो है वरमाला, करलो अब गंधर्व-विवाह।
सहना पड़े वियोग न मुझको, मानो मेरी नेक सलाह ॥ ६६ ॥

राजकुमारी बहुत उचित हैं मेरी और तुम्हारी प्रीति।
मात-पिता की अनुमति लेकर,करें विवाह यही शुभ रीति॥ ६७ ॥

ऐसे तुम्हें साथ ले जाऊँ कहलाऊँ दुनिया में चोर।
चारों-ओर शोर मच जाए, मुंह छिपाने मिले न ठौर ॥ ६८ ॥

यही प्रयत्न करुंगा जैसे, सहमत हो तब मम परिवार।
वचन तुम्हें देता हूँ आज्ञा, दो जाने की धीरज धार ॥ ६९ ॥

सुन भावी दंपति की बातें, कनकवती को आया क्रोध।
धूर्त ठगोरे से लेना हैं, अभी अभी सारा प्रतिशोध ॥ ७० ॥

दरवाजा कर बंद लगाया, ऊपर से हरिसन ताला।
चमक उठे दोनों मन ही मन, देख भड़कती ये ज्वाला ॥ ७१ ॥

ठग कर मुझे कुमारी से आ मिला महाबल ! धोखेबाज।
इसका फल मैं तुझे चखाऊँ, हाथों हाथ अभी लो आज ॥ ७२ ॥

सुन आवाज मलय बोली ये, मेरी सौतेली माता।
पहली मंजिल में रहती है, क्रोध अधिक उसको आता ॥ ७३ ॥

उसने दिखा दिया है रास्ता, ऊपर जाने का तत्काल ।
हर्ष छलाछल चला महावल, रानी को चक्कर मे डाल ॥ ५४ ॥
रानी उसके पीछे पीछे, चली आई सुनने को वात ।
पुरुष सरल हो सकते है, पर सरल नही होती स्त्री जात ॥ ५५ ॥
सुनती वात खडी हो छिपकर, द्वार छिद्र से झाँके साथ ।
मति मे अपनी इन दोनो की, अगली पिछली आके वात ॥ ५६ ॥
कुमार को कुछ वहम नही था, इसके पीछे आने का ।
अनुभव वहुत वाद मे होता, सुलझे हुए जमाने का ॥ ५७ ॥
मलया सुन्दरी स्थिर मन वैठी, ध्यान महावल का धरती ।
मिलने की आशा न रही पर, हो एकाग्र उसे स्मरती ॥ ५८ ॥
कुमार के आ जाने पर भी, ध्यान भग उसका न हुआ ।
"देखो इधर मृगाक्षी !",सुनकर उसे स्वय का भान हुआ ॥ ५९ ॥
कहे महावल निकल तुम्हारे, मन से वाहर खडा कुमार ।
मलया सुन्दरी वनी प्रफुल्लित, हुआ देख सपना साकार ॥ ६० ॥
उत्तर परिचय देने आया, नाम महावल राजकुमार ।
पृथ्वी स्थान नगर का वासी, सूरपाल नृप तनय उदार ॥ ६१ ॥
आया यहाँ घूमने को मैं, कर्मचारियो को ले साथ ।
लेकिन वीरधवल राजा से, मेरी वात सकल अज्ञात ॥ ६२ ॥
दृष्टि मिलाप हुआ तेरे से, वही खीच लाया इस स्थान ।
आज्ञा दो जाना है जल्दी, करना है पुर से प्रस्थान ॥ ६३ ॥

चिन्तामग्न निहार मलय से, कहा महाबल ने ऐसे ।
देखूंगा मैं कोई भी आ बांका बाल करे कैसे ॥ ८४ ॥
भय स्थानों में आने वाला, रखता अपने साथ बचाव ।
गुटिका एक निकाली मुंह में,डाली जिसका बड़ा प्रभाव ॥ ८५ ॥
चंपक माला को देखा था, बैठी राजा जी के पास ।
उसका रूप बनाया तत्क्षण, किसको हो इसका विश्वास ॥ ८६ ॥
सावधान बन चंपक माला, बैठ गई बेटी के पास ।
राजा ने ताला खुलवाया, अपराधी का होवे नाश ॥ ८७ ॥
नृप ने महिलों में घुसते ही, देखा दृश्य और का और ।
कनकवती रानी से पूछा, बता कहाँ पर है वो चोर ॥ ८८ ॥
जो कुछ मुझसे कहा यहाँ पर, कुछ भी नजर नहीं आता ।
मलिन-भावना वाली होती, प्रायः सौतेली माता ॥ ८९ ॥
चंपकमाला कनकवती से, बोली बहन इधर आओ ।
अकस्मात आने का कारण, समझाओ मत घबड़ाओ ॥ ९० ॥
कैसे आगे कदम बढ़ाये, बोले सहम गई रानी ।
रानी के मन बीच बड़ी है, ग्लानि साथ में हैरानी ॥ ९१ ॥
अभी यहाँ पर बंद किया था, गया महाबल किधर निकल ।
काम वासनाओं की मारी, मेरी मारी गई अकल ॥ ९२ ॥
लगी झांकने अगल बगल सब, योद्धा लोटे अपने स्थान ।
कनकवती ने किया उपस्थित,तुरन्त दूसरा सबल प्रमाण ॥ ९३ ॥

देख लिया हो इसने आते, इसीलिए ये भड़क उठी ।
मानो बिना बादलो के ही, नभ मे बिजली कड़क उठी ॥ ७४ ॥

बाते सुनी हमारी इसने, इससे लगता है अनुमान ।
भूल हमारी हुई भयकर, हमने दिया न पहले ध्यान ॥ ७५ ॥

बोला कुवर इसी ने आते, काम-प्रार्थना की मुझसे ।
मैंने इसे ठगा पहले तो, मिलकर आने दो तुमसे ॥ ७६ ॥

इसने मार्ग बताया ऊपर, सीधा आया तेरे पास ।
ये पीछे पीछे आएगी, ऐसा नही हुआ अहसास ॥ ७७ ॥

लगता है आफत आयेगी, पर डरने की बात नही ।
डरता वही व्यक्ति जिसमे हो, आत्मिक बल औकात नही ॥ ७८ ॥

पश्चाताप कर रहे दोनो, इधर गई वह नृप के पास ।
आँखो देखा हाल सुनाया, दुहराया सारा इतिहास ॥ ७९ ॥

राजा आग बबूला होकर, चला पकडने उसे तुरन्त ।
स्वच्छन्दी बेटी का कर दू, उसके साथ वही पर अन्त ॥ ८० ॥

पकडो मारो, पकडो मारो कहते घेरा डाल दिया ।
सुभटो ने कर्त्तव्य स्वय का, आगे हो सभाल लिया ॥ ८१ ॥

शब्द पिता के सुने सुता ने, धीरज मन का टूट गया ।
प्रथम मिलन मे मृत्यु आ गई, भाग्य रूठ या फूट गया ॥ ८२ ॥

विषकन्या अथवा मैं पापिन, प्राणघातिनी प्यारे की ।
सारी गलती मेरी है क्या, गलती इस बेचारे की ॥ ८३ ॥

अपनी बात

मानव जीवन की प्राप्ति बहुत वडी उपलब्धि है पर जिस उद्देश्य के लिये यह मिलता है, उसे बहुत कम प्राणी ही सार्थक कर पाते है। जीवन मे अच्छी–बुरी, चाही–अनचाही घटनाऐं तो होनी ही है। घटना प्रधान जीवन में स्थिर दृष्टि अपनाकर जीवन का अमृत पान करना, कोई सामान्य वात नही है।

दर्द के पलो में जो बैचेन न होकर सहजता से उस प्याली को पी लेते है, उसी प्रकार आनद की सासे लेते समय उन्मत्त न होकर जो कृतज्ञ भावो से उसे स्वीकार कर लेते है, दोनो ही परिस्थितियो मे अप्रभावित रहकर स्व-बोध का दीया जला लेते है, वे व्यक्ति ही जीवन के रहस्य का पर्दा उठाकर अथाह आनद को वरण कर पाते हैं। वे अमर हो जाते हैं और उन्हें उनकी महानता के साथ सदियों तक याद किया जाता है।

महाबल-मलयासुन्दरी का कथानक स्थिरता, गम्भीरता, प्रतिकूलता मे भी चारित्र-निष्ठा-कर्म निष्ठा की अजस्र प्रेरणा देता है।

पादलिप्तपुर-शत्रुंजय महातीर्थ की परम पावनी भागीरथी छाया में मुझे याद है परम पूज्य गुरूदेव, प्रज्ञापुरूष, युगप्रभावक आचार्य देव श्री मज्जिन कान्तिसागर सूरीश्वरजी म. सा. की पावन निधा मे प्रवर्त्तिनी श्री सज्जन श्री जी म. की तीन शिष्याओं विदुषी साध्वी श्री शशिप्रभा श्री जी, प्रियदर्शना श्री जी, तत्त्वदर्शना श्री जी ने मासक्षमण की आराधना की थी। उस समय मेरा अध्ययन काल चल रहा था। मेरे मन में भी अट्ठाई करने का भाव जगा। तपस्या के इन दिनों में पूज्य गुरूदेव भगवंत ने आधा घटा कथानक पढ़ने का आदेश दिया। उस समय आचार्य जयतिलक सूरि विरचित मलयसुन्दरी चरित्रम् पढ़ा। साथ ही मोहनलाल धामी का लिखा भव बंधन भी पढ़ा।

उसको हार दिया कन्या ने, माना मन से वरमाला ।
हार कहाँ है यही पूछलो, वह न यहाँ मिलने वाला ॥ ९४ ॥

सुनकर हार हाथ मे लेकर, चपक माला दिखलाती ।
हार हार क्या चिल्लाती हो, हार नही मैं खा जाती ॥ ९५ ॥

झूठी पडी खडी है रानी, निंदा करते लोग सभी ।
जब उलटे दिनमान चले तब, उलटे पडे प्रयोग सभी ॥ ९६ ॥

कब कष्टो मे घिरे मरे कब, मलया वैरन है दुश्मन ।
कनकवती हट गई वहाँ से, आर्तरौद्र करती चिन्तन ॥ ९७ ॥

चपक माला बनी महाबल, गोली ली झोली मे डाल ।
आई आफत टली सहज मे, ऋषभ जिनेश्वर है रखवाल ॥ ९८ ॥

मिलने का सयोग मिला यह, अपना विधि अपने अनुकूल ।
भाग्य भरोसे रहना सीखो, कभी करो मत इसमे भूल ॥ ९९ ॥

मन का चाहा कभी न होता, होता है विधि का चाहा ।
कोई दुश्मन चाहे जितना, करता रहे भले हा हा ॥१००॥

कर आश्वस्त, विदा ले सत्वर, फुर-फुर करता गया निकल ।
नही किसी ने देखा जाते, जाते दिखता नही अनिल ॥१०१॥

पृथ्वी स्थान पुरी चल आया, अपने आदमियो के साथ ।
है अज्ञात सभी से लेकिन, मलय-महाबल वाली बात ॥१०२॥

पितृचरन मे प्रणाम पूर्वक, हार समर्पण है करता ।
मिला मित्रवर राजपुत्र से, झूठ बोलता है डरता ॥१०३॥

लक्ष्मी पुंज नाम है इसका, प्रभाव शाली मानो हार ।
नृप ने दिया महारानी को, उसने लिया गले में ड़ार ॥१०४॥

राजा रानी करे प्रशंसा, सुत का देखा कला कौशल ।
पल में मित्र बना लेता हैं लाता प्राभृत पुण्य प्रबल ॥१०५॥

वचन ब्याह का उसे दिया जो, उसका कैसे हो निरवाह ।
किससे मांगू ? कौन मुझे दे, मेरे हित में नेक सलाह ॥१०६॥

चन्द्रावती पुरी से आया, दूत एक लाया संदेश ।
रख उपहार झुका करके सिर, बोला फिर पाकर आदेश ॥१०७॥

वीरधवल राजा की पुत्री, मलय सुन्दरी जिसका नाम ।
उसका वहाँ स्वयंवर होगा, आमंत्रण माने अभिराम ॥१०८॥

कृष्णा चौदस जेठ मास की, एकादशीं हो गई आज ।
समय रह गया स्वल्प हाथ में,इसका कुछ भी नही इलाज ॥१०९॥

कभी चला था लेकिन पथ में, पड़ा अचानक मैं बीमार ।
आप कृपा कर वहाँ भेजिये, अपना प्यारा राजकुमार ॥११०॥

राजा ने आमंत्रण माना, भेजा उसको दे सत्कार ।
सत पुरुपों द्वारा निर्धारित, होता सामाजिक व्यवहार ॥१११॥

बैठे हुए वहीं महाबल ने, सोचा काम बना सारा ।
बल से वैभव से न बने वो, बने दैंव ! तेरे द्वारा ॥११२॥

चिन्ताभार चित्त से उतरा, मानस हुआ पूर्ण संतुष्ट ।
मलया मुझको मिल जायेगी, हुई धारणा ये परिपुष्ट ॥११३॥

दें आदेश पिताजी जाऊँ, मलया से फेरे खाऊँ।
आए अन्य कुमारो को मैं, अश्वस्व मे लटकाऊँ ॥११४॥
चिन्तन करते हुए पुत्र मे, राजा बोला तुम जाओ।
मिला स्वयवर का आमत्रण, करो विवाह वधू लाओ ॥११५॥
वीरधवल राजा न दूसरे, मेरे स्नेही मेरे मित्र।
स्वयवरे मे शामिल होना, कार्य उचित सपूर्ण पवित्र ॥११६॥
सेनापति से कहा साथ मे सेना को कर दो तैयार।
कहा नृपति ने बेटे! लेते, जाना प्रभावशाली हार ॥११७॥
भूत प्रेत या राक्षस वैरी, मुझे सताने आता है।
कभी शस्त्र आभरण कभी कुछ, वस्तु उठा ले जाता है ॥११८॥
रोता कभी-कभी वह, हँसता मुझे सुनाई देता है।
कारण है अज्ञात वैर किस, जन्मान्तर का लेता है ॥११९॥
माँ मे हार लिया या मैंने वो भी रात हुआ चोरी।
मुझे और माँ को दुख इसका, मानो मेरी कमजोरी ॥१२०॥
माँ का दुःख मिटाने उसके, सम्मुख ये खाई सौगध।
पाच दिनो मे हार न ला दू, अग्नि प्रवेश करू सानद ॥१२१॥
माँ बोली जो हार मिले ना, तो मैं भी मर जाऊँगी।
हार हार करती रहती मैं, मुह न किसे दिखलाऊँगी ॥१२२॥
मेरी ये तलवार खडी हो, पहरा आज लगायेगी।
भूत प्रेत राक्षस व्यतर की, क्रिया सामने आयेगी ॥१२३॥

दुष्टात्मा से हार सहित सब, वस्तु प्राप्त कर हुए प्रभात ।
मां को हार सौंप फिर पुर से, करूं प्रयाण यही प्रतिज्ञात ।।१२४।।

हां कह दिया नृपति ने मुंह से, खड़ा जागता राजकुमार ।
आधी रात गये आता हैं, वातायन से हस्ताकार ।।१२५।।

कंकण पहने हुए हाथ वह, घूम रहा हैं चारों-ओर ।
कुछ मिल जाए उसे उठाने, नजर घुमाये जैसे चोर ।।१२६।।

हाथ सिवा सब देह छिपा ली, दिव्य शक्ति की माया से ।
हाथ काटते ही भागेगी, नहीं दिखेगी काया से ।।१२७।।

हाथ पकड़कर चढ़ा उसी पर, चला हाथ उड़ता आकाश ।
ध्वजा समान धूजता जाए, बैठा लिए हुए विश्वास ।।१२८।।

हाथ थक गया लगी दीखने, सुरांगना सी देवी एक ।
झटके बहुत लगाने पर भी, नीचे गिरा न पाई देख ।।१२९।।

किसी समंदर में न ड़ाल दे, किसी शिखर पर दे ना डाल ।
अधिक क्रोध के समय देवता, भी न स्वयं को सके संभाल ।।१३०।।

मारा एक प्रहार मुस्टिका, लगते ही वह अरड़ाई ।
छोड़ मुझे कर कृपा, दीनता हाथ जोड़कर दिखलाई ।।१३१।।

किधर गई कुछ पता न पाया, दिखी न आंखों से जाती ।
गिरा कुमार अधर धरती पर, पुन्याई आड़ी आती ।।१३२।।

क्षण भर मूर्च्छित हुआ बाद में, लगा पवन हो गया सचेत ।
हाथ स्पर्श से जान लिया गिरि, जलधि नहीं रेतीला खेत ।।१३३।।

आधी रात अधेरा पूरा, जगल का यह शून्य प्रदेश।
जीव जानवर काट न खाये, तरु पर लू विश्राम विशेप ॥१३४॥

समीपवर्ती आम्र वृक्ष पर, चढ कर करने लगा विचार।
देवी ने यह दशा बनादी, कैसे मिल पायेगा हार ॥१३५॥

हार नही मिलने से माता, जीवित रह ना पायेगी।
मा के बाद पिताजी की भी वही स्थिति बन जायेगी ॥१३६॥

क्षण मे चिन्तन चक्र वदलता, है विधि! तेरा खेल खरा।
मारे और उवारे तू ही, कर दे सूखा खेत हरा ॥१३७॥

चाद निकल आने से, थोडा-थोडा होने लगा प्रकाश।
उसी पेड के नीचे अजगर, दिखा ले रहा मुश्किल सास ॥१३८॥

मुख से जीवित प्राणी कोई, आधा वाहर भीतर है।
तरु से लिपट इसे मारेगा, भारी लवा अजगर है ॥१३९॥

इसे उगारु इस अजगर से, तो मेरा सार्थक आना।
दया धर्म से वढकर कोई, धर्म न दुनिया ने माना ॥१४०॥

तरु को वीटे अजगर उससे, पहले उसको डाला चीर।
डरा न करते स्वय मृत्यु से, दया दिखाने वाले वीर ॥१४१॥

उसके मुख से मद चेतना, युवती वाहर निकल पडी।
इसीलिए मै पूछू तुम से, भैंस वडी या अकल वडी ॥१४२॥

शरण महाबल का मेरे को, वोल पडी वो मद स्वर।
विस्मित-नयन निहारे इसको, चीरा हुआ मरे अजगर ॥१४३॥

मलय सुन्दरी सी आकृति लख, सुन कर मुख से अपना नाम ।
हवा डालने लगा हाथ से, प्रभु को करता हुआ प्रणाम ॥१४४॥

मूर्च्छित बाला लगी बोलने, श्लोक वही आधा[1] आधा ।
सुना महाबल से सीखा जो, श्रद्धा बल देता ज्यादा ॥१४५॥

मलय सुन्दरी ही है ऐसा निश्चय हुआ महाबल का ।
आंखे खोली बोली बुद-बुद, घूट लिया शीतल जल का ॥१४६॥

मालिश करता हुआ महाबल कहता देख इधर मलये ।
मेरा मन आकुल व्याकुल है, अपनी उठा नजर मलये ॥१४७॥

पवन स्पर्श से प्रेम स्पर्श से, पावन चेतनता पाई ।
पति को सेवा करते देखा, मलय सुंदरी शरमाई ॥१४८॥

जीवित कैसे रही यहां पर, आई कैसे पता नहीं ।
संगम हुआ आपका कैसे, पाता कोई पता नहीं ॥१४९॥

कहा महाबल ने उठ मलये ! तन प्रक्षालन कर जल से ।
पीछे बात करेंगे सारी, नभ मंडल तक ले स्थल से ॥१५०॥

नदी किनारे जा न्हा आई, बैठे दोनों तरू के पास ।
कुमार ने अब सुना दिया है उपर्युक्त सारा इतिहास ॥१५१॥

सिर धुनती धुनती दुख गाथा, सुनती रही लगाकर ध्यान ।
धन्य धन्य हो आप धन्य हो, रक्षक ऋषभनाथ भगवान ॥१५२॥

---

१. "विधते यद् विधिस्यतत्स्यात्, न स्यात् हृदयचिन्तितम्"

मैने मेरी कथा सुनाई, अब तू तेरी सुना कथा।
कथा स्वय की सिवा स्वय के, कौन सुनाये यथा-तथा ॥१५३॥

हृदय वज्र सम, श्रवन वज्र सम, करके सुनिए कथा सकल।
अपनी अपनी अलग कहानी, नही किसी की कही नकल ॥१५४॥

इस अजगर ने कैसे निगली, इसका मुझे नही है ज्ञान।
वाकी का वृतात सुनाऊँ, सुनो ध्यान पूर्वक धीमान ॥१५५॥

इतने मे लग रहा कुवर को, यहा हो रहा नर सचार।
चारो मे से कोई होगा, हिंसक, चोर, जुआरी, जार ॥१५६॥

अथवा इस कन्या से परिचित, इसे देख कर मेरे पास।
असमजस मे मुझे डाल दे, अनजाने का क्या विश्वास ॥१५७॥

ऐसे सोच केश वन्धन से, गोली लेकर अपने हाथ।
घिसी आमरस से मलया के तिलक लगा कर वोला वात ॥१५८॥

स्त्री से पुरुप वनी वह मलया, चमत्कार गोली का स्पष्ट।
पुरुप वेश मे किसी देश मे किसी तरह का कही न कष्ट ॥१५९॥

तू मत डरना तुझे नही भय, होगा तो मै वारू गा।
विगडी हुई वात को भी मै अच्छी तरह सवारू गा ॥१६०॥

जल्दी-जल्दी आते देखा नारी को इस जगल मे।
मीठे स्वर से कहा कुवर ने आप अकेली इस स्थल मे ॥१६१॥

काप रही हो किसके भय से ?, निर्भय-होकर वतलाओ।
हम से डरने की न जरूरत, हम पूछे तुम फरमाओ ॥१६२॥

यहां कौन सा शहर वहां पर, शासन है किस नरवर का ।
हम अनजान विदेशी को, विश्वास तुम्हारे उत्तर का ॥१६३॥

रात हो गई चलते-चलते, थके हुए थे रूके यहां ।
समाधान कर इन प्रश्नों का जाओ जाना तुम्हें जहां ॥१६४॥

कुमार के मीठे वचनों पर, कर विश्वास लिया इसने ।
राजमहल की घटना पर से, पर्दाफाश किया इसने ॥१६५॥

चन्द्रावती नाम की नगरी, अधिक यहां से दूर नहीं ।
वीरधवल नृप राज्य करे, अन्याय उसे मजूर नहीं ॥१६६॥

सुन कर सोचे कुंवर महाबल, पड़ता पड़ता कहाँ पड़ा ।
जहां पिताश्री ने भेजा था, उड़ता आया यहाँ पड़ा ॥१६७॥

मलया मिली अचानक उसके, बचा लिए अजगर से प्राण ।
इसीलिए लगता है मेरा, दिन है ऊँचा यही प्रमाण ॥१६८॥

भद्रे ! कहो हुआ क्या आगे, नृप की कन्या मलया एक ।
रखा स्वयवर, आमंत्रण पा, आए राजकुमार अनेक ॥१६९॥

गिनो आज से दिवस तीसरा, ज्येष्ठ मास तिथि चौदस है ।
किन्तु जगत के जीव मात्र सब, स्ववश नहीं वे परवश है ॥१७०॥

मलया की सौतेली माता, कनकवती अपरा रानी ।
उसकी दासी हूँ मैं सोमा, महलों में जाती मानी ॥१७१॥

गुप्त रहस्य जानने वाली, करने वाली सारा काम ।
काम करेगा वो मानेगा, "काम राम" आराम हराम ॥१७२॥

कनकवती नित छिद्र देखती, रखती मलया से मन द्वेष ।
सौतेली माँ का होता है, लगभग ऐसा ही परिवेश ॥१७३॥

वहुत रात जाने पर मेरे, होते हुए गले मे आ ।
लक्ष्मीपुज हार आ कर के, गिरा हँसी रानी आ हा ॥१७४॥

हार कहा से गिरा गले मे, प्रश्न बीच मे करे कुमार ।
नभ से गिरा गिराने वाले, का न दिखा कोई आकार ॥१७५॥

उसी व्यतरी के हाथो ने, हार वहाँ पर डाला है ।
जिसके लिए महा कष्टो से, पडा अचानक पाला है ॥१७६॥

पता स्वय मिल गया हार का, यह भी एक सुखद सयोग ।
खोज हार की करने पडते, कितने ही कुछ नये प्रयोग ॥१७७॥

प्रण पूरा हो जायेगा अब, नही मरेगे मात-पिता ।
आगे वात वता जो बीती, रुक रुक कर मत समय बिता ॥१७८॥

हार प्राप्त कर विस्मित होकर, मेरे से वोली ऐसे ।
नही किसी के होने पर भी, गिरा हार उर पर कैसे ॥१७९॥

है क्या कोई देख दिखे तो, देखा दोनो ने मिलकर ।
कोई नही दिखा तव वोली, हँसी जोर से खिल खिलकर ॥१८०॥

हार लाभ की वात कही पर, मोमा ! प्रगट नही करना ।
वरना तेरा मेरा होगा, एक साथ मे ही मरना ॥१८१॥

मुझे साथ ले कनकवती अब, पहुँच गई राजा के पास ।
समय माग एकान्त भवन मे, करने लगी विनय अरदास ॥१८२॥

पृथ्वीस्थल पुरी का स्वामी, सूरजपाल भूपाल भला।
पुत्र महाबल रूप कला निधि, सुख वैभव के साथ पला ।।१८३।।

उसका कोई निजी आदमी, आता अपने घर प्रच्छन्न।
सुता आपकी मलया उससे, रहती दिखती बहुत प्रसन्न ।।१८४।।

लक्ष्मीपुंज हार भेजा है, उसके हाथों अभी अभी।
कहलाया संदेश साथ में, अवसर मिलता कभी कभी ।।१८५।।

सेना लेकर आना सारे, राजा देंगे साथ यहाँ।
राज्य छीनना मुझे ब्याहना, पक्की है सब बात यहां ।।१८६।।

मलया बेटी बहुत सरल है, पर इस चक्कर में आई।
भाई-भर्ता-पिता आदि ने, चोट स्त्रियों से ही खाई ।।१८७।।

जो जाना सो किया निवेदन, होने वाला बड़ा अनर्थ।
कार्य घटित हो जाने पर फिर, रोना-धोना सारा व्यर्थ ।।१८८।।

मांगो हार अभी मलया से, अगर नहीं मेरा विश्वास।
सुनकर होने लगा उसी क्षण, नृप का ऊँचा नीचा सांस ।।१८९।।

उसी समय बेटी को बुलवा, मांग लिया भूपति ने हार।
मौन रही क्षणवार कहा फिर, चोरी गया हार सरकार ।।१९०।।

कनकवती की कही हुई सब, बातें हुई सिद्ध स्वयमेव।
गुस्सा आना स्वाभाविक है, नर हो चाहे कोई देव ।।१९१।।

कुपित नृपति ने कहा सुता से, मुंह न बताना मेरे को।
जींवित नहीं देखना रखना, इन महलों में तेरे को ।।१९२।।

जननी भी सतुष्ट नही है, पुत्री के इस उत्तर मे ।
नेत्र लाल विकराल वेन से, धग धग अगारे वरसे ॥१६३॥

पुत्री सोचे पछताए, है - मेरा कुछ अपराध नही ।
माता-पिता हुए हो गुस्से, मुझको आता याद नही ॥१६४॥

राजा वोला हार महावल, को देकर फिर वोले झूठ ।
मुझे मार डालेगो लेगी, मेरे सिंहासन को लूट ॥१६५॥

पुत्री मिप से प्रगट वैरिणी, इसे मारना हितकर है ।
अच्छी तरह ले लिया निर्णय, लेकिन भूल भयकर है ॥१६६॥

रात वडी मुश्किल से वीती, प्रात हुआ हुआ आदेश ।
मलया को मारा जाए मत, पूछा जाए मुझे विशेष ॥१६७॥

सुनकर सचिव सुबुद्धि शुद्धि हित, राजा से वोला नरनाथ ।
मलया वेटी नही रही क्या ?, हुई आज यह कैसी वात ॥१६८॥

कहाँ गया वह स्नेह आपका, इसका ऐसा क्या अपराध ।
माफ कर दिया जाता है, अपराध हो गया हो एकाध ॥१६९॥

विना विचारे किए कार्य का, पीछे होता पश्चाताप ।
पुनर्विचार कीजिए राजन् ! मुझको माफ करे प्रभु आप ॥२००॥

कनकवती से सुना हुआ सव, सुना दिया है हाल तुरन्त ।
मत्री मौन वना वेचारा, रुका नही मलया का अन्त ॥२०१॥

कोतवाल नृप की आज्ञा से, मलया मे जाकर वोला ।
आज्ञा मिली मार देने की, मै नृप का चाकर भोला ॥२०२॥

रोती रोती मलया कहती– सब का स्नेह हो गया लुप्त ।
किसने कान भरे राजा के, मेरे लिए गुप्त ही गुप्त ॥२०३॥

भूमि विवर दे मुझे समाऊँ, होऊँ निर्वृत इस दुख से ।
अथवा जाकर पितृ चरण में, करूं निवेदन इस दुख से ॥२०४॥

वेगवती को बुला कहा- जा, राजा से करना अरदास ।
उसका जो अपराध हुआ हो, उस पर डाला जाय प्रकाश ॥२०५॥

यदि न कहे तो कहना मेरा, अंतिम नमन करें स्वीकार ।
कनकवती माता से कहना, दें अशीष और दें प्यार ॥२०६॥

वेगवती के कहने पर नृप, उस पर बरस पड़ा तत्काल ।
नमस्कार उसका न चाहिए, देखा नारी चरित कमाल ॥२०७॥

वेगवती बोली गोला के, तट पर है कुआँ पाताल ।
उसमें झंपा ले लेगी वो, खा जाएगा काल कराल ॥२०८॥

प्रत्युत्तर मिलने से पहले, आई बात कही सारी ।
मन को कठिन बना करके, अब मलया निकली बेचारी ॥२०९॥

कई साथ में राजपुरुष हैं, और नगर के नर नारी ।
आज्ञा आज्ञा ही होती है जिसमें है ये सरकारी ॥२१०॥

सखियां जार-जार रोती हैं, होती हैं दिलगीर बड़ी ।
जीव मात्र के पांवों में है, कर्मों की जंजीर पड़ी ॥२११॥

पहुच कुए के पास खड़ी हो, गिने पांच नवकार परम ।
मलया कूद पड़ी कूएं में, सहम गए सब सुन धम-धम ॥२१२॥

और यह कथा मेरे मन मस्तिष्क में बैठ गई। मैं इन दोनो से बहुत प्रभावित हुआ। मलयसुन्दरी न केवल सौन्दय स्वामिनी नारी थी, वह उतनी ही वीरत्व और शौय से भरी थी।

महाबल न केवल क्षात्र तेज म पूण था, वह कत्तव्यो के प्रति सावधान एक कोमल हृदय वाला सवेदनशील पुरुष भी था।

दोनो के मन मे बसी जैन दशन के प्रति पूण निष्ठा ने ही मुझे इस कथानक को लिखने की प्रेरणा दी।

जोधपुर वर्षावास के दौरान मैंने इस कथानक को पद्य बद्ध करना प्रारम्भ किया था। अन्य व्यस्त गतिविधियो के कारण इच्छित समय तो नही दे सका तथापि इसके तीन खण्ड वही पूरे हो गय।

जोधपुर चातुर्मास के पश्चात् नागौर मे पूज्य गुरुदेव आचाय भगवन्त की तृतीय पुण्यतिथि मनाकर बीकानेर जाना हुआ। जहा साध्वी श्री हेमप्रभा श्री जी की प्रेरणा से उपधान तप का भव्य आयोजन हुआ। वही इसे पूण किया।

पूज्य गुरुदेव आचाय भगवन्त की परोक्ष-अजस्र कृपा से ही यह लेखन सभव हो सका है।

मेरे प्रिय बधु मुक्तिप्रभ के सहयोग व समपण के कारण ही मैं सजन-यात्रा मे अपने कदम रख सका हूँ।

प्रवर्त्तिनी वर्या स्व श्री सज्जन श्री जी म ने इसे आद्योपात पढा व आवश्यक सुझाव प्रदान किये।

बहिन साध्वी विद्युत्प्रभा के प्रबल आग्रह के कारण ही व्यस्तता मे भी मैं कलम चला सका हूँ।

विद्वद्वर नेमीचन्दजी पुगलिया ने भी इसके सम्पादन के काय मे महत्वपूण योगदान दिया है।

वसन्त पचमी वि स २०४६ —मणिप्रभसागर

जयपुर।

मार दिया, ठग लिया मुझे यों, कहते मूच्छित हुए वहीं ।
एकत्रित हो गए सभी क्या, हुआ किसी को पता नहीं ॥२२३॥

शीतल पवन सलिल शीतल का, लागू पड़ा तुरत उपचार ।
होश-हवास दुरुस्त हुए हैं, मचा हुआ है हा-हाकार ॥२२४॥

देख मृत्यु डर थर थर करती, बारी से कूदी रानी ।
मैं भी उसके पीछे कूदी, भला बुरा जानें ज्ञानी ॥२२५॥

किसी शून्य गृह में हम दोनों, छिपी बचाने अपनी जान ।
कोई आए बोले कोई, दोनों सुनें लगाकर कान ॥२२६॥

हल्ला गुल्ला सुनकर रानी, चंपक माला चल आई ।
आंसू ढलकाते मंत्री ने, सारी बातें समझाई ॥२२७॥

राजा रोता रानी रोती, दोनों बने अधीर महान् ।
कहा सचिव ने अभी संभालो, उस पाताल कुए का स्थान ॥२२८॥

जो जीवित मिल जाए कन्या, मानो अपना भाग्य भला ।
गये वहां भीतर नर उतरे, पता सुता का नहीं चला ॥२२९॥

आए वापिस महलों में तो, कनकवती भी भाग गई ।
उसका महल लुटाया जो कुछ, रानी पीछे त्याग गई ॥२३०॥

अब विरहा कुल वीरधवल नृप, जीवेंगे दो चार पहर ।
चिता प्रवेश करेंगे निश्चित, पक्की मेरे पास खबर ॥२३१॥

राजपुरुष अब हम दोनों का, पता लगाते इधर उधर ।
रानी बोली सोमा आफत, उतर पड़ी अपने ऊपर ॥२३२॥

लौटे लोग घरो को सारे, पुर मे छाया शोक विशेप ।
केवल वे खुश हुए जिन्हे था, मलय सुन्दरी से मन द्वेप ॥२१३॥

राजा हर्षित हुआ बच गया, मरने से मेरा परिवार ।
नही स्वयवर होगा कष्ट न, करे आप श्रीमान् पधार ॥२१४॥

हुआ अचानक रोग रोग का, भोग बनी मलया सुन्दर ।
कारण स्पष्ट समझ लेगे, सब आयेगे न स्वयवर पर ॥२१५॥

उपकारिणी महारानी से मिलू, सुनू जानू सब हाल ।
साथ सुबुद्धि सचिव को लेकर, आते स्वय वही भूपाल ॥२१६॥

द्वार बन्द रानी का देखा, छिद्रो से दिखता उद्योत ।
खडे खडे ही लगे देखने, इस कपडे का कैसा पोत ॥२१७॥

रानी कर शृ गार यथोचित, नाच रही है लेकर हार ।
तेरे पुण्य प्रताप आज ये, मैने बाजी ली है मार ॥२१८॥

तुझे छुपा नृप को भरमाकर, मलया को मरवा डाला ।
तू चिन्तामणि कल्प वृक्ष तू, मन ईप्सित देने वाला ॥२१९॥

बात श्रवण कर हार देखकर, बहुत दुखी नरनाथ हुआ ।
हाय उपाय नही कोई यह, धोखा मेरे साथ हुआ ॥२२०॥

दिया महाबल को बतलाती, स्वय छिपा बैठी जो हार ।
मारी गयी सुता वो मेरी, बडी विचित्र कर्म की मार ॥२२१॥

उसी जगह दोनो हाथो से, लगे तोडने द्वारो को ।
रोने लगे सुनाई दे ज्यो, सारे पहरेदारो को ॥२२२॥

आंख उठा देखा अजगर को, मलया कांप उठी तत्काल ।
कौन उसे मारे हो जिसके, श्री गोपाल स्वयं रखवाल ॥२४३॥

हाथ मुंह धोकर दोनों ने, खाये पके पके ले आम ।
भट्टारिका सुरी के मंदिर, चल पहुचे कर लिया प्रणाम ॥२४४॥

काष्ट फलक दो खड़े वहां पर, जिसमें से निकली रानी ।
उसमें पोल निरखकर भावी, नयी योजना अनुमानी ॥२४५॥

कहा मलय से अब करने हैं, मुझको तीन काम तत्काल ।
राजा को सकुटुंब बचाना, मरे नहीं वे मौत अकाल ॥२४६॥

मातृ-पितृ-दत्ता तेरे से करूं, विवाह दूसरा काम ।
लक्ष्मी पुंज हार दूं मां को, काम तीसरे का ये नाम ॥२४७॥

सहायता कर तू इसमें अब, जाना उस वेश्या के घर ।
कनकवती पर और हार पर, रखना अपनी तीक्ष्ण नजर ॥२४८।

मैं जा रोकूं वीरधवल को, करे नहीं वे अग्नि प्रवेश ।
इसके लिए करूंगा कोई, अपना वुद्धि प्रयोग विशेष ॥२४९॥

ये तेरी नामांकित मुद्रा, दे दे मुझे निकाल अभी ।
मुद्रा चोर मानकर कोई, पकड़ नहीं ले तुझे कभी ॥२५०॥

अंगूठी ले केश पाश में, छिपा रखी है अपने पास ।
आज रात भर रहना मलये ! तुझे पण्य-स्त्री के आवास ॥२५१॥

लक्ष्मी पूंज हार पाने का, मलये होगा तेरा काम ।
बाकी दोनों मेरे होंगे, कल फिर कहना हाल तमाम ॥२५२॥

एक स्थान पर हम दोनो का, रहना उचित नही बिल्कुल ।
पकडी जायें मारी जाये, भेद कही जो जाये खुल ॥२३३॥

हार मार सब साथ लिए वह, वेश्या के घर चली गई ।
रही अकेली मै अब पीछे, मन ने माना भली भई ॥२३४॥

मेरी नही सहेली कोई, कौन रखे आफत ले मोल ।
आज नही कल अवश्य खुलेगी, ज्यादा नही चलेगी पोल ॥२३५॥

पुर मे नही शरण लेने को, वन मे इधर निकल आई ।
दयालुओ के सम्मुख सारी, वातें स्पष्ट सुना पाई ॥२३६॥

परदेशी हो आप आप से, पूछे तो न बताना नाम ।
भला करे भगवान आपको, शत शत सविनय करू प्रणाम ॥२३७॥

सोमा बोली पीछे कोई, अभी ढूढने आयेंगे ।
ले जायेगे पकड मुझे जो, खडी यहा पर पायेंगे ॥२३८॥

ऐसे कहकर खिसकी सोमा, इनने डाली स्नेह नजर ।
बहुत मसाला मिला बात से, यही दैव की बडी महर ॥२३९॥

बडे कलेजे वाली है तू, तूने इतने कष्ट सहे ।
कनकवती की दासी सोमा, ने आकर सब स्पष्ट कहे ॥२४०॥

कुएँ मे गिरते ही निगला, होगा तुझको अजगर ने ।
निकला किसी मार्ग से होकर तुझको तुरत हजम करने ॥२४१॥

आम तने से लिपट मारता, मैने उनको डाला चीर ।
मिली उसी के मुख से मुझको, अपनी ऊची है तकदीर ॥२४२॥

कभी एक, दो, तीन, चार, कुछ टुकड़े निकले हमें मिले ।
मिल जायेगी पूरी साँकल, किया परिश्रम सकल फले ।।२६३।।
राजकुमारी की अंगूठी, केशपाश से कर बाहर ।
उठा घास का पूला छाने, वो डाली उसके अन्दर ।।२६४।।
हाथी को वो खिला दिया है, उन सब लोगों से छाने ।
आया कौन कर गया वो क्या, कौन ध्यान दे पहचाने ।।२६५।।
आगे चला कुमार नदी के, तट पर कोलाहल भारी ।
उठता धुंआ चिता जलती है, खड़े हजारों नर नारी ।।२६६।।
ऊँचे हाथ उठा ये दौड़ा, चिल्लाता मुख से ऐसे ।
मरने का दुस्साहस मन से, करने भला लगे कैसे ।।२६७।।
"राजसुता मलया जीवित है" मानो मेरी बात सही ।
सुन ये वचन लोग कुछ भागे, कहते कहदो सही सही ।।२६८।।
आए नृप को आप बतायें, वारें लवण आप पर हम ।
जीवित राजसुता के दर्शन, कर पायेगे हम उत्तम ।।२६९।।
नैमित्तिक बोला लोगों से, पहले चिता बुझाई जाय ।
फिर सब बैठो सुनो शांति से राजा, रानी, जन समुदाय ।।२७०।।
ला पानी डाला ज्वाला पर, बचा लिए राजा के प्रान ।
प्रान डालने और बचाने वाला एक तरह भगवान ।।२७१।।
अब सब शांतमना होकर के, बैठे नैमित्तिक के पास ।
भूत भविष्य बताये उस पर हर नर कर लेता विश्वास ।।२७२।।

इस मदिर मे साध्य काल मे, दोनो यही मिलेगे हम ।
सावधान वन चलना मलये !, थकना नही उठाना श्रम ॥२५३॥
करे नही सदेह देह पर, पुरुप वेश मे नारी का ।
चलने श्रीर देखने मे है, काम बडी हुशियारी का ॥२५४॥
इसे सिखाकर कहकर ऐसे, दोनो अलग पडे तत्काल ।
कथा कहा से कहा मुड गई-श्रोता सुनते रहे सभाल ॥२५५॥
बल से काम नही होता वो, मतिबल से होता है सिद्ध ।
सोचे कुवर महाबल ऐसे, लोक कहावत लोक प्रसिद्ध ॥२५६॥
आयेगे आमत्रित होकर, राजा राजकुमार अनेक ।
मुझे प्रविष्ट न होने देगे, ऐसे पथिक वेश मे देख ॥२५७॥
चाहे बैठे हुए सभी हो, पुत्री मुझे स्वय दे भूप ।
मुझे बनाना उचित रहेगा, अपना ऐसा अद्भुत रूप ॥२५८॥
नैमित्तिक बन सिद्ध ज्योतिषी, अपना नाम प्रसिद्ध रखा ।
होने लगा प्रविष्ट नगर मे, इचरज सम्मुख एक दिखा ॥२५९॥
हाथी की ले लीद छानते, हुए लाग चढ गए नजर ,
इसने पूछा ये क्यो करते, दिया एक नर ने उत्तर ॥२६०॥
राजपुत्र कल स्वणसूत्र ले, इक्षुदड के साथ लपेट ।
गजमुख सम्मुख रखा खा गया, समझा आई सुन्दर भेट ॥२६१॥
महावतो ने कहा कठिन है, निकालना उसको बाहर ।
छान रहे हम लीद भूप का, अध्यादेश अभी पाकर ॥२६२॥

बाण चढ़ा कर स्तंभ भेदने, वाला उसका वर होगा ।
मैं कहता हूँ बड़ा हिम्मती, बड़ा किस्मती नर होगा ।।२८३।।
फर्क पड़े जो इन बातों में, तो दे देना दण्ड मुझे ।
मुझे ज्ञान पर गर्व असीमित, किंचित नहीं घमण्ड मुझे ।।२८४।।
पड़ा प्रभाव सभी के मन पर, इसी ढंग से बात कही ।
दूर स्वयंवर नहीं कही कल, परसों तक की बात रही ।।२८५।।
सुन लोगों ने लगा दिए ला, गहनों कपड़ों वाला ढेर ।
तुच्छ भेट स्वीकार करे प्रभु !, करे न शुभ कार्यों में देर ।।२८६।।
आप इसे उपकार मानते, मैं बदले में ग्रहण करूं ।
किए हुए उपकार सार का, गुण-गुण क्यों अपहरण करूं ।।२८७।।
बोले भूप स्तंभ का पूजन, आप कीजियेगा भगवन् ।
नहीं जाइयेगा सुनियेगा, तब तक रहियेगा भगवन् ।।२८८।।
वीरधवल राजा की आज्ञा, नैमित्तिक ने की स्वीकार ।
छद्म छिपाने नर के मुख पर, हंसी न आए नेत्र विकार ।।२८९।।
थोडी देर बाद नृप पूछे, यह भी आप बतायेंगी ।
मलय सुन्दरी ले वरमाला, कहो किसे पहनायेगी ।।२९०।।
पृथ्वीस्थान पुरी का स्वामी, पुत्र महाबल राजकुमार ।
मलया को परणेगा निश्चित, कहता सिद्धशास्त्र अनुसार ।।२९१।।
काल-निवेदन करने वाला, बदीजन बोला तत्काल ।
सबके माथे पर है सूरज, और आपका तेज विशाल ।।२९२।।

ज्योतिष् चक्षु मानते लेकिन, जिसको होवे इसका ज्ञान।
उसे मान सम्मान दीजिए, वह इस कलियुग मे भगवान ॥२७३॥

यत्र मत्र झाडो फूंको पर, लोगो का विश्वास घटा।
क्योकि ठगो ने इस दुनिया को समझाया सीधा उलटा ॥२७४॥

अंध कूप मे गिर कर भी वह, राजकुमारी मरी नही।
मेरा ज्ञान सही है राजन्!, व्यर्थ पढाई करी नही ॥२७५॥

राजा बोला उसी कूप मे, करवा चुका तलाश कभी।
मुझे न मरने से रोको यो, दे झूठा विश्वास अभी ॥२७६॥

सिद्ध ज्योतिषी बोला सुनिये, बारस की तिथि आज भली।
चतुर्दशी को करो स्वयवर, लिखी विधाता से न टली ॥२७७॥

भरा स्वयवर मण्डप होगा, सुन्दर राजकुमारो से।
तब मध्याह्न समय मे दर्शन, देगी सज शृगारो से ॥२७८॥

राजकुमारी को न रोकिए, आप यहा पर आने से।
मानोगे ये बात आप अब, एक प्रमाण बताने से ॥२७९॥

नामाकित अगूठी उसकी, कल तुमको मिल जायेगी।
चौदस के दिन आ कुल देवी, चमत्कार बतलायेगी ॥२८०॥

विविध रगो से चित्रित थभा, जो लम्बा छह हाथ प्रमाण।
पूर्व द्वार पर रख जायेगी, ऐसा कहता मेरा ज्ञान ॥२८१॥

उसे स्वयवर मण्डप मे ला, पूजन कर स्थापित करना।
धनुष बाण जो वज्र सार है, पूजित सस्तुत कर धरना ॥२८२॥

भूमिका

धर्म और साहित्य का गहरा संबध है। धर्म आत्मा का स्वभाव है और साहित्य स्वभाव की सहज अनुभूत अभिव्यक्ति। धर्म द्वारा जीवन-व्यवहार में उन गुणो को धारण किया जाता है, साहित्य में उन गुणों को विविध घात–प्रतिघातो, सघर्षो और अन्तर्द्वन्द्वो मे निखार कर रसात्मक स्थिति तक पहुंचाया जाता है। इस रसदशा में वे गुण व्यक्ति विशेष के न रह कर सर्वग्राही और लोकमंगलवाही बन जाते है। साहित्य की इसी भूमिका पर जैन साहित्य खडा है।

जैन साहित्य जीवन-शुद्धि, व्यवहार-शुद्धि, विकार-विजय, सामाजिक स्वस्थता और पराक्रम–पुरुषार्थ का साहित्य है। प्रकृति के विधान को अभि–व्यक्ति देता हुआ यह साहित्य तप और सयम के बल पर परमात्म शक्ति से साक्षात्कार कराता है। शास्त्रीय चिन्तन पर आरूढ़ होकर भी यह साहित्य लोकानुभव से समृद्ध होता चलता है। इसमें भाग्य पर भरोसा है, पर पुरुषार्थ का सबल लेकर! कर्म का चिन्तन है, पर विवेक का प्रकाश लेकर।

जैन साहित्य जीवन की विविध और व्यापक प्रवृत्तियो को स्पर्श करता है। इसमे शास्त्रीयता है, पर स्वतत्रभाव से जुडकर! लौकिकता है, पर आध्या–त्मिकता मे पक कर! जीवन-सघर्ष है, पर लोक-मगल के लिए।

जैन साहित्य का उत्स वीतराग वाणी है। इस वाणी को लोकभोग्य बनाने की दृष्टि से विभिन्न आचार्यो, मुनियों, साधकों, विद्वानो और कवियों ने साहित्य की विविध विधाओ, काव्य रूपो, शैलियो और लोक साहित्य की विविध रंगतों मे अभिव्यक्ति दी है। तत्त्व चिन्तन का रहस्य रसमय बन कर जन-जन तक

पधारिये राजन्! महलो मे, सविनय कहे सचिव मुख से ।
भोजनादि के विना न जीवन, जीया जा सकता सुख से॥२९३॥

नैमित्तिक के साथ नाथ अब, राजभवन चल कर आये ।
स्नान अशन कर शयन सकथन सुख से समय विता पाये ॥२९४॥

प्रात होते ही वे आये, लीद छानने वाले लोग ।
मिली अगूठी आज लीद मे, विधि का एक वडा सयोग ॥२९५॥

नाम सुता का देख अचभित, झाके नैमित्तिक की ओर ।
ज्ञान दृष्ट होवे न अन्यथा, पर पहुची कैसे इस ठोर ॥२९६॥

सिद्ध ज्योतिषी बोला लगता, कुल देवी का इसमे हाथ ।
समझानी पडती पडित को, जैसे तैसे सारी वात ॥२९७॥

एक वात हो गई प्रमाणित, नृत के मन विश्वास हुआ ।
उषा हुई तो होने वाला, मानो सूर्य प्रकाश हुआ ॥२९८॥

करे स्वयवर की तैयारी, द्विगुणित मन उत्साह जगा ।
होगा या होगा न पता क्या, सशय भरा विवाह लगा ॥२९९॥

कन्या नही मिली तो होगा, क्या उन आने वालो का ।
मूड खराव नही हो मन के, लड्डू खाने वालो का ॥३००॥

अभी पता क्या चले चलेगा, पता वाद मे ही सारा ।
दिया अतिथियो को जाता है, स्थान मान भूपति द्वारा ॥३०१॥

सिद्ध ज्योतिषी कहे भूप से पडा अधूरा साधित मत्र ।
उसे आज पूरा करने के लिए मुझे प्रभु! करदे स्वतन्त्र ॥३०२॥

आज नहीं फिर कभी न साधा, जायेगा ये मंत्र महान ।
आ जावूगा वापिस मानो, मेरा वचन राम का बाण ॥३०३॥

नृप बोला जो द्रव्य चाहिये, ले जाओ मत करो विलंब ।
कूड-मूड़ सामग्री लेकर, चला महाबल भुजा-प्रलंब ॥३०४॥

प्रातः पुर के द्वार खुले इत, नैमित्तिक आ गया इधर ।
मंत्र सिद्ध कर आये सुख से, पूछ रहे प्रेमी नरवर ॥३०५॥

कुछ तो सिद्ध हो गया कुछ कुछ, रहा साधना वो बाकी ।
आने का आदेश आपका, मान उतावल मन राखी ॥३०६॥

स्तंभार्चन विधि कर हाथों से, पुनः चला जाऊंगा मैं -
रहा अधूरा पूरा करके, ऋद्धिसिद्धि पाऊंगा मैं ॥३०७॥

अपना छोड़ अधूरा पूरा, करते सदा पराया काम ।
परोपकारी पुरुषों का ही, पृथ्वी पर रहता है नाम ॥३०८॥

दरवाजे पर जिसे देखने, भेजा था वो नर आया ।
स्तंभ रंग से रंगा रंगाया, द्वार पास में हो पाया ॥३०९॥

सुन कर नरपति करे प्रशंसा, उस उत्तम ज्ञानी नर की ।
ज्ञानी पुरुषों पर होती है, महर नजर प्ररमेश्वर की ॥३१०॥

जो आया ले उसे साथ में, आया वहां स्वयं भूपाल ।
नैमित्तिक को लगा दिखाने रंगा रंगाया स्तंभ विशाल ॥३११॥

नैमित्तिक ने कहा इसे मत, छूना नहीं लगाना हाथ ।
कुपित बनेगी कुल की देवी, सुनो ध्यान से मेरी बात ॥३१२॥

पद्मासन से बैठ स्वय ने पूजन सविधि किया प्रारभ ।
ॐ ह्री ॐ ह्री बोल बोलता, जैसे जागृत होवे स्तभ ॥३१३॥
डेढ पहर तक चला कार्यक्रम, सज्जित पुरुष बुलाये चार ।
उन से उठवा स्तभ शहर मे, ले आए करके सत्कार ॥३१४॥
जय जय बोल रहे वन्दीजन, नृत्य और सगीत चले ।
रखा स्वयवर मडप मे ला, चकित हो रहे भले भले ॥३१५॥
छह कर लम्बी शिला मगाकर, गढवा कर दी उसे खडी ।
उसका दे आधार स्तभ को, खडा कर दिया उसी घडी ॥३१६॥
पश्चिम दिशि मे वज्रसार धनु, बाण सहित रखवाया है ।
दक्षिण उत्तर मे सिंहासन, रखने का फरमाया है ॥३१७॥
नृत्य दिखाने को नर्तकियाँ, लगी मिलाने लय से ताल ।
अपनी अपनी विद्याओ का, अपना अपना एक कमाल ॥३१८॥
धनुष-बाण का पूजन करके, नैमित्तिक ने कहा तुरन्त ।
राजकुमारो को बुलवावो, समय महत्वपूर्ण अत्यन्त ॥३१९॥
निर्धारित आसन पर बैठे, आमन्त्रित नृप राजकुमार ।
अपने योग्य पदानुसार सब, हुआ उपस्थित नृप-परिवार ॥३२०॥
सिद्ध ज्योतिषी इतने मे ही, गायब हुआ निरख अवसर ।
इधर उधर ढुढवाया नृप ने, लेकिन आया नहीं नजर ॥३२१॥
नृप ने जाना मत्र अधूरा, पूरा करने गया कहीं ।
उसका अभी स्वयवर मे था, आवश्यक कुछ काम नहीं ॥३२२॥

नृप सोचे सब बात मिल गई, एक बात ही नहीं मिली ।
इसे महाबल ब्याहेगा यह, कली भली क्यों नहीं खिली ॥३२३॥

आमंत्रण दे दिया उसे था, कारण क्या जो आ न सका ।
अपने मनकी इस उलझन को, वसुधापति सुलझा न सका ॥३२४॥

इधर स्वयंवर मंडप में स्थित, करे परस्पर वार्तालाप ।
राजसुता तो नहीं जीविता, किसे ब्याहने आए आप ॥३२५॥

हमें बुलाकर मूर्ख बनाकर, भेजेगा घर को नरवर ।
चिन्तन करने लगे परस्पर, हँस हँस करके राजकंवर ॥३२६॥

राजाज्ञा से खड़ा पुरुष इक, करने लगा निवेदन एक ।
सभी उपस्थित महानुभावों!, सुनो प्रतिज्ञा सहित विवेक ॥३२७॥

वज्रसार पर बाण चढ़ाकर, जो थंभे को द्विधा करे ।
मलय सुन्दरी राजसुता को, वो नर सुख के साथ वरे ॥३२८॥

सुन कर लाट देश का राजा, आया वापिस बैठ गया ।
चोल देश का राजा कुल की, मर्यादा को मेट गया ॥३२९॥

गौड़ नरेश विशेष जोर दे, धनुष उठा लेते ऊपर ।
बाण चढ़ाते समय किन्तु वे, गिरे वहीं ऊँधे होकर ॥३३०॥

अन्य उठे ही नहीं स्थान से, बहुजन कर न सके दो भाग ।
लज्जित बनकर मुख नीचा कर, बैठे जा न सके घर भाग ॥३३१॥

वीरधवल मन चिन्ता करते, अब तक सुता नहीं आई ।
कहीं नहीं हो जाए मेरी, आज सभा मे हलकाई ॥३३२॥

वीण बजाने वालो मे से वीणा वादक हुआ खडा।
मेरा बल भी देख लीजिए, दिखलाऊ पुरुषार्थ बडा ॥३३३॥
कोलाहल मच गया सभा मे, रख दो नीचे रख दो बाण।
हम मे हुआ नही, तू हममे, है क्या और अधिक बलवान ॥३३४॥
सुनी अनसुनी कर सब बाते, धनुष चढा टकार किया।
बाण चलाकर खडे खभ पर, बल मे एक प्रहार किया ॥३३५॥
सपुट खुला बीच से निकली, मलया राजकुमारी जी।
राजा रानी सकल प्रजाजन, इचरज करते भारी जी ॥३३६॥
वस्त्राभूषण सज्जित कर मे, फूलो की है वरमाला।
चदन चर्चित देह गले मे, हार वही मुक्तावाला ॥३३७॥
कन्या बाहर आकर बोली, कहा गया वो राजकुमार।
जिसने बाण चलाकर खोला, सपुट पर कर तीक्ष्ण प्रहार ॥३३८॥
आगे बढ वरमाला लेकर, कुमार को पहनाई है।
शीघ्र स्वयवर मडप मे बज, उठी मरस शहनाई है ॥३३९॥
गार्वविक को बस भला ये, सहा नही जाये अन्याय।
इससे कन्या को छीनेगे, ऐसा करने लगे उपाय ॥३४०॥
वीरधवल की सेनाओ से, वणिक वेष्टित हुआ तुरन्त।
धनुष चढाकर बाण चलाता, विक्रम बतलाता अत्यन्त ॥३४१॥
कौवे उड जाते जब उठती, उन्हे उडाने को लाठी।
भागे राजकुमार और सब, भागे उनके सहपाठी ॥३४२॥

इतने में आवाज आ रही, यही महाबल राजकुमार ।
महावीर्य बरसाता देखो, सकुशल बाणों की जलधार ॥३४३॥

वीरधवल ने कहा मिल गई, सिद्ध ज्योतिषी की वानी ।
वानी निष्फल कभी न जाती जो कहते केवल ज्ञानी ॥३४४॥

आया निकल रसातल से, क्या नभतल से गिरा यहां ।
तेरी ही थी हमें प्रतीक्षा, छिपा हुआ तू रहा कहां ॥३४५॥

अन्य समागत राजाओं को, समझा बुझा बनाया शांत ।
अतिथि अशांत न भोजन ले तो, माना पाप बड़ा एकांत ॥३४६॥

प्रीतिभोज दे किया सभी को, विदा स्वयंवर के स्थल से ।
नहीं समायोजित होते है, बराबर ऐसे जलसे ॥३४७॥

विधि से हुआ महोत्सव, सधवाओं ने गाये गीत ।
अलग-अलग देशों की होती, अलग-अलग पर्वो की रीत ॥३४८॥

वेदमन्त्र के साथ प्रज्वलित, अग्निदेवी की डाली साख ।
किया प्रणाम वड़ों से पाई, दंपत्ति जीओ वर्षो लाख ॥३४९॥

शोक स्थान पर हर्ष हो रहा, विधि का खेल विचित्र बड़ा ।
झूठा झगड़ा खड़ा करो मत, विधि से किसने केस लड़ा ॥३५०॥

नृप ने पूछा अकस्मात ही, कैसे टपके आप यहां ।
बतलाने का कष्ट कीजिए, कारण इसका साफ यहां ॥३५१॥

कर संकेत प्रिया को कहता, कुलदेवी का है यह काम ।
उठा मुझे ले लाई वो हो, क्यों लूं अन्य किसी का नाम ॥३५२॥

राजा बोला कुलदेवी ने, किया घटित शुभ काम विशेष ।
इसीलिए वो पूजी जाती परपरा से प्रथम हमेश। ।।३५३।।

कुमार बोला राजन् ! मेरा, कहना सुने लगाकर ध्यान ।
मेरे यहा पहुँच जाने का, नही पिता माता को ज्ञान ।।३५४।।

मेरे मात पिता पीछे से, मेरे बिना मरेगे वे ।
मरने से पहले मेरी कुछ, मन से खबर करेगे वे ।।३५५।।

एकम वाले सूर्योदय से, पहले ही पहुचा जाए ।
मेरे कुल पर माता पिता पर, मौत नही मडरा पाए ।।३५६।।

राजा बोला ऐसा ही हम, करवा देगे सकल प्रबध ।
चिन्ता आप करो मत कोई, चिन्ता का हमसे सबध ।।३५७।।

पृथ्वी स्थान नगर की दूरी, केवल योजना साठ प्रमाण ।
करिणी[1] शीघ्र गामिनी अपनी जाए, जैसे जाए बाण ।।३५८।।

गए प्रबध हेतु भूपनि दूत, अपन करे सुख दुख की बात ।
किया अपन दोनो का प्रभु ने, प्यार भरा जीवन भर साथ ।।३५९।।

वेगवती धा माता आई, दूत दोनो के पास वही ।
राजकुमार महाबल सहमा, करे कभी विश्वास नही ।।३६०।।

मेरा गुप्त स्थान है ये तो, गिनो नही भय-स्थान इसे ।
गुप्त बात सुनने को मानो, मिले नही है कान इसे ।।३६१।।

---

१ साहिनी

पहले जो कुछ किया वहां तक, कहा हुआ गिन कहा नहीं।
पीसे हुए को क्या पीसे नर, पिसने को कुछ रहा नहीं ॥३६२॥

भूपति से ले द्रविण चला ले, लिए शस्त्र जो रखे सुधार।
वस्तु चाहिए वो मिल जाए इसीलिए खुलते बाजार ॥३६३॥

गया उसी मंदिर पर दोनों, काष्ट फलक लेकर छीले।
अंदर कीली एक बनाई, बन्द न हो ढीले ढीले ॥३६४॥

इतने में कुछ तस्कर आए, पेटी रखे हुए सिर पर।
मुझे देखकर पेटी रखकर, डर कर भाग गए तस्कर ॥ ३६५॥

तस्कर मुड़ कर एक आ गया, ताला मुझसे तुड़वाया।
गठरी में धनमाल बांध सब, मुझसे कुछ कहने आया ॥३६६॥

मेरे पीछे पांव देखते, तस्कर और पुलिस आकर।
मारेंगे ले लेंगे धन ये, बांधेगे तन मुस्काकर ॥३६७॥

बचने का पथ बता दीजिए, बच जायेगा जीवन धन।
शिखर शिला कर ऊंची उसको, बिठा दिया ला करुणा मन ॥३६८॥

उसे बिठाकर, वट पर चढ़कर, संभालता कोटर कर से।
वे चीजें मिल गई उठा ले, गई व्यन्तरी जो घर से ॥३६९॥

वस्तु साथ ले उतरा नीचे, दिखी शीघ्र तू चल आती।
बातें कही सुनी जाती जब, मिले सुने जीवन साथी ॥३७०॥

तूने जो कुछ किया सुना वह, सुनने को उत्सुक है मन।
अगर दूसरे को न सुनो तो, मर जाता है अपनापन ॥३७१॥

पुरुप वेश से चली वहा से, पूछ लिया गणिका का घर ।
फसी किसी भारी सकट मे, वोली दीन वना कर स्वर ॥३७२॥

कल की ताजा घटना है ये, धूर्त शिरोमणि नर आया ।
मैंने उसे नही पहचाना, सरल भाव से फरमाया ॥३७३॥

मेरी देह टूट कर गिरती, कर मालिश कर सवाहन ।
"कुछ दूगी" कह दिया सुन लिया, उसने मेरा सत्य कथन ॥३७४॥

कार्य पूर्ण होने पर मैंने, उससे कहा करो भोजन ।
भोजन से न प्रयोजन "कुछ दो" देने का जो दिया वचन ॥३७५॥

ये ले ले वो ले ले ले ले, सोने के दीनार हजार ।
ये न चाहिए वो न चाहिए, 'कुछ दो' कुछ लेना स्वीकार ॥३७६॥

आज अकड कर मुझे पकडकर, बैठ गया ये मेरे पास ।
हिलने डुलने नही दे रहा, गले अटकता आता मास ॥३७७॥

मैंने सोचा वेश्या से ही, निकालना मेरे को काम ।
काम करू इसका मै पहले, जिससे ये पाये आराम ॥३७८॥

कहा कान मे धीरे से कुछ, दोनो से फिर वात कही ।
दोनो उठकर खाना खा लें, सुलटाऊँगी वात रही ॥३७९॥

आना पहर तीसरे मिलकर, समाधान दूगी सारा ।
लगा महावल स्वय पूछने, वता किया क्या निपटारा ॥३८०॥

भोजन किया शाति से उनने, मैंने फिर आराम किया ।
पहर तीसरा हो जाने पर, सुलटाने का नाम लिया ॥३८१॥

किए गवाह खड़े फिर बोली, वाद मुझे सुलटाना है ।
कुछ के सिवा नहीं कुछ लेकर, तुझे नहीं घर जाना है ।।३८२।।

देवी के मन्दिर में जाकर, घड़ा एक धरवाया है ।
सब के सुनते हुए कहा लो, 'कुछ' इसमें भरवाया है ।।३८३।।

वादी गया हाथ डाला है, अहि ने डसा किया फूत्कार ।
हाथ खींचता बोला इसमें, निश्चय कुछ है है खूख्वार ।।३८४।।

मैंने कहा चूकती लेना, देना नहीं रहा बाकी ।
समझ गए चालाक चतुर नर, पकड़ न पाये चालाकी ।।३८५।।

हँसे लोग कुछ लिया नहीं, क्यों 'कुछ' ले लिया मजा आया ।
रखा घड़े में सांप विषैला, बता तुझे कैसे खाया ।।३८६।।

वेश्या हुई प्रसन्न न्याय पर, घर पर चलकर हम आये ।
दरवाजे में घुसते ही यों, मैंने नखरे दिखलाये ।।३८७।।

राजा का अपराधी कोई, तेरे घर पर छिपा विशेष ।
जाऊं मैं अन्यत्र कहीं पर, अत्र न करना मुझे प्रवेश ।।३८८।।

गणिका बोली बात सही है, ठहरी कनकवती रानी ।
मलया को मरवाया जिसने, झूठ कही नृप से वानी ।। ३८९ ।।

कपट प्रगट हो जाने पर वह, छिपी हुई है मेरे घर ।
पकड़े जाने का लगता है, मुझे उसे भी पूरा डर ।। ३९० ।।

जलती हुई गड्डरी को तुम, मेरे घर से पार करो ।
पांव पकड कर कहु प्रेम से, मेरे पर उपकार करो ।। ३९१ ।।

अभी उसे जो निकाल दू तो, मेरे सिर वोले जजाल।
अधेरे मे पार करूगा, मिलने दो उससे सभाल ॥३६२॥
भाव भक्ति कर मुझे जिमाया, निशि रानी मे मिलवाया।
मुझे देखते ही मेरे पर, स्नेह-भाव धन वरसाया ॥३६३॥
मेरे रूप रग पर मोहित, काम प्रार्थना करती है।
मैंने देख लिया मेरे पर, बुरी-तरह ये मरती है ॥३६४॥
मैंने कहा मित्र है मेरा, गया आज वो काम कही।
उसे जरुरत है नारी की, आज आज लो नाम नही ॥३६५॥
गोला नदी किनारे देवी, के मन्दिर मे कल आना।
आयेगा वो वही मिलेगा, दोनो का ताना बाना ॥३६६॥
वो न मिलेगा तो फिर हाजिर, मै तो हू मन से तेरा।
उसने परिचय पूछा कैसे, हुआ यहा आना तेरा ॥३६७॥
परदेशी क्षत्रिय हम दोनो, रुके यहा आगे जाते।
कुछ भी देर लगी ना स्वामिन् !, कनकवती को फुसलाते ॥३६८॥
उसने अपने किए हुए सब, कार्य कर लिये अगीकार।
मैंने कहा वस्तुएँ क्या कुछ, साथ लिवा लाई श्री कार ॥३६९॥
सब ला उसने दिखलाया है, उसमे था वो हार नही।
इतना ही है क्या कहने पर, हो पाई इन्कार नही ॥४००॥
लक्ष्मीपुज नाम का सुन्दर, एक और है हार नया।
उसको अन्य स्थान पर मैंने, अपने हाथो छिपा दिया ॥४०१॥

है वो कहाँ ? पूछने पर फिर, बता दिया है उसका स्थान ।
चौराहे पर सूने गृह में कीर्तिस्तंभ की भित्ति महान ॥४०२॥

दिन में वहाँ नहीं जा सकती, ला सकती वो हार नहीं ।
निशि में भी तब जा पाती जब, देखे पहरेदार नहीं ॥४०३॥

आप जा सकें हार ला सकें, तो हिम्मत कर ले आयें ।
मिलकर माल उठा कर निकले, सांस मुक्ति की ले पायें ॥४०४॥

आप नहीं जायें तो संध्या, होने पर मैं जाऊंगी ।
मेरे हाथों रखा हुआ वो, हार स्वयं ले आऊंगी ॥४०५॥

कर प्रोग्राम निकल कमरे से, नीचे उतरी नाथ ! तुरंत ।
मगधा ने पूछा मेरे से, करते हुए विनय अत्यंत ॥४०६॥

अब तू रोकेगी तो भी वह, नहीं रुकेगी, तेरे घर ।
घर से निकालने का मैने, उसे बताया है अवसर ॥४०७॥

गया स्वयं मैं हार ढूढने, मिला नही मुझको वो हार ।
कनकवती से कहा आप ही, लेते आना हार उदार ॥४०८॥

पहुंचना उस मन्दिर में तुम, कहकर मैं तो चल आई ।
रास्ता भूल गई लेकिन मै, नाथ ! आपसे मिल पाई ॥४०९॥

वेगवती की ओर मुड़ी वह, बोली आगे करती बात ।
मैंने प्रिय से कहा अभी वो, आयेगी रहने को साथ ॥४१०॥

प्रिय ने कहा न मिलना उससे, बड़ी कमीनी औरत है ।
उससे पाणिग्रहण करने में, नहीं हमारी इज्जत है ॥४११॥

पहुच मके, इस भावना से इस साहित्य मे कथातत्त्व की प्रधानता रही है। भगवान महावीर द्वारा प्रदत्त उपदेशो मे भी छोटे-छोटे लघु कथानको, दृष्टान्तो, रूपको और जीवन-प्रसगो की मुख्यता रही है। कालान्तर मे पौराणिक शैली के प्रभाव से जैन साहित्यकारो ने भी कर्म सिद्धान्त को ध्यान मे रखकर शुभाशुभ कर्म-फलो के विवेचन की दृष्टि से मूल कथा के साथ अवान्तर प्रसगो, उप-कथाओ को जोडन मे रुचि ली और विशाल कथा-काव्यो की विपुल परिमाण मे रचना की। भारतीय कथा-साहित्य मे जैन आख्यानक काव्या, चरित्र-काव्यो का अपना विशिष्ट स्थान है।

जैन रचनाकार मूलत लोक-जीवन, लोक-संस्कृति और लोक भूमि के रचनाकार हैं। व अपनी शक्ति लोक म ही ग्रहण करते हैं। लोक सदा बहता हुआ नीर प्रवाह है। इसी उन्मुक्त भाव मे जैन रचनाकारो न कथन-शैली मे विविध प्रयोग किये, प्रबन्ध काव्य और खण्ड काव्य के बीच अनेक काव्य रूप निर्मित किये, जो उनकी व्यापक लोकानुभूति और गहन लोक-चेतना के प्रतीक हैं। रास, चौपाई, वेलि, फागु, चचरी, ब्याहलो, हियाली, सज्झाय आदि विविध काव्य रूप इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

रास और रासो काव्या की हिन्दी साहित्य मे लम्बी परम्परा रही है। इस काव्य रूप के सबध मे जितना ऊहापोह हुआ है, उतना किसी अन्य काव्य रूप के सबध मे नही। किसी ने इसे राजसूय यज्ञ रूप वीर काव्य मे जोडा है तो किसी ने रहस्यपूर्ण-अनुभवप्रवण अध्यात्म काव्य मे, किसी ने रामलीला को केन्द्र मे रखकर इसे शृगार-काव्य मे रखा है तो किसी ने रासक नाटक मे सबधित कर नृत्य-सगीतमय आख्यानक काव्य माना है। जैन कवियो ने हजारो की सख्या मे रास काव्य रच कर काव्य रूप के क्षेत्र मे चमत्कारपूर्ण प्रगति की है। जीवन का कोई ऐसा पक्ष और चिन्तन का कोई ऐसा क्षेत्र नही है, जिसको आधार बनाकर रास न लिखे गये हो। घटना, चरित्र, भाव दर्शन, धर्मतत्त्व, हास्य, व्यग्य आदि सभी कथा विचार रास मे गूँथे गये हैं। प्राचीन समय मे लेकर आज तक ये रास रचे जाते रहे हैं, पढे जाते रहे है, गाये जाते रहे ह और ये अभिनीत भी होते रहे हैं।

अंदर से मैंने दी कीली प्रिय ने दी कीली बाहर ।
उसके बाद हुआ जो कुछ भी, उसकी मुझको नहीं खबर ॥४२२॥

वेगवती की उत्सुकता को, देख बढ़ाई आगे बात ।
लगा महाबल स्वयं सुनाने, बिना लगाए पाई-हाथ ॥४२३॥

फिर उसको नाना रंगों से, चित्रित सुन्दर किया विशेष ।
बचे रंग सरिता में डाले, संचय हित में नहीं हमेश ॥४२४॥

चोरी का धन माल साथ ले, लौटे सारे वे तस्कर ।
पूछा पेटी कहां ले गया, तस्कर जो था अभी इधर ॥४२५॥

मैंने पान मान दे उनसे, कहा एक ये करदो काम ।
पूर्व दिशा के दरवाजे पर, स्तम्भ ले चलो, लगो तमाम ॥४२६॥

फिर उस तस्कर के बारे में, सही सही बतला दूंगा ।
माल नदी के तट पर रखदो, लेगे कोई न मैं लूँगा ॥४२७॥

लगे लठंगे स्तम्भ उठाकर, लाए दरवाजे के पास ।
वजन उठा सकते हैं वे नर, जिन्हें उठाने का अभ्यास ॥४२८॥

अच्छी तरह काम कर पूछा, कहो चोर वो गया किधर ।
चोर गरीब न मारा जाए, सोच दिया झूठा उत्तर ॥४२९॥

लोभी तस्कर ने पेटी का, ताला तोड़ निकाला माल ।
पेटी पर चढ़कर पेटी को, दिया नदी के जल में डाल ॥४३०॥

मैंने बहते जाते देखा, तुमसे झूठ नहीं कहता ।
गया कहीं का कहीं अभी तक, वेग साथ बहता बहता ॥४३१॥

कनकवती को आते देखा, प्रिय छिप करके हुए खडे ।
मैंने उसे कहा है भद्रे ! चोर घूमते यहा वडे ॥४१२॥

धन दौलत या वस्त्राभूपण, दे दो जो है तेरे पास ।
रख दू उसे सुरक्षित मुझ पर, करो अगर मन से विश्वास ॥४१३॥

जो भी था सब सौंपा मुझको, मैंने गठरी ली सभार ।
उसमे से ये एक कचुकी, लक्ष्मीपूज निकाला हार ॥४१४॥

शेष तमाम वस्तुये खाली, उस मजूषा मे डाली ।
रानी को भी डाला उसमे, ऊपर से दे दी ताली ॥४१५॥

प्रिय को बुलवा उठवा करके, नदी किनारे पर फिर ला ।
वडे वेगवाले पानी मे, डाल कहा अब वहती जा ॥४१६॥

मस्तक पर जो तिलक लगा था, उसे थूक से साफ किया ।
नर से नारी बनी स्वय मैं, ऐसा क्रिया कलाप किया ॥४१७॥

हार पहनकर पहन कचुकी, चन्दन से चर्चित कर तन ।
वरमाला लेकर हाथो मे, फूल रही मैं मन ही मन ॥४१८॥

प्रिय ने मुझे काष्ट फाली गत, कीली का बतलाया भेद ।
मुझे खडी की उसके भीतर, नष्ट हो गया पिछला खेद ॥४१९॥

सास नहीं रुक जाय अत कर, दिए छिद्र उस के सिर पर ।
काष्ट दूसरा रखा ढाँककर, वडा चतुर प्रिय कारीगर ॥४२०॥

ऐसे ऐसे करना होगा, प्रिये ! न किंचित घवराना ।
खुल जाए जव सपुट झट से, फाली से वाहर आना ॥४२१॥

अभी लौट आयेंगे तो फिर, मुझे ले चलो अपने साथ ।
जाते जाते वेगवती से, लगे बोलने सारी बात ॥४४२॥
अगर हमारे आने से ही, पहले भूपति आ जायें ।
तो उनसे कह देना ऐसे, जिससे वे ना घबड़ायें ॥४४३॥
मलया ने कर रखी मनौती, पूरा करने गए अभी ।
याद नहीं रहता है करना, काम जरुरी कभी कभी ॥४४४॥
गोला नदी किनारे मन्दिर, देवी का है दूर नहीं ।
जाते हैं हम दोनों जाना क्या मां को मंजूर नहीं ॥४४५॥
नृप ने राजकुमारों को आ भली भांति से समझाया ।
समझे नहीं एक भी उनने उलटा जोश बहुत खाया ॥४४६॥
प्रातः होते ही हमला कर, जामाता को मारेंगे ।
मलया को छीनेंगे लड़कर नहीं किसी से हारेंगे ॥४४७॥
समझाना छोड़ा राजा ने करिणी करवाई तैयार ।
बेटी और जवांई भागे, इस पर होकर के असवार ॥४४८॥
महलों में आया कहने को, जल्ली से होओ तैयार ।
दोनों वहां नहीं है हाजिर, राजा करने लगा विचार ॥४४९॥
कहा धाय ने अभी गये वे, देवी के दर्शन करने ।
मानी हुई मनौती से मनवाले खाने को भरने ॥४५०॥
राजा बैठा करे प्रतीक्षा, प्रथम दूसरा पहर गया ।
गया तीसरा पहर गुजर पर, परमेश्वर करता न दया ॥४५१॥

अभी रात है आएगा वो, हो जाएगा जब परभात।
लेंगे अपना हिस्सा सारा, द्रव्य लगेगा अपने हाथ ॥४३२॥
ऐसे कहते हुए चोर वे, खडे रहे ना मेरे पास।
उठ कर उषा लगी, इत देने सूरज उगने का आभास ॥४३३॥
आया बनकर सावधान मैं, रक्षा थभे की करता।
पडे नही सदेह किसी को, नही किसी से मैं डरता ॥४३४॥
राज पुरुष इत लगे पहुचने, उसी स्तभ की करते खोज।
देख उन्हे निश्चिन्त बना मैं, माना उतरा सिर से बोझ ॥४३५॥
उसके बाद बना जो किस्सा, सारे पुर मे बहुत प्रसिद्ध।
वेगवती से सुनना मलये!, ये है गुण से वय से वृद्ध ॥४३६॥
मलये! जिस तस्कर को मैंने, शिलातले जो दिया दबा।
उसे निकाला गया नही तो, उसे मार देगा मलवा ॥४३७॥
मुझको दोष लगेगा उसका, उस पर दया मुझे आती।
जाऊ उसकी जान बचाऊ, बना बज्र जैसी छाती ॥४३८॥
मलये! अभी अभी आया मैं, बैठी रहो धैर्य मन धार।
नृप के, मेरे आने की तुम, करो प्रतीक्षा हो हुशियार ॥४३९॥
मलया बोली प्राणनाथ! तुम, ऐसी आज्ञा करो नही।
मुझे साथ ले चलने मे, आशकाओ से घिरो नही ॥४४०॥
मात पिता ने सौप दिया है, अपने हाथो प्रिय हाथो।
प्रिय के साथ प्रिया पाती है, सुख वे सातो के सातो ॥४४१॥

वैसे ही सब काम किया, चर भेजे समझा कर सुविशेष ।
पृथ्वी स्थान नगर से लाओ, सूरपाल नृप का संदेश ॥४६२॥

दोहे

मलय सुन्दरी चरित का, अपर खंड सुखकार ।
लिखा लेखनी से स्वयं, मणि ने ले अधिकार ॥ १ ॥

हुआ महाबल मलय का, वांछित हस्त मिलाप ।
'गणि मणि' मेल-मिलाप का, मार्ग सरल निष्पाप ॥ २ ॥

पढ़ो पाठकों प्यार से, कर लेखक से प्यार ।
पाठक लेखक का रहे, मधुर-मधुर व्यवहार ॥ ३ ॥

शक्ति भक्ति दो शारदे !, मैं तेरा सत्पुत्र ।
ध्यान रहे "मणि" से नहीं, भाषित हो उत्सूत्र ॥ ४ ॥

अहंकार जागे नहीं, बढ़े ज्ञान की भक्ति ।
उपासना श्रुत ज्ञान की, आत्मा की अभिव्यक्ति ॥ ५ ॥



तलाश मन्दिर मे करवाई, नही चिन्ह, वे भी न मिले ।
मुरझाये मनवाले सारे, कल जो प्यारे सुमन खिले ॥४५२॥
चन्द्रावती कहा यहा से कहा रहा वह पृथ्वीस्थान ।
कहा महाबल कहा मलय ये, गये कहा जाने भगवान ॥४५३॥
दोनो की इस अधेरे मे, हत्या कही हुई होगी ।
कहो कलम! विश्राम यही या, और अधिक लिखकर लोगी॥४५४॥
अल्प समय के लिए भाग्य से मिले मुझे मेरे प्यारे ।
अधेरे मे मिल जाए क्यो, बिजरी वारे झबकारे ॥४५५॥
इन्द्रजाल सा या सपने सा, आखो से देखा ये खेल ।
जलते हुए दीप से मानो, गया निकाला सारा तेल ॥४५६॥
थाल परोसा ही क्यो जो था, थाल उठाना आगे से ।
लगता है ऐसा था कोई, विधि का वैर अभागे से ॥४५७॥
बली महाबल बनकर छल से मलया को ले गया कही ।
मैं मरने को उद्यत था पर, मुझको मरने दिया नही ॥४५८॥
खोजू कहा कहा पर पाऊ, बना हुआ मैं मूढात्मा ।
मिथ्यात्वी क्या समझ सकेगा, कैसा होता गूढात्मा ॥४५९॥
वेगवती ने हाथ जोडकर, कहा नाथ ! ये सुन लो वात ।
पृथ्वीस्थान गए हो शायद, भेजो चर लो खबर प्रभात ॥४६०॥
अच्छा मिला सुझाव प्रशसा, वेगवती की करता है ।
सीधा रास्ता दिख जाने पर, दु ख से पथिक उबरता है ॥४६१॥

दुश्मन बने हुए प्रतिस्पर्धी, राजकुमारों का है डर ।
राजकुमार महाबल कहता, सुनो प्रिये ! मलया सुन्दर ॥ ४ ॥

गुटिका घिसकर तिलक लगाकर, तुझे बनादूं पुरुष विशेष ।
मलया बोली जैसी इच्छा, मान्य मुझे मन से आदेश ॥ ५ ॥

दोनों पुरुष साहसी पूरे, देवी के मन्दिर आये ।
शिला हटाकर उसे निकाला, तस्कर ने झुक गुन गाये ॥ ६ ॥

कहा चोर वे तुझे ढूंढते, आए मैंने लौटाये ।
चल जाता जो पता उन्हें तो, नहीं छोड़ते बिन खाये ॥ ७ ॥

सकुशल जा अब तुझे नहीं भय, प्राण लाभ धन लाभ मिला ।
पुण्य प्रताप आप दोनों का, उससे यही जबाब मिला ॥ ८ ॥

गया चोर अब ये भी उतरे, अपने पुर में जाने को ।
बड़ के नीचे होकर निकले, लगते कदम बढ़ाने को ॥ ९ ॥

वट तरु से आवाज आ रही, प्रिये ! रुको सुनलें क्षणाचार ।
भूतों की सी बातें लगती, भूतों का भी इक संसार ॥ १० ॥

कुंवर सोचता चुरा न ले ये, प्रिया गले से लिया उतार ।
कमर पटे में घुसा लिया है, लक्ष्मीपुंज कीमती हार ॥ ११ ॥

अब बैठे घुसकर कोटर में, सुनने को भूतों की बात ।
बात ध्यान देकर सुनने से, बात कीमती लगती हाथ ॥ १२ ॥

एक भूत ने कहा ध्यान दे, सुनो सुनाऊँ बात नई ।
नई-नई बातें होती हैं, इस पृथ्वी पर कई-कई ॥ १३ ॥

तृतीय खण्ड

दोहे

श्री जिन हरि सागर करो, अपनी करुणा दृष्टि ।
'मणि' कर पाये मोद से, साहित्यिक नव-सृष्टि ॥ १ ॥
मलय सुन्दरी चरित का, चले तीसरा खण्ड ।
खुले तीसरे नेत्र ज्यो, प्रतिभा लिए प्रचण्ड ॥ २ ॥
श्रवन पठन वाचन मनन, पावन करे विचार ।
"मणि" उद्देश्य महानतम, श्रम पाये आकार ॥ ३ ॥
हेय ज्ञेय आदेय से, भरा पडा ससार ।
ग्रहण करे 'गणि मणि' प्रवर, सार सार से सार ॥ ४ ॥

तर्ज—राधेश्याम

पंथ अपरिचित गगन अंधेरी, चतुर्दशी तिथि है काली ।
घूक निशाचर बोल रहे हैं, भाषा उन भूतो वाली ॥ १ ॥
पडी श्मसान भूमि मे हँसती, खड खड करती खोपडिया ।
बसती बहुत दूर लोगो की, नही पास मे झोपडियाँ ॥ २ ॥
गोला सरिता बहती कल-कल, करे आलसी ज्यो कल-कल ।
पग-पग पर डर है चोरो का, चचल भूतनियाँ ले छल ॥ ३ ॥

जैन साहित्य-सृजन की इस समृद्ध काव्य परम्परा मे गणिवर्य श्री मणिप्रभ सागर युवा मनीषी कवि के रूप में समादृत है। आप ओजस्वी वक्ता, प्रबुद्ध विचारक और चिन्तनशील लेखक है, सरस-मधुर गीतकार-कथाकार है। आपके द्वारा रचित "ऋषिदत्ता रास" कथा-काव्य बडा लोकप्रिय रहा है। इसमे ऋपि-कन्या ऋषिदत्ता के सयमशील सद्भाव का, प्रेमिल मधुर व्यवहार का हृदयस्पर्शी चित्रण है। इसी शृखला मे प्रस्तुत है यह **"मलय सुन्दरी रास"**। इस रास की रचना मुनि श्री ने स० 2045 मे पार्श्वनाथ जयन्ती (पोष वदी दशमी) पर बीकानेर में सम्पन्न की।

"मलय सुन्दरी रास" का कथानक अत्यन्त लोकप्रिय, सरस, रोचक और मनोरजक है। यह कथा बहुत प्राचीन है, भगवान महावीर से भी पहले की। कहा जाता है कि 23 वे तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के निर्वाण के 100 वर्ष बाद केशी गणधर ने शख राजा के समक्ष यह कथा सुनाई थी। प्राचीन अर्द्ध मागधी भाषा मे लिखित इस कथा पर परवर्ती साहित्यकारो ने सस्कृत, अपभ्रंश गुजराती, राजस्थानी और हिन्दी मे विभिन्न कृतियो का सृजन किया। संस्कृत मे माणिक्यचन्द्र सूरि और जयतिलक सूरि की रचनाएं अत्यन्त प्रसिद्ध और लोकप्रिय रही है। गणिवर्य मणिप्रभसागर जी ने जयतिलक सूरि की सस्कृत रचना को आधार बनाकर ही प्रस्तुत काव्य की रचना की है।

यह कृति 4 खण्डो मे विभाजित है। प्रथम खण्ड में प्रारम्भ मे 9 दोहे, फिर राधेश्याम तर्ज मे 405 छन्द और अन्त में चार दोहे है। इस खण्ड में चम्पानगरी (चन्द्रावती) के राजा वीरधवल और रानी चम्पकमाला के निःसतान होने का दुख, कुशवर्धनपुर के लोभानन्दी और लोभाकर की लोभवृत्ति, वीरधवल के भाई वीरपाल की द्वेषवृत्ति और असुरदेव के रूप में चम्पकमाला का अपहरण, देवी चक्रेश्वरी द्वारा चम्पकमाला को वरदान और मलयसुन्दरी तथा मलयकेतु के रूप मे युगल सतति का जन्म आदि इतिवृत्त वर्णित है। द्वितीय खण्ड के प्रारम्भ मे तीन दोहे, फिर राधेश्याम तर्ज में 462 छन्द और अन्त में 5 दोहे है। इस खण्ड मे पृथ्वीस्थाननगर के राजा शूरपाल और उनकी रानी पद्मावती

पृथ्वी स्थान नगर का स्वामी, सूरपाल अति सुखदाई ।
पुत्र महाबल पुन्यवान है, पुन्यवान उसकी माई ॥ १४ ॥
किसी अदृश्यात्मा ने उसका, हार कीमती चुरा लिया ।
सुत ने कहा सुनो माताजी[1], दुष्टात्मा ने बुरा किया ॥ १५ ॥
पाच दिनो के भीतर भीतर, ला सौंपू जो हार नही ।
करू प्रवेश अग्नि मे मेरा, निश्चय है बेकार नही ॥ १६ ॥
माँ बोली जो हार न पाऊँ, बेटे[1] मैं भी मर जाऊँ ।
हार बिना, सुत बिना, जगत मे, जी कर भी क्या कर पाऊँ ॥ १७ ॥
आया हार कुमार न घर पर, रानी का मरना आया ।
कौतुक यही देखने चलना, कैसे त्यागे वे काया ॥ १८ ॥
विष भक्षण कर मरे, मरे या अग्नि शरण ले सलिल शरण ।
गिरि से झपापात करे या, स्वेच्छा पूर्वक वरे मरण ॥ १९ ॥
उसके मरते ही दुख पूर्वक, राजा भी मर जाएगा ।
चलो तमाशा देखें ऐसा, फिर ना अवसर आयेगा ॥ २० ॥
सुना कुवर ने स्वय कान मे, सोचे सत्य सुनाते सुर ।
किस मे मुख देखूगा अपना, नष्ट हो रहा वश मुकुर[१] ॥ २१ ॥
इतने मे फिर कहा भूत ने, चलें उडें कर दे हुकार ।
कहते ही वट वृक्ष उड चला, पल मे लाकर दिए उतार ॥ २२ ॥

---

१ दपण

यक्ष धनंजय के मन्दिर में, गए भूत सब उतर उतर ।
मलय महाबल बाहर निकले, तरुवर का छोड़ा कोटर ॥ २३ ॥

शायद यह वापिस उड़ जाए, भूतों का पाकर आदेश ।
हम उलटे बैठे रह जायें, पायें व्यर्थ व्यर्थ में क्लेश ॥ २४ ॥

कदली वन में गए घूमने, परिचित अपना जान प्रदेश ।
विधि अनुकूल समझ कर करते, दोनों सात्विक गर्व विशेष ॥ २५ ॥

दोनों बैठे हुए शांति से रात बिताते हैं सुख से ।
किन्तु सामना करना होगा, अभी एक भारी दुःख से ॥ २६ ॥

रोती हुई किसी अबला के, स्वर कानों में टकराये ।
सुन सोचे दुखियारी नारी, संकट में पड़ चिल्लाये ॥ २७ ॥

अपना है कर्तव्य दुखी का, दूर करें दुखड़ा सारा ।
दुखड़ा दूर किये बिन सुखड़ा, दुखड़े तुल्य लगे खारा ॥ २८ ॥

पीछो बैठी रहो यहां तुम, अभी अभी आ जाता हूं ।
घबड़ाना मत प्रिये ! लौट आऊंगा जैसे जाता हूं ॥ २९ ॥

मन था साथ-साथ जाने का, पर न गई रह गई यहां ।
मलया के जीवन में आती, विपदा कोई नहीं यहां ॥ ३० ॥

गया कुमार न आया वापस, रात बात में बीत गई ।
परोपकारी पुरुषों की यह, परखी जाती रीत नई ॥ ३१ ॥

दिन निकला दिन चढ़ा किन्तु वे, वापिस आए नहीं अभी ।
कभी कभी हो जाया करता, जो हो पाता नहीं कभी ॥ ३२ ॥

मात पिता से मिलने को वे, चले गये होंगे पुर मे।
कभी विचार उर्म्मिया उठती, मलया के कोमल उर मे ॥ ३३ ॥

मैं भी पुर मे जाऊँ दर्शन, पाऊँ प्रीतम प्यारे का।
हरि ही शरण हुआ करता है, जग मे हिम्मत हारे का ॥ ३४ ॥

पुरुप वेश मे मलया ने उस, पुर मे किया प्रवेश भला।
घुसते ही दरवाजे मे आ, कोतवाल खुद खडा मिला ॥ ३५ ॥

वेश नया मुह नया नया नर, देख पूछने लगा तुरन्त।
कौन ? कहाँ मे आया भैया ?, पूछ रहा क्यो पुर का पथ ॥ ३६ ॥

कुछ भी उत्तर मिला न इससे, लेने लगा तलाशी अब।
मिले महाबल वाले कुण्डल, कपडे भी विश्वासी सब ॥ ३७ ॥

कोतवाल ने खडा किया ला, राजा के सम्मुख इसको।
इसने सोचा उत्तर दूगी, यहा अकेली किस-किस को ॥ ३८ ॥

वही प्रश्न राजा ने पूछे, इसने सोचा मन ही मन।
जो मैं सच बोलूं तो मेरे, होगे और खडे दुश्मन ॥ ३९ ॥

सत्य प्रकाशित मुझे न करना, चाहे जो आफत उतरे।
मित्र महाबल का हूँ ऐसे, शब्द स्वय मुख से उचरे ॥ ४० ॥

उसने ही ये कुण्डल कपडे, मुझे पहनने किए प्रदान।
मित्र महाबल कहा गया वह, बतला उसका स्थान निशान ॥ ४१ ॥

हम से आकर क्यो न मिले वो, क्यो न हमे ला दे वो हार।
उसके बिना मरे उसकी मा, हम भी मरने को तैयार ॥ ४२ ॥

कोई हममें से पहचाने, तो मैं मानूं सच्ची बात।
झूठी बात बनाने वाले, मानव के क्यों आता हाथ ॥ ४३ ॥

कुंडल कपड़े चुरा ले गया, उस तस्कर को कल मारा।
तू उसका ही भाई होगा, होगा या उसका प्यारा ॥ ४४ ॥

भाई के मारे जाने से, भटक रहा तू इधर-उधर।
मौनी अल्प बोलने वाला, बहुधा होता है तस्कर ॥ ४५ ॥

कोतवाल ! ले जाकर इसका, वध कर डालो हाथों से।
अपना ही कोई दुश्मन है, लगता इसकी बातों से ॥ ४६ ॥

मलय सुन्दरी ने सोचा मन, कष्ट मारणांतिक आया।
विधि विरचित विधि विलसित माया, रही अलक्षित यों गाया ॥४७॥

मुख्य सचिव बोला नरवर से, लगता है ये चोर नहीं।
चोर प्रमाणित हुए बिना ही, देना दड कठोर नहीं ॥ ४८ ॥

दंड दिए जाने से राजन !, जनता में होगा अपवाद।
जन अपवाद नहीं कर सकता, राजा रानी को भी बाद ॥ ४९ ॥

सजा दिव्य दी जाए इसको, घड़े सांप की सजा मिले।
उत्कट सांप पकड़ लाने को, कालबेलिए चल निकले ॥ ५० ॥

कुंडल कपड़े छीन ले लिए, हवालात में इसे रखा।
दासी ने रानी से बोला, आया उसका एक सखा ॥ ५१ ॥

आज पांचवा दिन आने का, लाने का संग में वो हार।
नहीं हार का पता और वह, अब तक आया नहीं कुमार ॥ ५२ ॥

जीवित होता तो आ जाता, चाहे आता वो खाली।
लगता है मर गया कही पर, चिट्ठी हमे नही डाली ॥ ५३ ॥

हार विना सुकुमार विना अव, मुझ को तो मर जाना है।
गिरी अलख शिखर पर चढकर, झपा तुरन्त लगाना है ॥ ५४ ॥

राजा से जा कह दे मेरा, अविनय हो तो माफ करे।
मेरा चाहा मैं करती हू, जो जाने सो आप करे ॥ ५५ ॥

दासी ने जा कहा-भूप से नरपति फिर कहता ऐसे।
आज समूचा दिन वाकी है, मरा जाय पहले कैसे ॥ ५६ ॥

भेजे हुए हमारे चर नर, लाए साथ कुमार नही।
इन्तजार हम करे वहा तक, मरने का अधिकार नही ॥ ५७ ॥

दासी ! जा रानी से कह दो, मिले आज कपडे कुडल।
वैसे ही वो मिल जायेगा, कुवर महावल आकर कल ॥ ५८ ॥

इस अज्ञात व्यक्ति के द्वारा, करवाना है दिव्य प्रयोग।
गुप्त रहस्य सामने आए, देखेंगे हम सारे लोग ॥ ५९ ॥

दासी ने जा कहा, दे दिए प्रमुख वस्त्र कुडल कर से।
रानी सुत की देख निशानी, तन मन जीवन से हरसे ॥ ६० ॥

लाया कौन निशानी सुत की, दर्शन उसके मैं पाऊ।
वही यक्ष मन्दिर मे जाऊ, नही व्यर्थ मे शरमाऊ ॥ ६१ ॥

हो सकता है उसे मार कर, कुडल कपडे ले आए।
अनजाने परदेशी नर का, मन विश्वास न कर पाए ॥ ६२ ॥

फिर भी ले परिवार आ गई, यक्ष धनंजय के मन्दिर।
राजा और प्रजा पहले से, वहीं उपस्थित थे अन्दर ॥ ६३ ॥

नृपादिष्ट गारुड़िक गुफा में, जाकर लगे ढूंढने नाग।
गिरी के महाबिलों में मिलते, बरसाते जहरीली आग ॥ ६४ ॥

महाकाय काजल सा काला, मिला पकड़ घट में डाला।
यक्ष धनंजय के सम्मुख रख बैठा दिया है रखवाला ॥ ६५ ॥

नृप बोला अब लाओ उसको परखो है सच्चाई क्या।
प्रथा चलाई, धूम मचाई, है-उसमें अच्छाई क्या ॥ ६६ ॥

सुभटों से घिर स्थिर मन वाला, आया ऊभा करे विचार।
जहर सुधा से और शशी से, लगे बरसाने क्यों अगार ॥ ६७ ॥

क्या अदृष्टाकृति वाले नर, तस्कर ही होते सारे।
दिव्य दंड देने को मिलकर, आये पुरवासी प्यारे ॥ ६८ ॥

सोना सौ टंच वाला हो वो, अग्नि परीक्षा दे पाता।
सच्चा नर डरता न कभी भी, नहीं बहाना ले पाता ॥ ६९ ॥

नरवेशा रानी मलया मन, महामंत्र का जाप करे।
मंत्र जाप से ताप हरे मन, साफ करे कृत पाप हरे ॥ ७० ॥

घड़ा उघाड़ डाल कर उसमें, नाग ले लिया निज कर में।
शुद्ध शुद्ध है चोर नहीं यों, जनता बोली सम स्वर में ॥ ७१ ॥

कर स्थित कृष्ण नाग ने अपने, मुंह से निगला हार भला।
मलय गले में पहनाया है, मुख के द्वारा दिखा कला ॥ ७२ ॥

हार देखकर के पहचाना, ये ही हैं वो हार सही ।
शाति रखो हल्ला न मचावो, मारे अहि फुफकार नही ॥ ७३ ॥

जीभ निकाल नाग ने उसका, तिलक चाट चमकाया भाल ।
नर का वेश हो गया गायव, तरुणी वन गई वह तत्काल ॥ ७४ ॥

स्त्री के सिर के पीछे अपना, फण फैलाकर नाग खडा ।
मलया रानी से लगता है, महा नाग का राग वडा ॥ ७५ ॥

राजा थर थर लगा कापने, मैंने यह कर दिया अकार्य ।
सावारण ये नाग नही है, शेपनाग ही हैं श्री आर्य ॥ ७६ ॥

करु नाग की पूजा जिससे, हो जाए अहिराज प्रसन्न ।
धूप दिया, ला फूल चढाये, दूध कटोरा रख आसन्न ॥ ७७ ।

गारुडिको से कहा– जहाँ से, लाए इसे वही छोडो ।
इसे नही हो पीडा ऐसे, पकडो पूँछ नही मोडो ॥ ७८ ॥

सुन आदेश विशेप नाग ले, विल मे उसे दिया पहुँचा ।
युवती की नृप करे प्रशसा, सिहासन देकर ऊँचा ॥ ७९ ॥

अभी अभी तो आप पुरुप थी, और आप अब है नारी ।
गूढ रहस्य सुने हम सारे, वने आपके आभारी ॥ ८० ॥

प्रिय मुख थूक लगाने पर ही, तिलक हुआ करता था साफ ।
उसे जीभ से चाट साफ कर, गया जँगली काला साँप ॥ ८१ ॥

निगला हार मुह से उसने, क्या वे स्वय वने अहिराज ।
मैं कुछ नही जानती इसके, पीछे रहा हुआ क्या राज ॥ ८२ ॥

जितना जानूं उतना ही बस, बोलूं अधिक नहीं आगे ।
अधिक बोलने वाले नर पर, अंतर में संशय जागे ॥ ८३ ॥

चन्द्रावती पुरी के स्वामी, वोरधवल नृप की तनया ।
बहुत लाडली सब की प्यारी, राजकुमारी मैं मलया ॥ ८४ ॥

जंचा नहीं ये उत्तर, जब तुम, नर थी तब कुछ बतलाती ।
अभी अन्य कुछ बतलाती हो, बात मिलाप नहीं खाती ॥ ८५ ॥

वीरधवल नृप कहां कहां पर, पुरी और पुर पृथ्वी स्थान ।
बासठ योजन का है अन्तर, विज्ञ पुरुष कैसे ले मान ॥ ८६ ॥

एकाकिनी आप क्यों आई, नर क्या पीछे आयेंगे ।
कर सत्कार भेज देंगे हम, वे लौटा ले जायेंगे ॥ ८७ ॥

अब राजा रानी से कहता, रखो इसे तुम अपने पास ।
पांच दिनों में हार आ गया, प्रभु पर करो पूर्ण विश्वास ॥ ८८ ॥

होगा किसी स्थान पर जीवित, चला महाबल आएगा ।
बीती हुई अवस्थाओं का, वर्णन हमें सुनायेगा ॥ ८९ ॥

मरने का कुविचार त्याग दो, प्राप्त हो गया है जब हार ।
राजन् करूं हार का क्या मैं, जो ना आया राजकुमार ॥ ९० ॥

पुत्र रत्न के बिना हार ले, जीऊँ तो जीना धिक्कार ।
कल्पवृक्ष दे वृक्ष निंब लूं, सुधा त्याग लूं जल की धार ॥ ९१ ॥

रत्न त्याग कर कंकर ले लू, दो आज्ञा भृगुपात करूं ।
आत्मघात यद्यपि वर्जित है (पर) मैं मन से अपघात करूं ॥ ९२ ॥

जब तक दिन निकले तब तक तुम, मुह से नही निकालो बात।
जैसे हार मिला वैसे ही, पुत्र मिलेगा हमे प्रभात ॥ ९३ ॥

दिला बडा विश्वास महल मे, आए मलया को ले साथ।
भोजनादि कार्यो मे निपटे, नही भूलते दुख की बात ॥ ९४ ॥

दिन बीता रजनी भी बीती, हुआ सवेरा दिन निकला।
आए नौकर कहा सभी ने, कही महाबल नही मिला ॥ ९५ ॥

समाचार सुनकर के ऐसे, राजा रानी बने निराश।
दोनो आत्मघात करने को, आए चलकर गिरि के पास ॥ ९६ ॥

इतने मे कुछ लोग दौडते, आए बोले सुनो नृपाल।
वहा महाबल बधा डाल से, मरो न तुम चल करो सभाल ॥ ९७ ॥

इसी बात पर एक साथ मे, विस्मय हुआ हुआ आनन्द।
चले महाबल के दर्शन को, भृगुपातादिक करके बन्द ॥ ९८ ॥

मलया पद्मावती आ गई, पुरवासी सुनकर आए।
देखा बड के निकट पहुँच कर, बधा महाबल दुख पाए ॥ ९९ ॥

दृढ शाखाओ से बाधे पग, नीचे लटक रहा माथा।
सास बहुत मुश्किल से आता, मुख से बोल नही पाता ॥१००॥

बढई को बुलवा शाखा को, कटवा कर सुत को काढा।
विह्वल घूर्णित नेत्र गिरा वह, दुखित पीडित हो गाढा ॥१०१॥

शीत पवन तन सवाहन से, नेत्र खोल कर निरख रहा।
माँ को, पूज्य पिता को, रानी मलया को भी परख रहा ॥१०२॥

कहां गया तू ! रहा कहां तू ! किसने तुझे दिया ये कष्ट ।
वत्स ! समुत्सुक हम सुनने को, बोल बोल जल्दी से स्पष्ट ॥१०३॥

व्यन्तर कर से लेकर कदली, वन आने तक कही कथा ।
प्यारे पाठक प्यारे श्रोता, पढ़ सुन पाये यथा तथा ॥१०४॥

नारी रुदन श्रवन कर निकला, उसका दुख करने को दूर ।
बैठ अकेली पीछे रहना, किया प्रिया ने भी मंजूर ॥१०५॥

योगी एक मिला रास्ते में, साधन सामग्री तैयार ।
मुझे देख उठ आया सविनय, कहता ऐसे सुनो कुमार ! ॥१०६॥

उत्तर साधक आप बनो तो, बने साधना सफल महान ।
एक एक ही होता, दो मिल, बन जाते ग्यारह गुणवान ॥१०७॥

दया आ गई उस पर उत्तर, साधक बना खड्ग ले हाथ ।
योगी बोला वीर पुरुष तुम, सुनो ध्यान से सारी बात ॥१०८॥

जहां खड़ी ये स्त्री रोती है, वहीं वृक्ष की शाखा पर ।
बंधा हुआ शव लटक रहा है, अक्षतांग कोई तस्कर ॥१०९॥

उसे यहां ले आवें, सुन मैं, पहुँचा देखा काम कमाल ।
स्त्री से पूछा, आप कौन हैं, क्यों रोती हैं कह दें हाल ॥११०॥

उसने कहा बंधा शाखा से, लटक रहा है शव जिसका ।
गिरी अलंब निवासी तस्कर, नाम लोहखुर है उसका ॥१११॥

पकड़ा गया राजपुरुषों से, नृप ने इसको मरवाया ।
मेरे से कल प्रातः ही ये, प्रेम ब्याह था कर पाया ॥११२॥

प्रेम अधूरा खटक रहा मन, लटक रहा ये अधर यहा।
करू विलेपन चदन मुख पर, पहुँचे ऊपर हाथ कहा ॥११३॥

आप उपाय बताओ इसका, बनो सहायक करुणाकर।
मैं बोला मेरे कधो पर, चढकर प्रिय से मिल जी भर ॥११४॥

कधो पर चढ बाह डाल कर, प्रिय का लेती आलिगन।
शव ने अपने दातो मे ली, नाक दबा वह करे रुदन ॥११५॥

स्त्री जब लगी छुडाने तब वह, मुख मे रही टूट कर नाक।
मुझे हसी आ गई देखकर, प्रेम किये का दुष्परिपाक ॥११६॥

मुर्दा बोला हसता है तू, मेरा ऐसा देख चरित्र।
कल तू लटकाया जायेगा, इसी वृक्ष शाखा से अत्र ॥११७॥

निडर हृदय वाले मेरे मन, तत्क्षण भय उत्पन्न हुआ।
मुर्दे भी क्या बोला करते, प्रश्न नही प्रच्छन्न हुआ ॥११८॥

मुर्दा नही बोलता उसके, मुख से बोल उठा व्यन्तर।
मुर्दे-मुर्दे स्थित व्यन्तर मे, बहुत कठिन करना अन्तर ॥११९॥

कधो से नीचे वो उतरी, लगी पूछने मेरा नाम।
मैंने सत्य बताया सब कुछ, सत्य बोलना 'दुष्कर काम ॥१२०॥

जाते समय कहा उसने जब, नाक स्वस्थ हो जायेगी।
तब ये नारी उपकारी का, बदला स्वय चुकायेगी ॥१२१॥

तस्कर का धन माल खजाना, बतलाऊगी मैं सारा।
नमस्कार कर चली गई वह, उपकृत हो मेरे द्वारा ॥१२२॥

तरु पर चढ़ तस्कर के बंधन, खोल जमी पर डाला है।
मैं नीचे आया तो शब ने, मारा स्वयं उछाला है ॥१२३॥

बधा स्वयं ही शाखा से जा, चढ़ना पड़ा मुझे पीछे।
चोटी पकड़ उसे ले आया, मेरे साथ उसे नीचे ॥१२४॥

लाद पीठ पर ला योगी के, सम्मुख शव को डाल दिया।
नहला कर पूजन कर उसने, मुर्दे को संभाल लिया ॥१२५॥

अग्निकुंड प्रज्वलित बनाकर, मन्त्र जाप योगी करता।
मन्त्र सिद्ध जो होता तो शव, अग्निकुंड में उठ गिरता ॥१२६॥

उठा नही शव हुआ सवेरा, योगी मन से हुआ निराश।
कही भूल रह गई दुबारा, करना होगा जप अभ्यास ॥१२७॥

कल की रात यहीं पर रुक कर, मेरे पर उपकार करें।
सहायता की बहुत जरुरत, विनति आप स्वीकार करें ॥१२८॥

मैं रुक गया कहा योगी ने, अगर किसी को पता चला।
पकड़ आपको ले जायेगा, मेरा इसमें नहीं भला ॥१२९॥

विद्याबल से रूप बदल दूं, जो इच्छा हो बोलो साफ।
मैंने कहा कीजिए भगवन्! जैसा उचित समझते आप ॥१३०॥

हार कीमती चला न जाये, छिपा लिया मैंने मुख में।
चल संपत्ति काम नित आती, मानव के सुख में दुख में ॥१३१॥

घिसकर जड़ी तिलककर सिर पर, मुझे बनाया काला नाग।
गिरि के बिल में छोड़ दिया ला, विद्या का बल बहुत अथाग ॥१३२॥

व राजकुमार महावल के अप्रतिम सौन्दर्य, साहस और चमत्कारपूर्ण जीवन-प्रसगो के वर्णन के साथ मलयसुन्दरी के साथ उनके विवाह का इतिवृत्ति वर्णित है। तृतीय खण्ड मे प्रारम्भ मे चार दोहे, फिर राधेश्याम तर्ज मे 317 छन्द और अन्त मे 6 दोहे हैं। इस खण्ड मे विवाहोपरान्त महावल एव मलयसुन्दरी के वियोग, उन पर आने वाले विविध कष्टो और सकटो का वर्णन है। चतुर्थ खण्ड के प्रारम्भ मे 8 दोहे, फिर राधेश्याम तर्ज मे 515 छन्द और अन्त मे 14 दोहे हैं। इसमे सागरतिलकनगर के सेठ बलसार और राजा कदप की कामुकवृत्ति, मलयसुन्दरी और महावल का साहसपूर्ण सकट झेलते हुए पुर्नमिलन, अन्त में सयम-ग्रहण और आत्म-कल्याण के साथ लोक कल्याण का वर्णन है।

यह रचना धार्मिक, पौराणिक कोटि की रचना है। इसका कथानक कल्पना कुतूहल, परम्परा और विविध कथानक रूढियो से अनुस्यूत है। कवि ने पारम्परिक कथासूत्रो का पद्यबद्ध किया है। यह कथा मुख्यत चम्पानगरी, पृथ्वीस्थाननगर, सागरतिलकनगर स सबधित है। राजा वीरधवल और उसकी पटरानी चम्पक माला की पुत्री मलयसुन्दरी और उसकी विमाता कनकवती की कथा का सूत्र चम्पानगरी से जुडा हुआ है। पृथ्वीस्थाननगर का राजा शूरपाल और उसकी पटरानी पद्मावती का पुत्र राजकुमार महावल है। महावल और मलयसुन्दरी के प्रेमोदय और प्रेम-विकास के साथ कथा आगे बढती है। सागरतिलकनगर के सेठ बलसार और राजा कदप के द्वारा मलयसुन्दरी को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए कई प्रलोभन और कष्ट दिये जाते है, पर अन्तत मलयसुन्दरी अपने शील सयम पर स्थिर रहती हुई पवित्र प्रेम का निर्वाह करती है। महावल भी अनेक कष्टो मे गुजरता हुआ अन्तत मलयसुन्दरी को प्राप्त करता है। मुनि चन्द्रयश से पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनकर मलयसुन्दरी और महावल तथा उनके माता-पिता सयम-पथ पर अग्रसर होते हैं। इस प्रकार सयम-तप के माहात्म्य के साथ कथा सम्पन्न होती है।

कथानक घटना बहुल, घुमावदार, रोचक, औत्सुक्यवर्द्धक और रहस्य-रोमाच से परिपूर्ण हैं। कथा-निर्माण मे कथानक रूढियो का विशेष सहारा लिया गया

नहीं शत्रु से भी करते वो, पुत्र वधू के साथ किया ।
पत्थर पड़ा हमारी मति पर, उचितानुचित न ज्ञात किया ॥१४३॥

रानी ने उठ मलय वधू को, गोदी में भर प्यार किया ।
प्रकृति ने ऐसा करने का, माता को अधिकार दिया ॥१४४॥

मुख के शब्द रहे मुख भीतर, रहे नही निकले वाहर ।
शरम सभी को आती भैया !, नारी हो चाहे हो नर ॥१४५॥

नेत्र लजीले होने पर भी, आंसू टप टप टपक पड़े ।
लगे भिगोने देह वसन-मन, बन बूँदों में बड़े-बड़े ॥१४६॥

मां ने कहा अगर तू कहती, हमें नहीं आता विश्वास ।
जो कुछ हुआ हुआ पर सारा बना रहेगा शुभ इतिहास ॥१४७॥

पुण्य शेष हैं अभी हमारे, पुत्र मिला मिल गई बहू ।
हमें हमारे अपराधों की, सजा न देगी नई बहू ॥१४८॥

राजा ने फिर पूछा सुत से, बनकर नाग जिया कैसे ।
उठते ही रहते हैं मन में, प्रश्न कई ऐसे-ऐसे ॥१४९॥

नाग पवन आहारी बनकर, सुख पूर्वक दिन किया व्यतीत ।
हुई शाम वो योगी आया, वही जानता सारी रीत ॥१५०॥

दूध आक का घिसा तिलक पर, अहि से नर बन हुआ खड़ा ।
साध्य स्वयं में वहुत बड़ा है, उसका साधन हुआ बड़ा ॥१५१॥

माने गए बड़े तीनों ही, औषधि वैद्य तथा अनुपान ।
अणुओं में भी महानता है, यथा स्थान तृण क्या न महान ॥१५२॥

कालवेलिये आए गिरि के, विल से पकडा मन्त्र पढे ।
घट मे डाल रखा मन्दिर मे, मलया के कर इधर वढे ।।१३३।।

परिचित जान प्राण से प्यारा, मुह से हार निकाल लिया ।
दिव्य दिखाते हुए पुरुष के, गले प्यार से डाल दिया ।।१३४।।

नितविनी वन-गया वही नर, नरवर ने फिर पूजा नाग ।
कालवेलियो से कह कर के, विल मे फिर करवाया त्याग ।।१३५।।

कथा नही यह आत्म कथा है, अपनी वीती वात कही ।
मलया सच मच मान रही जो, सुख मे दुख मे साथ रही ।।१३६।।

कैसे वना पुरुष से नारी ?, प्रभु ने प्रश्न किया सुत से ।
सुत का प्रमुख प्रमुख सुख दुख सव, नृप ने श्रवन किया सुत से।।१३७।।

मध्य रात्रि मे कदली वन मे, गया अकेली छोड इसे ।
नर का रूप वना पहनाये, वस्त्राभूपण जोड इसे ।।१३८।।

नव नर जान दिया नर वर ने, दिव्य दण्ड इसको ऐसे ।
सर्प रूप खुद खडा हुआ आ, मरे निरपरावी कैसे ।।१३९।।

मैने थूक लगाकर इसका, तिलक भाल से साफ किया ।
नर से नारी वनी देख लो, कुदरत ने इन्साफ किया ।।१४०।।

सुन वर्णन आश्चर्यान्वित वन, पुत्र वधू से प्यार करे ।
करो प्रणाम मलया से ऐमा, शुभ सकेत कुमार करे ।।१४१।।

सास,ससुर को,पूज्य जनो को,करे प्रणाम मलया झुक कर ।
आशीसो का ढेर मिला वो, उठा रही है रुक रुक कर ।।१४२।।

गये सभी उठ साथ देखने, योगी वाला सुन्दर स्थान ।
योगी का तन अग्नि कुण्ड में, स्वर्ण पुरुष बन पड़ा महान ॥१६३॥

राजा ने उठवा कर उसको, राज खजाने भिजवाया ।
भाग्य प्रबल होने पर ऐसे, घर बैठे मिलती माया ॥१६४॥

स्वर्ण पुरुष को पांवों से ले, सिर तक काटा जाय भले ।
उतना ही बढ़ जाय रात में, फिर काटो तैयार मिले ॥१६५॥

अगर भूल से सिर कट जाए, तो न बढ़े वह पुरुष प्रधान ।
विधि विधान बिना समझे ही, करो साधना नहीं महान ॥१६६॥

राजा, रानी, मलय, महाबल, राजमहल में अथ आये ।
दश दिन का वर्द्धापन उत्सव, सकल राज्य में करवाये ॥१६७॥

पुनर्जन्म सा मान स्वय का, हर्षित अन्तर से नरवर ।
प्रजा प्रेम की तान छोड़ती, गर्वित अद्भुत किस्मत पर ॥१६८॥

मलय केतु अथ पता लगाने, पहुँच गया पुर पृथ्वी स्थान ।
बहन और बहनोई से मिल, मन में पाया हर्ष महान ॥१६९॥

सूरपाल राजा से मिलकर, कहे कुशल संवाद सकल ।
मधुर प्रेम संबंध हमारे, बने और दृढ़तम अविकल ॥१७०॥

हुआ आगमन अकस्मात सब, बात सुनाई साले से ।
बरसाती पानी बह आता, बाहर ज्यों परनाले से ॥१७१॥

इसने कहा शीघ्र मैं जाऊँ, कहूं कुशल सन्देश उन्हें ।
अपनी चिन्ता हमें नहीं है, चिन्ता है सविशेष उन्हें ॥१७२॥

मैने वो ही शव ला सौपा, विधि की फिर पहले वाली ।
उठकर फिर गिर जाता मुर्दा, गया परिश्रम सब खाली ॥१५३॥

आधी रात वीतने पर अव, ऐसा शब्द पडा आ कान ।
शव अशुद्ध होने से योगी ! सिद्ध न होगा मत्र महान ॥१५४॥

कुपित देवता ने योगी को, गिरा कुड मे जला दिया ।
मुझे वाध लटकाया तरु पर, नही जलाया भला किया ॥१५५॥

नागपाश से वाधा बोली, सुन्दर नर को मारे कौन ।
उडी देवता अतरिक्ष मे, रहना पडा मुझे भी मौन ॥१५६॥

मुर्दा वही आ गया उड कर लटक गया फिर तरु वर पर ।
शव अशुद्ध रहा कैसे ?, समझाये हम को श्री नरवर ॥१५७॥

कटा दात से नाक मुह मे, होगा उस नारी वाला ।
इसीलिए मुर्दा न शुद्ध था, उत्तर समुचित दे डाला ॥१५८॥

वोले लोग चलो पतियाये, है क्या शव के मुख मे नाक ।
देख सभी सच मान गए फिर, सुनने लगे लगाकर ताक ॥१५९॥

नागपाश फिर कैसे टूटा, वत्स ! प्रश्न का दे उत्तर ।
लम्बी पूछ लटकती मुह पर, मैंने ली मुख के भीतर ॥१६०॥

दवा दात से लगा चवाने, पीडित होकर भागा नाग ।
विप न चढा मेरे तन पर, मै जीवित वचा वडा सौभाग ॥१६१॥

निशि के शेप भाग फिर वीते, आये आप सभी राजन् !
वटई को वुलवा तुडवाकर, दूर किए सब दृढ वन्धन ॥१६२॥

योग्य पुत्र से, पुत्रवधू से, आशान्वित हों सास ससुर ।
चिन्ता रहित जिए निज जीवन, सुने न कानों से धुरधुर ॥१८३॥

हाथ मिलाने से ही धुलते, बात बड़ी अनुभव वाली ।
एक हाथ से वजे न ताली, करो बात चाहे खाली ॥१८४॥

अगली पीढ़ी, पिछली पीढ़ी, बैठे, समझे, झुके, मिले ।
माली रखवाली न मिले तो, क्या डाली पर फूल खिले ॥१८५॥

स्थिति सम्पन्न विषम हो चाहे, सुख दुख बांटे सम सारे ।
तू-तू, मैं-मैं, कभी न होवे, लगे नहीं कोई खारे ॥१८६॥

एक सभी हों, नेक सभी हों, मति गति एक एक अनुमान ।
सहमति अनुमति से वन जाए, उनमें कोई आगेवान ॥१८७॥

परामर्श दें, परामर्श लें, सभी सदस्य सहर्ष सदा ।
'गणि-मणि' उस स्थल पर न टिकेगी, आई हुई विकट विपदा ॥१८८॥

कहे मलय से वो जो आती, कटी नाक वाली नारी ।
तुम्हें अकेली छोड़ गया था, मैं इसका बन उपकारी ॥१८९॥

मलया बोली ये है वो ही, जिसे बहाया था जल में ।
कनकवती आ रही कहां से, राजमहल में इस पल में ॥१९०॥

गुप्त बात कुछ कहने को ये, आई होगी प्रिय के पास ।
गुप्त बात कहने वाला नर, करता है पूरा विश्वास ॥१९१॥

अगर मुझे पहचान गई तो, कह न सकेगी मन की बात ।
मैं पर्दे के पीछे जाऊँ, मन से अनुमति दें जो नाथ ॥१९२॥

मलय महाबल ने मिलकर के, नमस्कार अथ कहलाया।
करे न चिन्ता हम है सकुशल, रखना दया मया छाया ॥१७३॥

सकुशल घर आ मलयकेतु ने, समाचार सब सुना दिए।
चिन्तित अतिशय मात-पिता को, अति आनन्दित बना दिए ॥१७४॥

नव दंपति महलो मे बैठे, हुए मनाते मन आनन्द।
वातायन से बहकर आता शीतल पवन सुगन्धित मन्द ॥१७५॥

पार्श्व-स्थित उपवन अति शोभित, सुमनस लुटा रहे मकरंद।
मधुपवृंद स्वच्छन्द घूमता, सहता नही समय प्रतिबन्ध ॥१७६॥

सहज वसंत सुहाना सब मन, विरह व्यथा का करता अंत।
अंत नही सुषमा गरिमा का, महिमामय ऋतुराज अनंत ॥१७७॥

स्थिर न वचन मन तन अस्थिर बन, अस्थिर करे शयन आसन।
स्थिर आलिंगन, भुजबंधन, अस्थिर अवलोकन भाषण ॥१७८॥

बीती स्मृतियो मे खो जाते, हो जाते जब वार्ता मग्न।
घबराहट आहट मे हटकर, करते चालू वार्ता भग्न ॥१७९॥

वर्तमान पर ध्यान लगाकर, धरते मन अभिमान नही।
अभिमानी का अज्ञानी का, मान नही प्रतिमान नही ॥१८०॥

समय अनागत के स्वागत का, पथ प्रशस्त करे जो नर।
उसको ही इतिहास जगत मे, जीवित रखता किए अमर ॥१८१॥

सुबह-सुबह उठ मात-पिता के, चरणो मे झुक करे प्रणाम।
पूछे, बांटे सुख दुख समझे, भागे नही करे आराम ॥१८२॥

मैं न जानती इसका कारण निष्कारण वे क्यों दुश्मन।
जैसे आप बने हो राजन्! निष्कारण मेरे सज्जन ॥२०३॥

यक्ष धनंजय के मन्दिर तक, बहती पेटी पहुंची प्रात।
लोहक्षुर तस्कर ने उस तक, लंबाया लेने को हाथ ॥२०४॥

ताला तोड़ा मैं निकली वो, मुझे ले गया अपने घर।
गिरि अलंब गुफा के अन्दर, दिखलाया अपना मन्दिर ॥२०५॥

जहां चोर ने छिपा रखा था, लूट पाट का सारा माल।
वे सब स्थान दिखाए मुझको, पूरी मेरी की संभाल ॥२०६॥

मेरा मन लग गया वहां पर, बीते सुख से युगल प्रहर।
किसी कार्यवश मुझे छोड़कर, बाहर निकल गया तस्कर ॥२०७॥

पकड़ा गया राजपुरुषों से, मिली मौत की सजा उसे।
जो इसका दुश्मन था कोई, आया पूरा मजा उसे ॥२०८॥

वड़ तरु की शाखा से उलटा, लटकाया शव तस्कर का।
मैंने निज आंखो से देखा, दृश्य भयानक बाहर का ॥२०९॥

रोती हुई गई मिलने को, आगे है सब तुम्हें पता।
मेरा परिचय पत्र स्वयं ने, अलिखित मुख से दिया बता ॥२१०॥

चलो आप वो धन ले लो हो, जिसका उसको लौटा दो।
हित न साध सकता वो पैसा, पुरुष स्वयं जो खोटा हो ॥२११॥

इसके मुख से नृप के सम्मुख, पुनः कहलवाया सब हाल।
नृप ने जा ले धन था जिसका, लौटाया है उनको माल ॥२१२॥

द्वारपाल से आज्ञा मगवा, आई बैठी पा आमन।
नृप ने कहा कौन आप दे, परिचय पत्र तथा भापन ॥१९३॥
छिन्न नासिका स्त्री ने अपना, परिचय देना किया शुरु।
सुनने वाला स्वय महावल, इम नारी का बडा गुरु ॥१९४॥
वीरधवल राजा की रानी, कनकवती है मेरा नाम।
निष्कारण नृप कोप देखकर, निकली ठुकरा भोग तमाम ॥१९५॥
एक विदेशी रसिक युवक मे, परिचय प्रेम हुआ तत्काल।
कर मकेत नदी के तट पर, मिली स्वय जा सध्याकाल ॥१९६॥
उमने तस्कर भय दिखलाकर, जो कुछ भी था मेरे पास।
वो मव लिया दिया है पूरा, तन मन धन जीवन विश्वास ॥१९७॥
"पेटी मे घुस" रहना बैठे, जब तक तस्कर का डर है।
मैं घुस गई उमी पेटी मे, धन की गठरी अन्दर है ॥१९८॥
पेटी को कर बन्द लगाया, ऊपर से उमने ताला।
सकेतित नर आया कोई, उमका ही मिलने वाला ॥१९९॥
दोनो ने मिल उसे उठाया, नदी वेग मे वहा दिया।
आश्चर्यान्वित कहे महावल! कार्य भयकर अहा किया ॥२००॥
किसी एक अज्ञात व्यक्ति के, साथ करे ऐसा अन्याय।
उन्हे दण्ड दिलवाने का कुछ, सोचा तुमने नही उपाय ॥२०१॥
देख कभी पहचान सकोगी ?, आकृति गति से बोली से।
अभद्रता क्यो बरती उनने, भारतीय स्त्री भोली से ॥२०२॥

है। राजा का नि:संतान होना, देवी के प्रसाद से युगल संतति का जन्म होना, सौतिया डाह, किसी असुरदेव के अभिशाप से नगर का उजड़ना, किसी रसायन द्वारा लोहे का स्वर्ण मे बदलना, राक्षस द्वारा किसी सुन्दरी को बंधन मे डालना, राक्षस को मार कर सुन्दरी को बंधन मुक्त करना, देव-देवी, विद्याधर या तपस्वी योगी द्वारा अभिमंत्रित जल देना, उसके प्रभाव से रोग दूर होना या जलन मिटना, देव-देवी का प्रसन्न होकर विविध प्रकार की विद्याएं देना, उनके प्रभाव से रूप परिवर्तन होना, स्त्री का पुरुष में और पुरुष का स्त्री में बदलना, चूर्ण आदि छिडक कर दूसरे का रूप परिवर्तित कर देना, हार आदि कोई वस्तु देना, जिसके साथ रहते सब प्रकार की मनोकामनाओ का पूर्ण होना, उसके खो जाने पर विविध प्रकार के संकट आना, लक्कड या काठ के संदूक में बंद कर किसी स्त्री या पुरुष को नदी मे बहा देना, किसी राजा या राजकुमार को उसका मिलना, दोनों का मिलन-संयोग होना, प्रेम पात्र का वियोग होने पर दुख में वन-वन डोलना, आत्मदाह की तैयारी करना। किसी शकुनशास्त्री या ज्योतिषी द्वारा मंगलसूचक भविष्यवाणी करना, प्रेम पात्र का मिलना, पत्र द्वारा संदेश-प्रेषण, स्वयवर की रचना, ऐन मौके पर प्रेमी का आकस्मिक रूप से उपस्थित होना, देव या विद्याधर द्वारा किसी को उठा कर ले जाना, उसे कुए समुद्र या वृक्ष पर गिराना, गिरते हुए को अजगर द्वारा निगलना, साप की मणि के प्रकाश मे नगर या राजप्रासाद मे पहुंचना, वहां बिछुडे लोगों से मिलना, नामांकित मुद्रिका पाकर रहस्य का प्रकट होना, विष चढना और उतरना, मुर्दे का बोलना, किसी बात के लिए मना करना, मना करने पर भी कार्य करने से दुर्दशा होना, पुत्र का पिता से और दामाद का श्वसुर से लडना, रहस्य प्रकट होने पर परस्पर मिलना और आनन्द मनाना, स्त्री को पक्षी द्वारा उडाकर ले जाना, बेमौसम में मौसमी फल होना, ज्ञानी मुनि का मिलना और पूर्व जन्म का वृत्त सुनाना, उसके प्रभाव से जाति स्मरण ज्ञान होना, ज्येष्ठ पुत्र को राज्यभार सौंपकर दीक्षा अंगीकृत करना पूर्व जन्म के प्रतिशोध के कारण विभिन्न प्रकार के उपसर्ग, परीषह मिलना, समभावपूर्वक उन्हें सहन करना, साधना-पथ पर बढ़ते हुए आत्म-कल्याण के साथ लोक-कल्याण करना, शुद्ध-बुद्ध-मुक्त होना आदि कथानक-रूढ़ियो से इस रचना का

जिसका कोई वना न स्वामी, वो धन गया खजाने मे ।
इसे वहुत धन दिया नृपति ने डर न इसे धन पाने मे ॥२१३॥
कर शुभ कार्य कुमार महावल, आया ये स्त्री आई साथ ।
मलया सुन्दरी को देखा है, रही न अक्कल इसके हाथ ॥२१४॥
मरी नही ये ? जीवित है यो, पहन रखा है वो ही हार ।
पूछू करके पूछ न पाई दवा दिये दिल वीच विचार ॥२१५॥
अगर इसे पूछूगी तो ये, वाते सारी खोलेगी ।
मेरी जैसी ही नारी है, मुह से खारी वोलेगी ॥२१६॥
उन्ही दुश्मनो ने लाकर ये, सौपा होगा इसको हार ।
या इनने ही मेरे कर, से छीना छल कर नये प्रकार ॥२१७॥
मलय सुन्दरी ने पूछा है, नकटी उस स्त्री से ऐसे ।
विना वादलो वृष्टि तुल्य तुम, यहा पहुँच पाई कैसे ॥२१८॥
प्रिये ! न पूछो पूछा मैने, मैं पीछे वतलाऊगा ।
समय वहुत हो गया इसे मैं, स्थान स्वय दिखलाऊगा ॥२१९॥
खाली पडा मकान दे दिया, किया दया लाकर उपकार ।
दुष्ट दुष्ट ही होता उसका, कोई कैसा करे सुधार ॥२२०॥
चित्त-अगीठी मुह पर मीठी, छिद्र ढूढती रानी का ।
निम्नस्तर पर वहने वाला, जाय स्वभाव न पानी का ॥२२१॥
ऐसे आती ऐसे जाती, रहती ऐसे वनी सुशील ।
पूर्णतया विश्वासपात्र के, लिए सुने दे कौन दलील ॥२२२॥

सुख से समय बीतने पर, अथ बनी सगर्भा मलया जी ।
स्वयं महाबल महल सकल सुन, जान हुआ राजी राजी ॥२२३॥
मनोरथों का उठना पूरा, होना कोई नया न काम ।
कहती स्वयं और सब उसको, कहते करने को आराम ॥२२४॥
धीरे चलो उठो धीरे से, बैठो सोवो धीरे से ।
धीरे खावो गावो धीरे, ऊभी होवो धीरे से ॥२२५॥
शिशु उदरस्थ स्वस्थ रह पाए, इसमें ही है लाभ महान ।
असावधानी से हो जाता, शिशु का माता का नुक्सान ॥२२६॥
नृप ने कहा राज्य सीमा पर, पल्लीपति करता नित लूट ।
उस पर करो चढाई बेटे !, जल्दी फिर वो सके न उठ ॥२२७॥
सुत हां करके गया महल में, कही प्रिया से सारी बात ।
हाथ जोड़कर मलया बोली, मैं भी साथ चलूंगी नाथ ॥२२८॥
जब भी रही अकेली दुःख में, मुझे धकेली किस्मत ने ।
प्रिय ने कहा प्रसूति समय को, रोका कभी मोहब्बत ने ॥२२९॥
विजय प्राप्त कर आऊँगा मैं, तुझे न विपदा खायेगी ।
भाल तिलक वाली गुटिका लो, काम कभी ये आयेगी ॥२३०॥
नैनों में जल क्षीण मनोबल, मलया ने दी विदा तुरन्त ।
सेना सहित स्वयं नरपति सुत, चलता सीमा वाले पंथ ॥२३१॥
देख अकेली कनकवती आ, गई महल में उसके पास ।
मन बहलाने लगी बात से, उसको होने दी न उदास ॥२३२॥

रानी बोली रजनी मे भी, मेरे पास चली आना।
दिन मे दिल बहलाया जैसे, रजनी मे भी बहलाना ॥२३३॥
"पडी हाथ से पय मे शक्कर" जैसे हो ये बात हुई।
कनकवती ने सोचा रानी, मलया अपने हाथ हुई ॥२३४॥
अब बदला ले लूगी पिछला, मरवा डालूगी बेमौत।
परवानो के लिए बहुत ही, महगा दीपक का उद्योत ॥२३५॥
आई, रही, रात मे सोई, उठी सवेरे हँस बोली।
राक्षसणी रजनी मे आती, तुझे सताने को भोली! ॥२३६॥
मुझे जागती जान भगी वो, कुछ न उपद्रव कर पाई।
जो तूं कहे उसे दू शिक्षा, लिख दू उसकी भरपाई ॥२३७॥
भूत-प्रेत-डाकण-साकण के, मत्र तत्र है विविध प्रकार।
मैंने साध रखे वे सारे, मेरे को वे करें जुहार ॥२३८॥
रूप राक्षसी का रच करके, रहना होगा उसके साथ।
नगी होकर स्वय नाचना, करना उधी-सूधी बात ॥२३९॥
तू न डरे तो, हा उचरे तो, करू आज ही मैं ऐसा।
पैसा लू जो मैं तेरे से, प्यार हमारा फिर कैसा ॥२४०॥
गई नृपति को मुलगाने अथ निश्चित कर सारा प्रोग्राम।
मलय सुन्दरी को मरवाना, बुरी तरह से कर बदनाम ॥२४१॥
दैववशात् नगर मे चलता, रोग महामारी का कोप।
दस पन्द्रह मौते नित होती, सहे प्रकृति सारे आरोप ॥२४२॥

कुछ कहने को समय दीजिए, और स्थान भी दो एकान्त ।
बात प्रगट हो जाने पर नर, शरमा मर जाते संभ्रान्त ॥२४३॥

नृप ने कहा अभय है तुझको, तेरा हूँ मैं रखवाला ।
प्रतिभावाली हिम्मतवाली, हितैषिणी हो तुम बाला ॥२४४॥

पुर में अभी महामारी का, फैला बहुत जोर से रोग ।
रोग प्रभावित नित दस पन्द्रह, मरते लोग जानते लोग ॥२४५॥

किसी राक्षसी स्त्री ने सारा, बड़ा उपद्रव मचा रखा ।
पुर को निर्जन कर देने का, अपने मन में जंचा रखा ॥२४६॥

अगर राजकुल में ही हो वह, उसे मौत का देकर दंड ।
प्रजा बचाना प्रजापाल का, धर्म यही कर्तव्य अखंड ॥२४७॥

नृप ने कहा कौन है कुल में,उसे मार दूं मैं तत्काल ।
जनता के संरक्षण का है, मेरे सम्मुख प्रमुख. सवाल ॥२४८॥

गुलाब में काँटो जैसी है, पुत्र वधू मलयारानी ।
आज रात में आप देखना, जो न जँचे मेरी वानी ॥२४९॥

रुप राक्षसी का कर निशि में, घूमेगी वो चढ छत पर ।
मंद मंद फुत्कार करेगी, फैलेगी मारी घर घर ॥२५०॥

पकड़ोगे जो उसी समय तो, करे उपद्रव कुछ तुम पर ।
सुवह पकड़वाना सुभटों से, तुम्हे नहीं फिर कोई ड़र ॥२५१॥

राजा बोला किसी व्यक्ति के, सम्मुख मत कहना ये वात ।
बात छकन्नी हो जाने पर, नहीं किसी के रहती हाथ ॥२५२॥

यदि मैं कहती अन्य किसी को, तो न आपसे कहती आ ।
इतनी मूर्ख नही हू राजन् !, घोले लिए धान्य खा-खा ॥२५३॥
नृप के भरकर कान स्थान पर, कनकवती सत्वर आई ।
रूप राक्षसी का रचने का, सर सामान स्वय लाई ॥२५४॥
हुई रात महलो मे आई, रानी से बोली ऐसे ।
तू अदर जाए ना जब तक, बनू राक्षसी मैं कैसे ॥२५५॥
लिया एक कर मे धर खप्पर, खड्ग दूसरे कर में धर ।
लबे दात लगाये बाहर, वस्त्र नही नीचे ऊपर ॥२५६॥
चित्र विचित्र रग से कर तन, लगी घूमने चढ छत पर ।
राजा नियत समय पर छिपकर, रूप भयकर निरखे डर ॥२५७॥
जैसा सुना रूप है वैसा, वह राक्षसी है मेरी ।
इसे पकडवाने मे कैसे करू सवेरे तक देरी ॥२५८॥
सुभटो मे दे दिया हुक्म जा, पकडो बाधो रथ मे डाल ।
इसे मार डालो वन मे जा, ये राजाज्ञा लो सभाल ॥२५९॥
गये सुभट मिल घेर महल को, घुसने लगे मचा कर शोर ।
कनकवती मलया से बोली, तेरे सिवा न मेरा ओर ॥२६०॥
अभी अभी ये आयेगे ले, पकड मुझे ले जायेंगे ।
आज्ञा बिना यहा रहने का, इक आरोप लगायेगे ॥२६१॥
मलया ने नगी हालत मे, मजूषा मे बन्द किया ।
सुभट देख चक्कर मे आए रूप नया स्वच्छद किया ॥२६२॥

सुभटों ने मलया रानी को, मूल रूप में देख लिया।
रूप राक्षसी रखने का मन, अधिक नहीं अविवेक किया ।।२६३।।

कहा एक ने इसे ले चलो, हमें मिला है राज्यादेश।
बहस करे क्यों पेश करे क्यों, उलटे सुलटे तर्क विशेष ।।२६४।।

कहने लगे पापिनी! कब तक, नर सहार करेगी तू।
हम मारेंगे ले जा वन में, अपने आप मरेगी तू ।।२६५।।

बांध बंधनों से मलया को, महलों से अब लिया घसीट।
नोंक झोंक करने वाले को, खानी पड़ती भारी पीट ।।२६६।।

रथ में बिठला अंधेरे में, निकल पड़े सब बन की ओर।
जिसे कहा जा सकता ऐसे, वन है गहन घोर से घोर ।।२६७।।

गर्भवती मलया ने सोचा, कैसा खड़ा हुआ उत्पात।
अकस्मात् ही हो जाता है, वज्रपात या उल्कापात ।।२६८।।

गति विचित्र बड़ी कर्मों की, मैंने क्या अपराध किया।
अपने किए हुए कर्मों को, एक एक कर याद किया ।।२६९।।

किसी जन्मकृत अशुभ कर्म का, उदयमान मानूं संतोष।
राजाज्ञा को इन सुभटों को, परिस्थिति को दूं कैसे दोष ।।२७०।।

धीरज धर कर कष्ट समागत, सहूं वज्र सम कर छाती।
विधि निर्धारित विधि होती है, पंक्ति श्लोक की दुहराती ।।२७१।।

खड़ा किया रथ अथ सुभटों ने, नयन निरख गीले गीले।
यह न राक्षसी लगती ऐसे, विचारते ढीले ढीले ।।२७२।।

ग्रवला पर तलवार चला कर, क्षत्रियत्व क्यो नष्ट करे ।
सत्य स्वरूप समझने का हम, सारे मिलकर कष्ट करे ॥२७३॥

जीवित इसे छोड देने से, मर जायेगी अपने ग्राप ।
इसे मारने का न लगेगा, हमको किसी तरह का पाप ॥२७४॥

छोड इसे ग्रा कहा भूप से, उसे मार कर हम ग्राये ।
ग्रव न महामारी फैलेगी, सूरपाल नृप हर्षाये ॥२७५॥

कनकवती को धन्यवाद, देने को उसकी करे तलाश ।
वो न कही भी मिली कर लिया, सव लोगो ने ग्रथक प्रयास ॥२७६॥

सूना महल महावल वाला, जान उसे करवाया मील ।
ग्रच्छी नही हुग्रा करती है, ऐसे कामो मे दी ढील ॥२७७॥

मलया को मरवा डाला पर, पता किसी को चला नही ।
पता चले जो सव पापो का, जग का मानो भला नही ॥२७८॥

विजय प्राप्त कर पुत्र महावल, ग्राकर नृप को करे प्रणाम ।
काम फतह कर ग्राया, ऐसे,-ऐसे लडा वडा सग्राम ॥२७९॥

उत्सुक मन मलया से मिलने, चला महल की ग्रोर कुमार ।
नृप ने रोक सुनाये पिछले समाचार ग्राकार सुधार ॥२८०॥

नि श्वासो के साथ वात सुन, घिसता दोनो हाथ कुमार ।
मुख से निकल पडी है सहसा, भारी दु ख भरी चीत्कार ॥२८१॥

मेरे ग्राने तक क्या उसको, रोक नही सकते थे ग्राप ।
छिन्ननासिका नारी ने ही, करवाया है सारा पाप ॥२८२॥

बताइये वो कनकवती है, कहां ? करूँ उससे कुछ बात ।
कुछ न बोलते हुए नरेश्वर, उठकर चले पुत्र के साथ ॥२८३॥

नकटी कहीं नजर नहीं आई, भाग गई अन्यत्र कहीं ।
बिना पते का विना टिकिट का पोष्ट करे नर पत्र नहीं ॥२८४॥

महलों के ताले तुड़वाये, कमरों की लेते संभाल ।
इषी स्थान पर अर्धरात्रि में, रूप निहारा था विकराल ॥२८५॥

सभी वस्तुयें उलट पुलट कर, देख रहा है राजकुमार ।
मंजूषा का ताला तोड़ा, देखा अच्छी तरह उघाड़ ॥२८६॥

भूख प्यास से दुर्बल व्याकुल, मरी अधमरी दिखी पड़ी ।
रंगी विविध रंगो से नंगो, आई सबको शरम बड़ी ॥२८७॥

उसे देखते ही राजादिक स्तब्ध रह गये मन ही मन ।
पुत्र महाबल के मुख से अब, निकल पड़े हैं उग्रवचन ॥२८८॥

इसी राक्षसी को इस स्थिति में छत पर खड़े निहारा था ।
ऐसा ही था अथवा इससे, अधिक अभद्र नजारा था ॥२८९॥

मंजूषा से खींच निकाला, लातों के दो किए प्रहार ।
कनकवती ने हाथ जोड़ कर, अपना दोष किया स्वीकार ॥२९०॥

पश्चाताप हुआ राजा को, अति अविचारित करने का ।
निरपराधिनी और सगर्भा पुत्रवधू के मरने का ॥२९१॥

उलझन भरे प्रसंगों में ही, पता चले मतिमानों का ।
वरना स्थान कहां बन पाये समाज में गुणवानों का ॥२९२॥

उग्र क्रोध की ज्वाला नृप के, मुख से दिलवाती आदेश ।
इसे देश से निकाल दो मुह, काला कर कर काला वेश ॥२६३॥

पुण्य पाप अत्युग्र शीघ्र ही, समग्रता से देते फल ।
देर भले अधेर नही है, आज नही तो ले लो कल ॥२६४॥

आर्तित चिंतित पीडित सुत ने, त्याग दिए चारो आहार ।
व्यथा विवश नीरस जीवन वन, मौन लिया मरना स्वीकार ॥२६५॥

राजा रानी स्वजन सचिवगण, कहे मरेंगे हम भी साथ ।
कुल का कुल विच्छेद हो रहा, घर घर फैल गई ये वात ॥२६६॥

द्वारपाल ने किया निवेदन, निमित्तज्ञ आया है एक ।
सचिवो ने सत्कृत कर पूछा, आप वताये ज्योतिप देख ॥२६७॥

ऐसे-ऐसे काण्ड हो गया, अव सब मरने को तैयार ।
मलया रानो जीवित है या, हुई मौत की कही शिकार ॥२६८॥

देख फलित गणितज्ञ वताता, जीवित है वो मरी नही ।
एक वर्ष के वाद मिलेगी, वात हमारी टरी नही ॥२६६॥

सुधा सदृश सुन वचन स्वय ही, लगा पूछने राजकुमार ।
है वो कहाँ अगर है जीवित, इस पर भी कुछ करो विचार ॥३००॥

उसने कहा, गाव या वन मे, सुखी दुखी अथवा कैसे ।
ये न वता सकता मैं राजन्, प्रश्न कुण्डली से ऐसे ॥३०१॥

नृप ने उन सुभटो को अपने, पास बुलाकर अभय किया ।
क्या तुम उसे मारकर आए, खोजो कर्ता और क्रिया ॥३०२॥

हमें राक्षसी नहीं लगी वह, वन में जीवित तज आये ।
स्त्री हत्या के साथ भ्रूण की, हत्या से हम बच पाये ॥३०३॥

डरते हुए आप से हमने, मिथ्या बात कही सारी ।
आज आप से अभय मिला तब, सही सही स्थिति स्वीकारी ॥३०४॥

कहा कुंवर ने उसी स्थान के, आस पास ढूंढें जाकर ।
पीहर पहुँच गई हो शायद, साथ दयालू का पाकर ॥३०५॥

गवेषणा करने को नृप ने, चारों ओर पठाये नर ।
कुमार से नृप बोले बेटे !, हट तज उठकर भोजन कर ॥३०६॥

कुमार को भोजन करवा कर, सबने ग्रहण किया भोजन ।
जिसे प्रयोजन है जीवन से, उसने यहाँ लिया भोजन ॥३०७॥

गये खोजने को वे आये, लाये कुछ भी खबर नहीं ।
कहे महाबल खबर मिले, क्या किस्मत अपनी जबर नहीं ॥३०८॥

महारण्य में हा-हा करती, मरी प्रिया दुख से मरती ।
हिंसक पशुओं ने आ खाई, जोर अकेली क्या करती ॥३०९॥

उठा ले गया होगा कोई, यौवन के सब हैं दुश्मन ।
भूखी प्यासी फिरती होगी, करती आक्रन्दन रोदन ॥३१०॥

मै जो साथ उसे ले जाता, तो यह स्थिति आती ही क्यों ।
सुख सागर में पलने वाली, पल पल पछताती ही क्यों ॥३११॥

ऊपर नीचे, अन्दर बाहर, वन में राजभवन में भी ।
टिकता नहीं कुमार महाबल, टिके न बेचारे का जी ॥३१२॥

नैमित्तिक को सत्य मानकर, खड्ग हाथ ले खुद निकला ।
जाने वाला स्वयं सोचता, हित अपना अगला पिछला ॥३१३॥

पैदल चलना, भूतल सोना, भोजन मे फल फूलाहार ।
विपत्तियो के मुकावले मे, नही हार करना स्वीकार ॥३१४॥

प्रिय के लिए प्राण न्यौछावर, करने का है अर्थ यही ।
जिसे नही कोई प्रिय उसके, लिए परिश्रम व्यर्थ सही ॥३१५॥

एक वर्ष के वाद मिलेगी, तव तक खोजू वन वन मे ।
राजभवन मे चैन मिले क्या, चैन नही जव जीवन मे ॥३१६॥

यहा नही तो वहा मिलेगी, इधर नही तो उधर कही ।
वन क्यो छोड़ू गिरि क्यो छोड़ूं, छोड़ू छोटा नगर नही ॥३१८॥

वन मे राजपुत्र दुख पाता, राज भवन मे मात पिता ।
मलया के ऊपर से वहती, दु ख सलिल से भृत सरिता ॥३१७॥

दोहे

मलया आई ससुर घर, सुख दुख लाई साथ ।
'मणिप्रभ सागर' ने लिखी, इसमे इतनी वात ॥ १ ॥

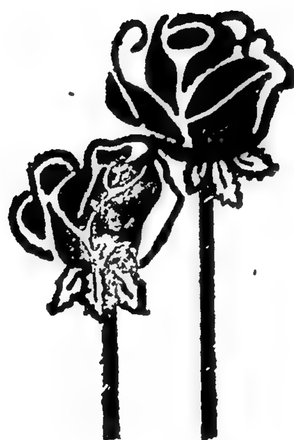
मणिप्रभ रचना मागती, मति श्रम का सयोग ।
विद्वत् श्रम को आँकते, जो विद्वज्जन लोग ॥ २ ॥

कलाकार की कलम ने, क्या कुछ किया कमाल ।
कविजन कह उठते स्वत , उठने दे न सवाल ॥ ३ ॥

खण्ड तीसरे का किया, यहाँ समापन आज ।
'गणि मणिप्रभ' महाराज को सुनता सकल समाज ।।४।।

प्रतिभा की हो प्रबलता, पंडितता हो साथ ।
'मणि' तब भी ओपे नहीं, अहंकार की बात ।। ५ ।।

भाषा विमल प्रभात सी, शैली उजली रात ।
''मणिप्रभ'' ने जानी नहीं, अहंकार की बात ।। ६ ।।



ताना-बाना बुना हुआ है । इस प्रकार के कथानक की सृष्टि मे अतिप्राकृत तत्वो का महत्वपूर्ण योगदान रहता हैं। प्रस्तुत कथानक म रूप परिवतन, लिंग परिवतन व्यतरदेव, भूत-प्रेत, वेताल, कुलदेवी, चक्रश्वरी देवी की भक्ति, इष्टदेव के पूजन स्मरण, तान्त्रिक साधना, तपस्वी, योगी आदि के चमत्कारपूर्ण घटना-प्रसगो से अतिप्राकृतिक तत्व उभर कर आये है । इनमे कथा मे जिज्ञासा, रोचकता, रहस्यात्मकता, शुभाशुभ कम फलादेश आदि की सृष्टि हुई है ।

यह रास मुख्यत शील निरूपक प्रेमाख्यानक काव्य है । मलयसुन्दरी और महाबल का प्रेम इस कथा का केन्द्र बिन्दु है । प्रेमोदय रूपलिप्सा और सपक सान्निध्य के माध्यम से होता हैं । प्रेम के विकास मे कई प्रकार की बाधाए आती है पर अन्तत प्रेम पकता चलता है और वह शील की कसौटी पर खरा उतरता हुआ सयम और तप मे परिणत हो जाता है । इस प्रकार यथाथ और आदश की कई स्थितिया मे गुजरता हुआ यह कथानक आगे बढता है और अन्तत मगलमय कल्याणमय समाधान पाता है ।

पात्र और चरित्र-चित्रण की दृष्टि मे यह काव्य सफल बन पडा है । इस काव्य म नायक महाबल और नायिका मलयसुन्दरी दोनो की प्रधानता है । कई कवि-लेखको ने इस कथानक का नाम महाबल मलयसुन्दरी चरित्र दिया हैं, पर लगता है इस कृति मे रचनाकार की दृष्टि मे मलयसुन्दरी प्रधान रही है । इसीलिए इसका नाम 'मलयसुन्दरी रास' रखा गया है ।

मलयसुन्दरी सत्य, शील और सौन्दय की मधुर-कोमल सृष्टि है । "मन स कोमल, तन स कोमल कोमल वचनो की भण्डार" उसके नेत्र स्निग्ध और मनोहर हैं । खिले हुए कमल के समान प्रफुल्ल और विशाल, उनमे अद्भुत प्रभाव-शक्ति है— "जिस पर तिरछी नजर पड, वह गिर वहीं होकर घायल" उसकी काया कोमल स्वण के समान सुहावनी, अवयव सुगठित, नासिका सीधी-सरल शुक के समान, अधर अरुणिम और पतले, पर यह सौन्दय व्यक्ति को मोहाभिभूत कर बेहोश नही करता । उसके साथ शील समन्वित है, जो शीतलता और सुरक्षा प्रदान करता है ।

मलय सुन्दरी चरित का, अन्तिम खण्ड अखण्ड ।
रचना के कोदंड[1] से, शोभे "मणि" भुजदण्ड ॥ ८ ॥

तर्ज—राधेश्याम

वन में जीवित छोड़ अकेली, गए सुभट कर दिया विशेष ।
इसके बिना कहे ही उनके, घट में प्रभु ने किया प्रवेश ॥ १ ॥
शून्य अरण्य, रात अंधेरी, गर्भवती मलया रानी ।
कितने कष्ट स्पष्ट दिखते हैं, देख रहे केवल ज्ञानी ॥ २ ॥
सोचे फिर, श्री सूरपाल नृप ! आखिर तुम पछताओगे ।
असलीयत का पता किसी के, द्वारा या खुद पाओगे ॥ ३ ॥
नहीं ले गये अपने संग में, प्रियतम ! मुझको भी रण में ।
किन्तु आपके जाने पर ये, कष्ट भुगतती इस वन में ॥ ४ ॥
विजयी बन घर लौटोगे जब, लोगे महलों की संभाल ।
मैं न मिलूंगी, मैं न दिखूंगी, तब तुम होओगे बेहाल ॥ ५ ॥
मात तात सहजात मिलेंगे, या न मिलेंगे मेरे से ।
पीहर पहुँच निकल पाऊँगी, घिरे घने अंधेरे से ॥ ६ ॥
क्यों जनमी? क्यों नहीं मरी मैं ?,क्यों न कुमारी रही भला?
गर्भवती क्यों बनी? लोग वे, गए नही क्यों दबा गला ? ॥ ७ ॥

---

१. णण

चतुर्थ खण्ड

दोहे

सूरीश्वर जिनकान्ति ने, की अति उज्ज्वल क्रान्ति ।
बिना क्रान्ति के कब मिटी, जन-जन की मन भ्रान्ति ॥ १ ॥

गुरु चरणाबुज रेणु से, मंडित "मणि" का शीश ।
जो कुछ मेरे पास है, सब गुरु की बक्सीस ॥ २ ॥

लिखू, करू, बोलू, सुनू, सोचू, समझू बात ।
मेरे गुरुवर हर समय, रहते मेरे साथ ॥ ३ ॥

मिलन महाबल मलय का, और बडे व्याघात ।
शील लूटने के लिए, मचे बहुत उत्पात ॥ ४ ॥

अंतिम धर्माराधना, और कथा का सार ।
सब कुछ लिखने के लिए, "मणिप्रभ" मन तैयार ॥ ५ ॥

श्रोताओ ! सुनना सरस, कथा भाग अवशिष्ट ।
कर्म धर्म के मर्म से, रचना बडी विशिष्ट ॥ ६ ॥

उठे एक दो तीन कर, कदम कलम के जान ।
सावधान बन जाइये, खडे कीजिए कान ॥ ७ ॥

देखा तो शिशु गोदी में ले, बैठी है उसकी माता।
रूप-रंग-लावण्य अंग पर, नजर बुरी वह दौड़ाता ॥ १८ ॥

बोला आप अकेली वन में, क्या प्रियपति ने दिया निकाल।
रूठ चली आई हो अथवा, लाया कोई डाका डाल ॥ १९ ॥

ऊँचे खानदान की जनमी, लगती हो मुख से ऐसे।
तुम्हें सामना करना पड़ता, इस वन में दुख से ऐसे ॥२०॥

मैं बलसार बड़ा व्यापारी, करने को निकला व्यापार।
यहीं पड़ाव पास में अपना, सुख वैभव धन अपंरपार ॥२१॥

सुख से रहना, खाना, पीना, किसी बात की कमी नहीं।
सुन ली सब बातें मलया ने, बात एक भी जमी नहीं ॥ २२ ॥

मलया ने इसके नेत्रों को पवित्रता से पाया दूर।
इसीलिए ये खड़ा-खड़ा यो, मेरी ओर रहा है घूर ॥ २३ ॥

मैं "मातंग बालिका" घर से आई गुस्सा झगड़ा कर।
तोले परमेश्वर व्यापारी सदा बराबर पलड़ा कर ॥ २४ ॥

मैं न आपके पास चलूँगी, जाऊगी अपने ही घर।
नीची नजरों से ही इसने दिया इसे रूखा उत्तर ॥ २५ ॥

नही किसी से बतलाऊंगा, तेरी जात पांत की बात।
होगा वही कहोगी जो तुम, चलो चलो उठ मेरे साथ ॥ २६॥

ऐसे कहते हुए सेठ ने, गोदी से शिशु को छीना।
चलता बना निधान चुराकर, मां को कर दीना हीना ॥ २७ ॥

फिर सोचा विधि कारण इसमे, श्लोक याद आया आधा।
रोने से दु ख कब कम होता, प्रत्युत बढता है ज्यादा ॥ ८ ॥
रजनी रजनीपति मिल रोये, रोई वो रजनीगधा।
वन का कोना-कोना रोया, रोने का गोरखधधा ॥ ९ ॥
मन की पीडा तन की पीडा, पीडा बढी वचन की ओर।
पीडाओ ने जोर लगाया, पर न पडा चिन्तन कमजोर ॥ १० ॥
दिनपति के स्वागत मे सजकर, उषा आ गई प्राची मे।
कलकत्ता मे होने वाला, होवे नही करांची मे ॥ ११ ॥
सुख से जन्म दिया मलया ने, वन मे प्यारे नदन को।
नदन बिना कौन तोडगा, प्रकृति मा के बधन को ॥ १२ ॥
देख पुत्र मुख सुख का अनुभव, करती अतर आत्मा से।
इसे सुखी रखने की करने, लगी विनति परमात्मा से ॥१३॥
सरिता पर जा अशुचि निवारण, कर फल फूल चुने खाये।
रई-गूद अजवान बनाकर, लाये कौन पिला जाये ॥ १४ ॥
स्तन्यपान दे बडे ध्यान मे, करे स्तनधय का पालन।
विधि के बने विधानो का, विधि विधि से करता सचालन ॥ १५॥
सार्थवाह ने नदी किनारे, वन मे डाला एक पडाव।
लोग घास-इन्धन-पानी का, वन मे जाकर करे चुगाव ॥ १६ ॥
स्वय सार्थपति लोटा लेकर, गया देह चिन्तन हित वन।
वन मे लगा यहाँ पर कोई, पडा हुआ शिशु करे रुदन ॥ १७ ॥

इतने दिन बलसार मानता स्त्री है आखिर लेगी मान ।
किन्तु आज ये लगा समझने, मेरा गलत गया अनुमान ॥ ३८ ॥

आग बबूला बनकर इसने, फिर से बालक छीन लिया ।
बन्द कर दिया कमरे में यों, मलया को अति दीन किया ॥ ३९ ॥

दिया प्रिया को अशोक वन में, पड़ा सवेरे मुझे मिला ।
अपना पालक सुत ये होगा, पालो सुख से खिला पिला ॥ ४० ॥

घरवाली को समझाकर सब, पूछ लिया घर वालों से ।
चला समुद्री यात्रा पर भर, बड़े जहाज मसालों से ॥ ४१ ॥

मलया सुन्दरी को भी गुप चुप, अपने साथ लिया चलते ।
दुश्मन रंग बदलते अपना, जब न मनोरथ हों फलते ॥ ४२ ॥

मलया सुन्दिरी सोचे अब ये, बेचेगा परदेशों में ।
अब मैं बच पाऊंगी केवल, पति के स्मृति अवशेषों में ॥ ४३ ॥

जो होना सो होगा मेरा, दुख से मृत सम जीवित है ।
रोते हुए सेठ से पूछा, कहाँ और कैसे सुत है ॥ ४४ ॥

यदि मेरा कहना मानो तो, तुझे मिला दूं अंगज से ।
मौन बनी सुन दिया न उसको, उत्तर मधु मुख पंकज से ॥ ४५ ॥

पहुंचा बर्बर कूल उतारा, शुल्क दिया, बेचा है माल ।
मलया को भी बेच दिया है, रंगते जो तन रक्त निकाल ॥ ४६ ॥

उनने भी की काम प्रार्थना, पर ये विचलित नहीं बनी ।
महापुरुष ऐसे ही होते, प्रण के धुन के महाधनी ॥ ४७ ॥

जाऊ तो डर मुझे शील का, गये बिना सुत जाता है।
"इत सरिता इत व्याघ्र" न्याय ये, काम यहाँ पर आता है ॥ २८ ॥

पीछे पीछे लगी भागने, पुत्र स्नेह से प्रेरित मन।
घूर-घूर कर सेठ बोलता, स्नेह सने अति मधुर वचन ॥ २९ ॥

गुप्त स्थान मे उसे बिठा दी, पुत्र दे दिया खोले मे।
सेवा मे एक दासी रख दो, बात कही गप-गोले मे ॥ ३० ॥

भोजन-वस्त्र-अलकारो का, ढेर सामने लगा दिया।
मानो सोए हुए भाग्य को, झकझोरा दे जगा दिया ॥ ३१ ॥

पूछा सुन्दरि! नाम बता अब, उसने 'मलया' बतलाया।
ऊँचे कुल वाली होने का निज अनुमान लगा पाया ॥ ३२ ॥

सागर तिलक नगर आ पहुँचा, अपने पुर मे व्यापारी।
मलया के रहने का इसने, गुप्त प्रबध किया भारी ॥ ३३ ॥

गया एक दिन बोला मुझ को, निज स्वामी स्वीकार करो।
मेरे पर मेरे वैभव पर, अपना तुम अधिकार करो ॥ ३४ ॥

तू तेरा सुत होगे मालिक, मेरे पुत्र न होने से।
आओ, हसो, मिलो खेलो तुम, निकल महल के कोने से ॥ ३५ ॥

मलया बोली सुनो सेठ जी! समझदार हो आप बडे।
परनारी के प्यासे बनकर, करो नही ये पाप बडे ॥ ३६ ॥

देह नष्ट होने पर भी, मैं शील न होने दूगी नष्ट।
निर्णय स्पष्ट सुनाती हूँ मैं, बनो आप भी मत पथ भ्रष्ट ॥ ३७ ॥

देवी जैसी लगी दीपने, सागर तट पर लाया मच्छ ।
सागरतिलक नगर का राजा, खाता हवा समुद्री स्वच्छ ।। ५७ ।।

तटवर्ती लोगों ने देखा, गजारूढ़ जन आता कौन ।
गरूड स्थित हरि जैसे कोई, मत्स्यारूढ हुआ सह मौन ।। ५८ ।।

नृप ने कहा, मत्स्य का, नर का, कोई भी कुछ करे नहीं ।
अपने आप इधर आता ये, हम लोगों से डरे नहीं ।। ५९ ।।

तट से थोड़ी दूर खड़े हो, ले शुंडा से दिया उतार ।
तट पर शुद्ध रेत पर लाकर, नमस्कार करता धर प्यार ।। ६० ।।

मुड़कर जल में मग्न बना वह, फिर न नजर में आ पाया ।
मलय सुन्दरी खडी किनारे, ले लावण्यमयी काया ।। ६१ ।।

नारी बहुत मनोहर इसके, तन पर कितने घाव लगे ।
ये न किसी से लड़ने वाली, सीधा सौम्य स्वभाव लगे ।। ६२ ।।

बड़ी सावधानी से लाकर, छोड़ गया वो मत्स्य यहां ।
पुनीत पावन चरणों मे नम, गुप्त हुआ वो मत्स्य कहां ।। ६३ ।।

किसी बड़े बैरी ने इसको, जल में डाल दिया होगा ।
नावा टूट गई होगी या, मच्छ ने पाल लिया होगा ।। ६४ ।।

राजा ने निज परिचय देकर, कहा करो मेरा विश्वास ।
सांस शांति से लेकर कह दो, अथ से इति तक निज इतिहास ।। ६५ ।।

सार्थवाह ने पुत्र छुपाया, भाग्य वहीं फिर ले आया ।
नंदन के दर्शन पाकर मैं, तृप्त करूं मन वच काया ।। ६६ ।।

सूई चुभो चुभो कर तन मे, उनने रक्त निकाला है।
पता नही इससे भी वढकर, क्या कुछ होने वाला है ॥ ४८ ॥

जन्मी कहाँ-कहाँ पर व्याही, आई कहाँ यहाँ पर मैं।
कितनी सही वेदनाये भी, तन मे कोमल अतर मे ॥ ४९ ॥

इक दिन मूर्च्छित पडी धरा पर, इत आया पक्षी भारड।
उसने इसे उठाया समझा, पडा माम का कोई पिंड ॥ ५० ॥

चला पयोनिधि पर से सम्मुख, मिला दूसरा खग भारड।
मास पिंड के लिए मची है, छीना झपटी वडी प्रचड ॥ ५१ ॥

मुह से निकल गिरी वह वाला, 'गजाकार मच्छ[१]' के ऊपर।
सावचेत हो इसने सुमरे, महामन्त्र पद पाच प्रवर ॥ ५२ ॥

सोचा जो ये डुवकी लेगा, मुझे डुवो देगा जल मे।
जव भी मचने वाला होता, प्रलय काल मचता पल मे ॥ ५३ ॥

जोर जोर से महामन्त्र का, सस्वर उच्चारण करती।
सुनकर स्तब्ध हो गया अवर, सागर सागर स्थित धरती ॥ ५४ ॥

गर्दन उठा मत्स्य ने झाका, आका इसका शील स्वभाव।
एक दिशा की ओर चल पडा, जल का ले अनुकूल वहाव ॥ ५५ ॥

मलय सोचती सुखपूर्वक ये, मुझे कहा ले जायेगा।
किसी जन्म के उपकारो का, कुछ वदला दे पायेगा ॥ ५६ ॥

---

१ हस्तिमुख वाले मत्स्य होते हैं।

शालीग्राम सोने सी कोमल, काया पाई मलया ने ।
वट तरु जैसी गहरी शीतल, छाया पाई मलया ने ।।
[पृष्ठ 41]

मलया का यह शील स्वभाव कष्ट-कंटको से अधिकाधिक निखरता चलता है । बलसार सेठ को वह चुनौती देती हुई कहती है:—

देह नष्ट होने पर भी मै, शील न होने दूगी नष्ट ।
निर्णय स्पष्ट सुनाती हूँ मैं, बनो आप भी मत पथ-भ्रष्ट ।।
[पृष्ठ 130]

अपने पति महाबल के प्रति उसकी अनन्य श्रद्धाभक्ति और निष्ठा है । वह पति-परायणा, साहसी नारी है । उसे पूरा विश्वास है कि "अब मैं बच पाऊँगी केवल, पति के स्मृति अवशेषों में ।"

घटना ऐसा मोड लेती है कि अपने पूर्व जन्म का इतिवृत्त जानकर वह साध्वी बन जाती है । उसका साध्वी जीवन निष्कलक और यशस्वी है । वह पद विहार कर जन-जन को तप, संयम और दान, शील का उपदेश देती है । वह स्पष्ट कहती है "वीतरागता ध्येय हमारा, राग-द्वेष से दूर रहे"

जीवन मे जो कष्ट और दु:ख आते है, वे हमारे ही दुष्कर्मो के फल है । हम ही अपने सुख-दुख के कर्ता-हर्ता है । जो विशुद्ध भाव और सरल मन से धर्माराधना मे रत रहता है, वह कर्मो की निर्भरा कर जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है:—

संयम क्रिया सहज बन जाये, दिखाव, बनाव, छुपाव नहीं ।
बनावटी संयम का पड़ता, देखा गया प्रभाव नहीं ।।
[पृष्ठ 177]

मलयसुन्दरी का लौकिक प्रेम अन्ततः लोकोत्तर प्रेम में परिणित होता है ! यह प्रेम तप की अग्नि मे तपा शुद्ध आत्म प्रेम है । शील इसकी सौरभ है ।

मेरे श्वसुर-पिता का दुश्मन, नृप पा परिचय मारेगा।
रग रूप लावण्य शील पर लोलुप नैन पसारेगा ॥ ६७ ॥

दीर्घ सास ले वोली राजन् !, परिचय मत मेरा पाओ।
किस्मत की मारी दुखियारी, नारी को मत शरमाओ ॥ ६८ ॥

जाओ आप हवा खाओ वस, मेरे तक रहने दो वात।
सुनकर सेवक करे निवेदन, सुनो-सुनो ओ दीनानाथ ! ॥ ६९ ॥

क्या करना हे हमे जानकर, दया करो उपकार करो।
इसे शाति सुख पहुचे वैसा, मधुर उचित व्यवहार करो ॥ ७० ॥

नृप ने फिर धीरे से पूछा, भद्रे ! तेरा है क्या नाम।
'मलयसुन्दरी' इतना कहकर, लिया माम ने पूर्णविराम ॥ ७१ ॥

मन मे कुत्सित घृणित वासना, वाणी मे निर्मल व्यवहार।
राजा सोचे निकल न जाए, सहज सहज मे फसा शिकार ॥ ७२ ॥

विठा सुखासन पर महलो मे, लाकर वैद्य वुलाये है।
सरोहिणी जडी के द्वारा, तन के व्रण रुभवाये है ॥ ७३ ॥

दासी दास रखे सेवा मे, दिए प्रचुर वस्त्रालकार।
इसके पीछे वडा हेतु है, ग्रह वासना काम विकार ॥ ७४ ॥

अवसर पाकर नरवर ने खुद, आकर काम याचना की।
साम दाम से दण्ड भेद से, कडी परीक्षा इसकी ली ॥ ७५ ॥

पटरानी वनजा तू मेरी, वनजाऊँ मैं तेरा दास।
मान प्रेम से वरना वल से, करना ही है भोग विलास ॥ ७६ ॥

सुनकर मलया ने धिक्कारा, फटकारा सद्बोध दिया ।
लिया बोध इसने न उसी पर, प्रत्युतर भारी क्रोध किया ॥ ७७ ॥

कहकर राज़ सभा में आया, बैठा करे न किंचित काम ।
इतने में शुक मुख से गिर कर, गिरा पका गोदी में आम ॥ ७८ ॥

अभी बिना ऋतु आम कहां से आया, चिंते पृथ्वीपाल ।
छिन्नटंक गिरि शिखर सुशोभित, बारहमासी पेड़ रसाल ॥ ७९ ॥

शुक मुख में ले खड़ा भार से, गिरा अंक में वो ही आम ।
मैं खाऊं ? या किसी प्रिया के, लिए भेज दूं लेकर नाम ॥ ८० ॥

चर से कहा मलय को दो ये, लाओ अंते उर में आज ।
कामी क्रोधी लोभी नर के, लिए नहीं सामाजिक लाज ॥ ८१ ॥

चर से आम्र प्राप्त कर मलया, हर्षित होकर करे विचार ।
विधि जो कुछ करता वह अच्छा,अच्छाई के त्रिविध प्रकार ॥ ८२ ॥

अब न मुझे डर, नर बन जाऊं, तिलक लगा उस गोली का ।
कोई गाये दीवाली का, मैं गाऊं गुन होली का ॥ ८३ ॥

चर अंते उर में भिजवाकर, गया सूचना देने को ।
इसने नर का रूप बनाया, मन वांछित फल लेने को ॥ ८४ ॥

हल रहा है महलों में वह, देव कुमार समान वहाँ ।
सभी रानियाँ बनी अचंभित, आया पुरुष प्रधान कहाँ ॥ ८५ ॥

नृप के सिवा आज तक हमने, दर्शन किया नहीं नर का ।
आज इसे पाकर हम माने, भला भले परमेश्वर का ॥ ८६ ॥

नर पर मोहित बनी सभी वे, कामवासना उभरी मन ।
कौन इन्हे समझाने जाए, करो न ऐसा पागलपन ॥ ८७ ॥

हाव दिखाती भाव दिखाती, फेंक रही है तीक्ष्ण कटाक्ष ।
मन मे जाने आने तक ये, खुले कर दिए नैन गवाक्ष ॥ ८८ ॥

अंते उर की दशा देखकर, दासी गई भूप के पास ।
युवा पुरुष ड्योढी मे बैठा, करे रानियां हास्य विलास ॥ ८९ ॥

राजा बोला अचरज भारी, अन्दर पुरुष प्रवेश करे ।
अंते उर उस नर के सम्मुख, कामयाचना पेश करे ॥ ९० ॥

उठ आया, आंखो से देखा, समाधान कुछ भी न मिला ।
मानो छाती ऊपर आकर, गिरी अचानक वज्र शिला ॥ ९१ ॥

फिर पूछा, जिस स्त्री को भेजा, है वह कहाँ तलाश करो ।
द्वारपाल ने कहा-यही थी, मेरे पर विश्वास करो ॥ ९२ ॥

राजा ने अब नर से पूछा कौन ? यहाँ आया कैसे ।
उसने कहा, दीखता सब कुछ, प्रश्न पूछते क्यो ऐसे ॥ ९३ ॥

है यह वही सुन्दरी उसने, नर का रूप किया धारण ।
साधारण सी बात नही है, कारण बहुत असाधारण ॥ ९४ ॥

सभव है ये अंतेउर मे रहकर बडा बिगाड करे ।
घुसे खेत मे गोधा तो फिर, रखवाली क्या बाड करे ॥ ९५ ॥

नृप ने कहा राजपुरुषो से, पकडो बाहर करो निकाल ।
नजर कैद कर गुप्त स्थान मे, कही अकेले को दो डाल ॥ ९६ ॥

मलय सुन्दरी ने सोचा मन, आफत आई हुई टली।
लेकिन इसको हथियाने की, नृप की मंशा नहीं फली ॥ ९७ ॥

गया वहाँ नृप पुरुष रूप से, प्रश्न पूछता विविध प्रकार।
कैसे स्त्री से पुरुष बनी फिर, नर से ले स्त्री का आकार ॥ ९८ ॥

कुछ भी उत्तर दिया न उसने नृप का उतरा क्रोध विशेष।
मारा पीटा और घसीटा, करने ऐसा लगा हमेश ॥ ९९ ॥

कितना सहे रहे चुप कितना, सूज गई है सारी देह।
सोचा शील मुझे है प्यारा, मुझे नहीं है प्यारी देह ॥१००॥

भागू छुपकर कहीं करूं फिर देह त्याग कुएँ में गिर।
प्रतिदिन की इस मारपीट से हलका हो जायेगा सिर ॥१०१॥

पहरेदार सो गया इक दिन, निकल पड़ी है छाने से।
पुर से बाहर पहुंच गयी है, मरने की मन आने से ॥१०२॥

सूने जूने मठ की कोई, देख बड़ी दीवार खड़ी।
खड़ी हो गई अंधेरे में, मौत देखने लगी घड़ी ॥१०३॥

वहीं पास में अन्ध कुआँ था, जिसमें बूंद नहीं पानी।
मर जाना अच्छा है ऐसे, सोच रही मलया रानी ॥१०४॥

प्रातः होने पर आयेंगे, पुरुष जुल्म अति ढाहेंगे।
मारेंगे पीटेंगे मेरा, शील लूटना चाहेंगे ॥१०५॥

कुएँ पर हो खड़ी गिन लिया, श्रद्धापूर्वक श्री नवकार।
याद कर रही प्यार, महाबल प्रिय का प्यारा नाम पुकार ॥१०६॥

हे दुर्दैव ! वियोग कराया पतिसे, प्रिय घरवागे मे।
तू वेशर्म हो गया लगता, दुखियो की फटकारो से ॥१०७॥
न्मान्तर मे करवा देना, प्रिय मे मेरा पुनर्मिलाप।
नमस्कार उनको कह देना, मिल जाये जव भी वे आप ॥१०८॥
कहना तेरी यादो मे ही, गिरी कुएँ मे ये मलया।
उससे मिलने वही पहुचना, नया जन्म जव ले मलया ॥१०९॥
कूद पडी ऐसे कहकर के, पुरुप रूप मलया रानी।
सोए हुए महावल ने इत, सुनी प्रिया की मृदुवानी ॥११०॥
लगभग वर्प हो गया पूरा, करते हुए प्रिया की खोज।
मलय सुन्दरी की स्मृतियो का, सिर मे नही उतारा वोझ ॥१११॥
भूख प्यास निद्रा भी त्यागी, त्यागे राजकीय सुख भोग।
चप्पा-चप्पा ढूढ लिया, और पूछलिये दुनिया के लोग ॥११२॥
सागर तिलक नगर था वाकी, यही ढूढने आया चल।
थके हुए नर का थक जाता, वडा मनोवल कायिक वल ॥११३॥
ज्ञानी के वचनानुसार वो, आज मुझे मिल जायेगी।
मुरझी हुई कमल की कलियाँ, पूर्णतया खिल जायेगी ॥११४॥
सध्या हो जाने पर पुर मे, करपाया ये नही प्रवेश।
मठ मे ही रुक गया रात भर, मठाधीश से ले आदेश ॥११५॥
मलया की वाणी सी वाणी, कहाँ कान से टकराई।
प्राण त्यागती हुई बोलती मति विस्मय से चकराई ॥११६॥

मरो नहीं बस रुको एक क्षण, दौड़ा खड़ा कुएँ के पास।
शरण महाबल शब्द सुनाई, पड़ा सुनाई दिया न सास ॥११७॥

उसके पीछे उसी स्थान पर, स्वयं महाबल कूद पड़ा।
शरण महाबल शरण महाबल मद मंद स्वर अर्थ बड़ा ॥११८॥

मूच्छित नर का तन संवाहन, करे महाबल राजकुमार।
अर्द्ध चेतना लौटी उससे, प्रश्न उठाता विविध प्रकार ॥११९॥

कौन आप ? क्यों गिरे कुएँ में ?, किसका शरण लिए जाते।
सुनते ही प्रिय को पहचाना, उलटे प्रश्न किए जाते ॥१२०॥

आप कौन ? कैसे आए हो ?, गिरे कुएँ में क्यों पीछे।
बड़े साहसी लगते हो कुछ, दिखा नहीं ऊपर नीचे ॥१२१॥

मुझे आपसे इन प्रश्नों का, उत्तर पाना बहुत जरूर।
पहले मेरा काम करो ये, तिलक थूक से कर दो दूर ॥१२२॥

उसने अपना थूक लगाकर, तिलक भाल से घिस डाला।
पुरुष रूप हट गया सामने, प्रकट हुई मलया बाला ॥१२३॥

इतने में दीवार छिद्र से, अहि ने मणि से किया प्रकाश।
पति पत्नी का मिलन हो गया, ज्योतिष पर आया विश्वास ॥१२४॥

अकस्मात् अपने सम्मुख यों, मलय सुन्दरी को पाकर।
विधि तू एक प्रमाण मानकर, बोल रहा विस्मय खाकर ॥१२५॥

आँखों में जल, हर्ष हृदय में, मुंह में शब्द नहीं माते।
अपनी अपनी व्यथा सुनाते, अहा-अहा मुख से गाते ॥१२६॥

इसी नगर मे पुत्र हमारा, हमे मिलेगा वो कैसे ।
कैसे हम पहचान सकेंगे, मन शका करते ऐसे ॥१२७॥
पहले इस कुएँ से निकले, फिर सोचेंगे सुत की बात ।
बात बात मे रात गई है, होने आया पुण्य प्रभात ॥१२८॥
मिली सूचना भागी मलया, नरवर अनुपद चल आया ।
कुएँ मे जब इनको पाया, कपटी नृप ने फरमाया ॥१२९॥
रस्से बाध मचिका डाले, दोनो बाहर आ जाओ ।
अभय आपको दिया जा रहा, शरमाओ मत घबराओ ॥१३०॥
मलय महाबल से यो बोली, है कदर्प-वासना अध ।
मेरे लिए यहाँ आ पहुँचा, पहले सोचें करें प्रबन्ध ॥१३१॥
कुएँ मे बाहर तो निकले–, फिर निपटेंगे हम इस से ।
चढो मचिका पर पहले तुम, पूछे यहा कहो किससे ॥१३२॥
अलग अलग माचो पर दोनो, बैठे खीचे ऊपर नर ।
मलया पहले पहुँची नृप ने, लिया निकाल कहा मृदुस्वर ॥१३३।
इधर महाबल ऊपर आया, राजा करने लगा विचार ।
इसके होते हुए मुझे ये, नही करेगी अगीकार ॥१३४॥
इसे डाल दू फिर कुएँ मे, बाहर निकल न पायेगा ।
सड जायेगा मर जायेगा, वहा नही कुछ खायेगा ॥१३५॥
छुरी हाथ ले रस्सा काटा, मच कुएँ मे बोला धम ।
लगी कूदने मलया पीछे, रोक लिया इसको यक दम ॥१३६॥

महलों में लाकर नृप पूछे, कौन साथ में था वो नर।
बहुत वार पूछा पर इसने, दिया नहीं इसका उत्तर ॥१३७॥
जब उसको देखूंगी तब ही, खाऊंगी कुछ पीऊंगी।
वरना मर जाऊंगी राजन् !, मैं न अकेली जीऊंगी ॥१३८॥
ऐसे तैसे दिन बीता है, निशि में इसको सांप डसा।
जहर फैलने लगा देह में, देख दुःख विधि स्वयं हसा ॥१३९॥
महा मन्त्र का स्मरण कियाहै, अंतिम नमस्त्रिया कर ली।
मुझे नाग ने काट लिया यों, लबी आह तुरत भर ली ॥१४०॥
पहरेदार भाग कर आये, पकड़ भुजंगम को मारा।
राजा भी भागा आया सुन, समाचार दुःखद सारा ॥१४१॥
शिथिल पड़ा तन सिर्फ सांस ही, चलता हिलता अग नही।
लगता है ये मर जायेगी, बचने का कुछ ढंग नही ॥१४२॥
पुर में पटह बजाया आखिर, जो इसका विष सके उतार।
गज, नृपकन्या, एक प्रान्त का, मिले उसे उत्तम उपहार ॥१४३॥
उसे रोकने वाला कोई, मिला नहीं नृप हुआ निराश।
अब क्या होगा ? अब क्या होगा ?, बोल रहा ले लम्बे सांस ॥१४४॥
इतने में परदेशी आया, पटह रोकने वाला नर।
आकर बोला, उतार दूगा, अहि का फैला हुआ जहर ॥१४५॥
नृप ने देख इसे पहचाना, ये तो कुएँ वाला है।
कैसे जीवित रह पाया ये, किसने इसे निकाला है ॥१४६॥

अपने भाव छिपाकर बोला, विप का आप करें उपचार।
गज नृप कन्या, एक प्रान्त का, पाये उद्घोपित उपहार ॥१४७॥
वो नर बोला, मलय सुन्दरी, आप मुझे दे देना एक।
मुझे और कुछ नही चाहिए, क्षण मे निर्विप लेना देख ॥१४८॥
अच्छा तुझे यही दे दूगा, कर देना कुछ मेरा काम।
इसने कहा–ठीक कर दूगा, लूगा पहले नही इनाम ॥१४९॥
निर्विप कर मलया को ले घर, लौटूगा यो सोचे मन।
किन्तु विघ्न बाधायें डाले, विधि की गति है परम गहन ॥१५०॥
उसे देखकर सहज परखकर, बोला केवल आता सास।
चेप्टाये रुक गई अक की, जीने का कमती है चास ॥१५१॥
फिर भी कोशिश करता हू मैं, रहे न कोई नर भीतर।
भूमि शुद्व कर मडल लेखन, पूजन आह्वाहन विधिसर ॥१५२॥
मणि प्रक्षालित अभिमन्त्रित जल, बूदे गिरी नयन पर जा।
इधर उधर वो लगी झाँकने, अपनी पलकें अधर उठा ॥१५३॥
मुख मे जल जाने पर आने लगा उसे सुखपूर्वक सास।
अगछिडकने पर अब उसका, हो पाया है विप का नाश ॥१५४॥
मलया ने पूछा, प्रिय! कैसे, निकल कुएँ से आये जी।
कैसे मुझे उबारा? सुनकर, सच सच स्वय सुनाये जी ॥१५५॥
रज्जु काटने से कुएँ मे, गिरा वही वह नाग मिला।
दीवारे कुएँ की देखी, एक स्थान पर दिखी शिला ॥१५६॥

मुष्टि प्रहार शिला पर मारा, द्वार खुला उसके भीतर।
साहसधर कर घुसा द्वार में, आगे वही हुआ अहिवर ॥१५७॥

दीपक कर-धर नर ज्यों चलता, मणिधर मणि का करे प्रकाश।
मुझे स्वयं के पुण्यशेष पर, पूर्णतया आया विश्वास ॥१५८॥

सांप अलोप हुआ आगे जा, चारों-ओर हो गया ध्वांत।
चलता रहा ठोकरें खाता, बन अक्लांत पूर्ण निर्भ्रान्त ॥१५९॥

पाद-प्रहार शिला पर कर फिर, खोल लिया है कोई द्वार।
गर्भाशय से प्राणी सदृश, बाहर आ पाया सुखसार ॥१६०॥

देखी बड़ी लकीर नाग की, आगे बैठा पाया नाग।
उसे मंत्र से कीला ली मणि, मान लिया अपना सौभाग ॥१६१॥

कुएँ से शमसान भूमि तक बिछी हुई यह बड़ी सुरंग।
किसी चोर द्वारा निर्मित यह, गुप्त स्थान पाने का ढंग ॥१६२॥

चोर मर गया होगा ? जिससे, प्रिये ! मार्ग यह बन्द हुआ।
पुर के प्रति प्रस्थान कर दिया, पटह सुना आनंद हुआ ॥१६३॥

वचन बद्ध कर नरवर को फिर, तुझे बनाया विष निर्मुक्त।
सत्य सुनाया बीतक अपना, जैसा भी था सुख दुख भुक्त ॥१६४॥

राजा को अथ बुला लिया है, देखो जहर उतार दिया।
मेरी मलया मुझे दीजिए, जो देना स्वीकार किया ॥१६५॥

नृप पूछे-क्या नाम आपका, उसने सिद्ध बताया है।
नृप ने कहा इसे जीमावो, कल से कुछ ना खाया है ॥१६६॥

इसने मिश्री मिला दूध ला, अच्छी तरह उवाला है।
मलया को मनुहार सहित भर, पाया पय का प्याला है ॥१६७॥

नृप ने पूछा-सिद्ध! आपके, क्या होती है ये वाला।
ये मेरी घरवाली है जी, मैं हूँ इसका घर वाला ॥१६८॥

वचन दिया है देने का पर, देने को जी करे नही।
उचरे नही नकार मुह से, हुकारा भी भरे नही ॥१६९॥

एक काम कर देने का तुम, वचन दे चुके सिद्ध! भला।
मिवा तुम्हारे नही किसी मे, हमने देखी सुनी कला ॥१७०॥

मेरे सिर मे दर्द भयानक, वहुत समय से रहता है।
ऐसे ऐसे मिटने का भी, वैद्य हमारा कहता है ॥१७१॥

उत्तम लक्षण वाला नर जल, स्वय भस्म अपनी लाये।
उसी भस्म के लेपन से, यह सिर वाली पीडा जाये ॥१७२॥

जलो चिता मे, भस्म स्वय की, ला दो मेरी पीड मिटे।
फिर इस मलया को ले जाओ, महलो से ये भीड मिटे ॥१७३॥

सुनकर सिद्ध पुरुप मन सोचे, नृप की नीयत वनी हराम।
मुझसे करने को कहता है, कभी न होने वाला काम ॥१७४॥

काम नही करने से मुझको, नही मिलेगी ये नारी।
विना मरे ये काम न होवे, आई सिर आफत भारी ॥१७५॥

वहुत मोचकर माहस घर कर, कहा, चलो कर दूगा काम।
मुझको मेरी स्त्री दे देना, फिर न और कुछ लेना नाम ॥१७६॥

दुष्टाशय से कपट हंसी हंस, हाँ-हाँ फिर देनी ही है ।
सिर का दर्द मिटाने वाली, रखिया तो लेनी ही है ॥१७७॥

मलया की रखवाली करने, पहरेदार लगाये चार ।
सिद्ध पुरुष के पीछे सारी, सेना लगी लिए हथियार ॥१७८॥

सायं जा शमसान भूमि में, सिद्ध चिता में करे प्रवेश ।
अपनी राख स्वयं लाकर दे, ऐसा दिया गया आदेश ॥१७९॥

मलयसुन्दरी सोचे प्रियतम ! तुम्हें मारने वाली मैं ।
क्यों न मर गई उसी समय पर, जन्म धारने वाली मैं ॥१८०॥

सभी जगह पर हेतु कष्ट की, स्पष्ट बनी हे प्राणनाथ ।
नहीं उबरने का रास्ता पर, उबरे आप भाग्य की बात ॥१८१॥

पर अब चिता लगाकर नर ये, तुम्हें उसी में डालेंगे ।
चारों तरफ खड़े होकर ये, अच्छी तरह खा लेंगे ॥१८२॥

कैसे निकल सकोगे प्रियवर !, क्या ज्वाला सह पाओगे ।
मलया से क्या कह पाओगे, क्या जीवित रह पाओगे ॥१८३॥

ऐसे कहती हुई हाथ में, जल ले अंजलि करे प्रदान ।
जब तक देखूँ नहीं आपको, अन्नजल लेने का पचखान ॥१८४॥

निश्चय कर निश्चेष्ट बन गई, लगी लगाने प्रभु का ध्यान ।
सब का रखवाला है वो ही, अन्तरयामी श्री भगवान ॥१८५॥

सिद्ध पुरुष ने स्वयं भूमि तय, कर अथ चिता सजाई है ।
साहस देख नागरिकता खुद, अपने आप लजाई है ॥१८६॥

कष्टो मे भी शील धर्म की, रेखा से विचलित न बनी।
मर्यादाओ पर मर मिटते, मान, आन के ध्यान धनी ॥
[पृष्ठ 178]

महाबल सच्चे प्रेमी, साहसी, निर्भीक और आत्मबली हैं। उनका शरीर-सौष्ठव इतना प्रभावक और आकर्षक है कि मलयसुन्दरी देखते ही उन पर मुग्ध हो जाती है –

शशि मडल सा है मुख-मडल, कमल समान खिले दो नैन।
इनके दर्शन पाते ही क्यो, बना आज यह मन बेचैन ॥

भुजा दण्ड करि शुण्ड सरीखे, जिसके गले पडेंगे जा।
नारी महाभाग्यशालिनी, पता नही वो होगी का ?॥

अधर लाल लगते अति सुन्दर, सुन्दर स्वच्छ प्रवाल समान।
मानो मुझे देखने बाहर, निकला अन्तर राग महान् ॥
उठे कपोल काम दर्पण सम, कधो को छूते दो कान।
केश कलाप कृष्ण भौंरो सा, कहते लक्षण पुरुष प्रधान ॥
[पृष्ठ 46-47]

महाबल रूपवान होने के साथ बुद्धिमान शीलवान और परोपकारी भी है। सकटग्रस्त व्यक्ति की सहायता करना उसका स्वभाव है—

रोती हुई किसी अबला के, स्वर कानो से टकराये।
सुन सोचे दुखियारी नारी, सकट मे पड चिल्लाये ॥
अपना है कर्तव्य दुखो का, दूर करे दुखडा सारा।
दुखडा दूर किये बिन सुखडा, दुखडे तुल्य लगे खारा ॥
[पृष्ठ 95]

सिर पर गठरी लिए राख की, राजा को ला सौंपी भस्म ।
औषधि सेवन करो, हरो सिर, पीड़ा क़र पथ्यों की रस्म ॥१९७॥

नृप ने पूछा जले नहीं तुम !, कैसे राख तुम्हारी फिर ।
राख श्मसानों से एकत्रित, कर धर कर ले आये सिर ॥१९८॥

जल कर भस्म हो गया था मैं, देवों ने आ दिया जिला ।
सत्य प्रभाव देख हाथों से, अमृत प्याला दिया पिला ॥१९९॥

निज वचनानुसार अब स्त्री दो, हुआ आपका काम सभी ।
महापुरुष से सुना न जाता, जीते जी बदनाम कभी ॥२००॥

सिद्ध पुरुष के प्रेमी नर अथ, भागे पहुँचे स्त्री के पास ।
प्रिय ले आये राख, सुनाया, देखा हुआ वृत्त सोल्लास ॥२०१॥

सिद्ध सभा मैं गठरी रखकर, मलया से मिलने आया ।
अपना करतब अपने मुख से, मुलक मुलक कर कह पाया ॥२०२॥

छिपे सुरंग द्वार पर मैंने, चिता बडी थी लगवाई ।
जब वह जली तभी उठ मैंने, शिला पाँव से खिसकाई ॥२०३॥

अन्दर चला गया मैं उसके, द्वार किये हाथों से बंद ।
चिता हुई ठंडी तब निकला, पिछली रात वहीं सानंद ॥२०४॥

कोई भी था नहीं वहाँ पर, लाया गठरी बाँध बड़ी ।
ऐसे जीवित रहा प्रिये ! कोई भी बाधा नहीं पड़ी ॥२०५॥

अब आ राज सभा में बोला, वचन आपका रहे अखी ।
स्त्री दो, मैं मेरे घर जाऊँ, चिर जीवो चिर रहो सुखी ॥२०६॥

भागे लोग, कहे राजा से, करो नही ऐसा अन्याय ।
नाम राख का ले इस नर को, जीवित नही जलाया जाय ॥१८७॥

इससे तो यह ही है बेहतर, मत दो ये मनया रानी ।
जीवित जाने दो हे राजन्!, जाने दो अपनी वानी ॥१८८॥

नृप ने कहा- सुनो, समझो तुम, इसके जीवित रहने पर ।
मेरा मुख न देखती है स्त्री, वार हजारो कहने पर ॥१८९॥

इसके विना नही सुख मुझ को, मेरे पर सकट भारी ।
कैसे करु वताओ, जाओ पलने दो ये वीमारी ॥१९०॥

जीवा सचिव स्वय आ बोला, मरने दो जो सिद्ध मरे ।
लेना देना क्या है तुमको, पशु या पक्षी गिद्ध मरे ॥१९१॥

पापी राजा, पापी मत्री, दोनो की मति भ्रष्ट हुई ।
नाम राख का ले नर मारे, वात वरावर स्पष्ट हुई ॥१९२॥

चिता इधर तैयार महावल, वैठा वीच पालथी मार ।
आग लगाकर खडे हो गये, सावधान वन पहरेदार ॥१९३॥

भाग न निकले आग देखकर, पर ना मुह से निकली आह ।
दर्शक मूक भाव से निरखे, उनके मुह से निकली वाह ॥१९४॥

सभी राजपुरुषो ने आकर, सुना दिया सारा वृत्तात ।
भस्म हो गया सिद्ध पुरुष वह, चिता हो गई उसकी शात॥१९५॥

सुनकर नरपति जीवा मन्त्री, सुख से सोए सारी रात ।
प्रात होते ही वो आया, जीवित सिद्ध स्वय साक्षात ॥१९६॥

ऐसे समझ कहा जीवे से, जाऊँ करूँ दूसरा काम।
करंड़िया भर कर लाऊँ मैं, खायें आप मजे से आम ॥२१७॥

उठा, चला, नर चले साथ में, दिखलाने पथ पेड़ इसे।
किसकी हिम्मत होवे कोई, रास्ते में ले छेड़ इसे ॥२१८॥

चढ़कर गिरि के उच्च शिखर पर, दिखलाते जन आम इसे।
उस पर गिर कर फल लाने का, बतलाते परिणाम इसे ॥२१९॥

खड़ा एक क्षण मन में कहता, मैंने जो शुभ काम किए।
अथवा पद्मासन स्थित मन से, प्रभुवर के दो नाम लिए ॥२२०॥

तो यह मेरा साहस करना, सहज सफल हो जाए सिद्ध।
ऐसे कहकर कूद पड़ा वह, हा-हा करते बालक वृद्ध ॥२२१॥

गिरता आया नजर बाद में, आंखों से अदृश्य बना।
मर ही गया सिद्ध बेचारा, संस्मरणीय अवश्य बना ॥२२२॥

हाय हाय अन्याय पाप का, जोर बढ़ गया धरती पर।
कोप उतरने वाला मानो, राज्य और नरवर के सिर ॥२२३॥

अमंगलों की शंका करते, हुए लोग वापिस लौटे।
राजा के खोटा होने से, होते लोग नहीं खोटे ॥२२४॥

लोगों ने आ कहा भूप से, सिद्ध पुरुष का सारा काम।
बेचारा बैमौत मर गया, कैसे वो लायेगा आम ॥२२५॥

लोग सोग ले सोये जीवा, राजा सोये हर्ष लिये।
मलया रानी रही जागती, चिन्तन का संघर्ष लिए ॥२२६॥

नृप ने किया इशारा प्यारा जीवा मन्त्री यो बोला ।
काम एक कर दिया दूसरा, कौन करेगा रे भोला ॥२०७॥
छिन्नटक गिरि के खोखर मे, बारह मासी आम भला ।
उसके फल लाकर राजा को, बडे प्रेम के साथ खिला ॥२०८॥
हर मौसम मे हर स्थानो मे, बहुत कठिन है पाना आम ।
पित्त प्रकृति वाले नरवर को, बहुत जरुरी खाना आम ॥२०९॥
पूर्व दिशा से गिरिपर चढना, पहुँच शिखर पर तरु पर गिर ।
आम तोड भर करडिया सिर, धर कर फिर चढना ऊपर ॥२१०॥
विषम मार्ग से चढना दुष्कर, उतरा भी जाता न उधर ।
ऊपर से ही झपा देकर, गिरना होगा उस तरु पर ॥२११॥
तुम्ही साहसी शूर चतुर हो, और हितैषी नरवर के ।
तुम्हे काम ये सौपा जाता, जान सदस्य इसी घर के ॥२१२॥
सुनकर स्तभित बना सिद्धमन, मुझे मारने को ये काम ।
नही किसी ने बतलाया है, यो मगवाना खाना आम ॥२१३॥
करु नही तो डरु काम, से मरु भरु जो हुकारा ।
स्मरुँ इष्ट उतरुँ जोखम मे, तरुँ दु ख सागर खारा ॥२१४॥
बिना किये यह काम मुझे स्त्री, लिए बिना ही जाना घर ।
ऐसा जीवन जीने से तो, अच्छा ही है जाना मर ॥२१५॥
कर आया जो काम नाम यश, साथ मिलेगी ये नारी ।
मुझे जिन्दगी से भी प्यारी, लगती है मलया प्यारी ॥२१६॥

यदि न व्यसन से दूर हटे तो, फिर तुम देना उसे सजा।
अभी नहीं कुछ करना, मेरी विनति मानलो करो मजा ॥२३७॥

रहा रात भर व्यन्तर ने फिर, फल ले भरा करंडक एक।
मेरे सहित सवेरे पुर के, उपवन में ला छोड़ा नेक ॥२३८॥

फिर बोला आवो तुम पीछे-पीछे मैं भी आता हूं।
दुष्ट चित्त वाले राजा को, चमत्कार दिखलाता हूं ॥२३९॥

काम असाध्य पड़ें जब कोई, हो जाऊंगा मैं हाजिर।
रह अदृश्य काम कर दूंगा, स्मरण मात्र साधित व्यंतर ॥२४०॥

सुना चुका मलया को सारा, सिद्ध पुरुष अपना इतिहास।
देवशक्ति पर, कृत उपकृति पर, पुण्य प्रकृति पर कर विश्वास ॥२४१॥

करंडिये में से आती है, खाऊं-खाऊं की आवाज।
'नृप को खाउं या जीवे को', सुनता बैठा सभ्य समाज ॥२४२॥

राजा बोला सिद्ध पुरुष यह, करता लीला से सब काम।
भर लाया है भूत भयंकर, बतलाता है लाया आम ॥२४३॥

जीवा मंत्री बोला नृप से, खाता है क्या भूत कभी।
भूतों का ले नाम घूमते, संन्यासी अवधूत सभी ॥२४४॥

खायेगा तो खा जायेगा, लो पहले मैं डालूं हाथ।
जिद्दी जीवे ने न सुनी है, निवारने वालों की बात ॥२४५॥

हाथ लगाते ही दुंदुभि सम, हुई वही आवाज तुरन्त।
हटा न खुद का हाथ हटाया, शठ के हठ का कहीं न अंत ॥२४६॥

हुआ सवेरा सिद्ध पुरुष वह, आम करडक ले आता।
लोगों ने जब देखा इसको, लगे पूछने मुख माता ॥२२७॥
कैसे जीवित रहे बताओ, कैसे ले आये ये आम।
यह बोला जाने दो, करने दो पहले राजा का काम ॥२२८॥
करडिया ला रखा कहा है, खाओ आम बुझाओ पित्त।
पित्त शात होने पर सबका, शात नही क्यो होगा चित्त ॥२२९॥
डरे देख सब, करे न साहस, करडिये को छूने का।
नहीं किसी ने कहा निकालो, अच्छा आम नमूने का ॥२३०॥
ले दो चार आम नृप से कह, चल आया मलया के पास।
इसे देख वह बनी प्रफुल्लित, उमडा तन मनमे उल्लास ॥२३१॥
पूछा सारा वृत्त प्रेम से, इसने उससे स्पष्ट कहा।
प्रिये! तुझे पाने को मैंने, प्राणातक यह कष्ट सहा ॥२३२॥
परिचित योगी मरकर व्यतर, बनकर रहता उस तरु पर।
उसने गिरने दिया न नीचे, उठा लिया ऊपर ऊपर ॥२३३॥
तुम मेरे उपकारी भारी, डरो नही श्री नृप नन्दन!
स्वीकारो आतिथ्य और ये, अभिनन्दन ले लो वन्दन ॥२३४॥
मैंने कहा काम राजा का, पूरा करने को आया।
वैसा ही तुम करो रहे ज्यो, कुशल सहित मेरी काया ॥२३५॥
कहा देव ने राजा तेरी, चाह रहा आकस्मिक घात।
आज्ञा दो तो उसे दिखाऊ, नाम आपका ले दो हाथ ॥२३६॥

बनो नहीं बरबाद, वचन को, करो याद दे दो भार्या ।
सभी सभासद सम स्वर बोले, नाथ ! विनति ये स्वीकार्या ।।२५७।।

मलया के अनुरागी मन पर, असर नहीं कुछ हो पाया ।
काम तीसरा कर दो मेरा, जो न किसी ने बतलाया ।।२५८।।

बनवाऊँगा जैसा मैं तन, ये न कभी कर पायेगा ।
बिना काम के किए प्रिया को, ये कैसे ले जाएगा ।।२५९।।

ऐसा कुछ करने से मेरा, होगा भी बदनाम नहीं ।
लोगों से मै कह दूगा ये करने पाया काम नहीं ।।२६०।।

सारा अंग देखता जैसे, देख सकूं मैं मेरी पीठ ।
काम तीसरा कर डालो बस, उतरे रंग न चढ़ा मजीठ ।।२६१।।

सुनकर सिद्ध सोचता मन से, दुष्ट दे रहा क्षुद्रादेश ।
पीठ स्वयं की देख इसे क्या, मिल जायेगा लाभ विशेष ।।२६२।।

फिर भी दाँतों में ले नाड़ी, गर्दन तुरन्त घुमा डाली ।
बोला देखो पीठ स्वयं की, खानापूर्ति करो खाली । ।।२६३।।

नये सचिव ने आंख दिखाई, बता किया क्या ये अन्याय ।
ये कहता क्या क्या होगा तुम, करते जाओ भले उपाय ।।२६४।।

राजा की ये दशा देखकर, सुनकर डरे भगे सारे ।
सभी रानियां भागी आई, आंखों से आंसू झारे ।।२६५।।

हाथ जोड़कर मांगे माफी, मांगे प्रिय पति की भिक्षा ।
जैसा था वैसा ही कर दो, इससे अधिक न दो शिक्षा ।।२६६।।

उघाडते ही करडिये से, ज्वाला प्रगट हुई साक्षात ।
जीवा जलकर भस्म हो गया, लगा धूजने धरणीनाथ ॥२४७॥

फैली आग महल मे सारे, मूल्यवान सामान जले ।
हाहाकार मचाते मानव, जोर किसी का नही चले ॥२४८॥

सिद्ध पुरुष को शीघ्र बुलाओ, कहो समेटे ये माया ।
करडिये मे आम उठा लाया, या लाया छल-माया ॥२४९॥

आया सिद्ध कहा राजा ने, शात करो ये भूत पलीत ।
इसे शात करने को कोई, नही जानता रीत पुनीत ॥२५०॥

उसने शीतल जल ले छिडका, करडिये को वन्द किया ।
फसे हुए लोगो ने वचकर, जीवन का आनन्द लिया ॥२५१॥

पास फटकना दूर रहा अव, दूर हट गये सारे लोग ।
सिद्ध आम ले कहता नृप से, लो ये आम लगाओ भोग ॥२५२॥

पहले आप लीजिये, पीछे हम लेगे, लो मानो बात ।
वात मान कर सिद्ध पुरुष ने, पहला आम उठाया हाथ ॥२५३॥

फिर नरवर ने, अन्य सभी ने, चखे पके वे प्यारे आम ।
मुह मे पानी आ जाता सुन, आम और नीबू का नाम ॥२५४॥

मुख्य सचिव के पद पर नृप ने, जीवासुत को विठलाया ।
नृप ने सिद्ध पुरुप से पूछा, तू क्या भर लाया माया ॥२५५॥

था अन्याय वृक्ष का अकुर, पुष्प और वाकी हैं फल ।
न्यायनीति से चलने वाला, शासन होता सदा सफल ॥२५६॥

महाबल करूण, संवेदनशील और सच्चा प्रेमी है। मलयसुन्दरी से वियोग होने पर वह उसकी प्राप्ति के लिए वन वन भटकता है, सब प्रकार की चुनौतियों को स्वीकार करता है—

यहां नहीं तो वहां मिलेगी, इधर नहीं तो उधर कहीं।
वन क्यों छोडूं, गिर क्यों छोडूं, छोडूँ छोटा नगर नहीं॥

[पृष्ठ 124]

भूख प्यास निद्रा भी त्यागी, त्यागे राजकीय सुख भोग।
चप्पा-चप्पा ढूंढ लिया, और पूछ लिये दुनिया के लोग॥

[पृष्ठ 138]

विविध कष्टों को भोगने के बाद मलयसुन्दरी और महाबल का मिलन होता है, वह बडा पवित्र, सात्विक और उल्लासपूर्ण है—

"आंखों में जल, हर्ष हृदय में, मुंह में शब्द नहीं माते।
अपनी-अपनी व्यथा सुनाते, आह-आह मुख से गाते॥

[पृष्ठ 139]

प्रेम का यह सात्विक रूप अन्ततः संयम मे बदलता है और वे सांसारिक को छोड़ कर श्रमण धर्म की दीक्षा स्वीकार कर लेते है। उनका साधक जीवन अत्यन्त शान्त, सौम्य, निश्चल और अप्रमत्त है। घोर उपसर्ग सहन कर तप की ज्वाला में अपने कर्म-विचारों को दग्ध कर वे शुद्ध, बुद्ध परमात्म स्वरूप को प्राप्त करते है। उनके संयमी जीवन का यह चित्र देखिये—

"सोम सदृश मन सौम्य निरन्तर, निर्णय निश्चल मेरू समान।
अप्रमत्त भारण्ड तुल्य मुनि, पवन सदृश स्पर्शे सब स्थान॥
शंख समान निरंजन उज्जवल गगन समान निरालम्बी,
सर्वसहा समान सहिष्णु, अपरिग्रही निरारम्भी॥

[पृष्ठ 173]

कहा सिद्ध ने इसी रूप मे, जो जिन मन्दिर जा आये ।
तो गर्दन सीधी हो जाये, पूर्वाकृति को पा जाये ॥२६७॥
जाये पैदल आये पैदल, धोक लगाए शीश झुका ।
रह जायेगा ऐसा ही जो, शरमा कर क्षण कही रुका ॥२६८॥
मरता क्या करता न बताओ, चला स्वय पैदल भूपाल ।
इसे देखने हँसने वाले, लोगो मे आया भूचाल ॥२६९॥
पथ पर, रथ पर, छत पर चढकर, निरख रहे हैं सारे लोग ।
भरने दो इस दुष्टात्मा को, अपने दुष्कर्मो का भोग ॥२७०॥
चला ठोकरे खाता खाता, पाव सामने मुह पीछे ।
ये न देखता देख रही है, दुनिया हो ऊपर नीचे ॥२७१॥
आया श्री जिनदर्शन करके, किया सिद्ध ने फिर तैयार ।
अते उर सब करे प्रशसा, गिनकर मन ही मन उपकार ॥२७२॥
मन चाहो सो माँगो सुनकर, कहा सिद्ध ने दे नारी ।
देने की ताकत जो रखते कर आए वो तैयारी ॥२७३॥
राजा ने फिर भी न सुनी है, अते उर की करुण पुकार ।
रखू और दू कैसे स्त्री को, राजा करने लगा विचार ॥२७४॥
इतने ही मे हयशाला मे, बडी भयकर आग उठी ।
धूवे से आकाश भर गया, सब लोगो की सास घुटी ॥२७५॥
नृप ने कहा अश्वशाला मे जलता है मेरा हय रत्न ।
उसे बचाओ सिद्ध पुरुष तुम, चाहे जैसा करो प्रयत्न ॥२७६॥

चौथा काम करो फिर स्त्री को, लेकर जाओ अपने घर ।
सुन सब सोचे पापी नृप को, नहीं पाप का किंचित् डर ॥२७७॥

सिद्ध सोचता नहीं अभी तक, सुधर सका पापी का मन ।
इसे नहीं प्रिय अपना जीवन, प्रिय है अपयश और मरन ॥२७८॥

द्विगुणित मन उत्साह लिए वह, व्यन्तर का कर नाम स्मरण।
कूद पड़ा ज्वाला से वापिस, निकला करके अश्व हरण ॥२७९॥

दिव्य वस्त्र आभूषण पहने, हुए अश्व पर चढ़ा हुआ ।
सभी सदस्यों ने देखा है, आता सम्मुख बढ़ा हुआ ॥२८०॥

कहा सिद्ध ने सुनो सज्जनों ! है यह अग्नि पवित्र विशेष ।
मन वांछित फल देने वाला, अग्नि देवी का दिव्य निवेश ॥२८१॥

अन्दर जाने वाले नर को, मिलता है सुन्दर घोड़ा ।
रोग, बुढ़ापा, मौत न आए, मिल जाए, क्या है थोड़ा ॥२८२॥

दिव्य रूप धारी नर बन कर, चढ़ वो बाहर आयेगा ।
सुना रहा मै जैसे अनुभव, अपने हमें सुनायेगा ॥२८३॥

राजा बोला सबसे पहले, मैं ही इसमें करूं प्रवेश ।
ऐसा यौवन ऐसा जीवन, स्थिर हो जाए क्यों न हमेश ॥२८४॥

कहा सिद्ध ने जरा ठहरिये, पहले पूजन करें विशेष ।
विधि वर्जित कार्यों के पीछे, शून्य बचा करता है शेष ॥२८५॥

पूजन सामग्री मंगवा कर कर मुख से कुछ मंत्रोच्चार ।
राजा और सचिव ने उठकर, अग्नि प्रवेश किया धर प्यार ॥२८६॥

राजा और नचिव के पीछे वहुत लोग तैयार हुए ।
इसने कहा ठहरिए उनको, आने दो असवार हुए ॥२८७॥
वहुत देर हो गई न आया, राजा सचिव नही आया ।
लोग सिद्ध से लगे पूछने, समझाओ क्या है माया ॥२८८॥
इसने कहा आग मे जाकर, क्या कोई जीवित रहता ।
सुर ने सहायता की मेरी, सत्य आपसे मैं कहता ॥२८९॥
लोगो ने "हू" किया कहा रे, सारा वैर निकाल लिया ।
जलते हुए हुताशन मे यो, फसा जाल मे डाल दिया ॥२९०॥
महाजनो ने सामनो ने, मिलकर इसको किया नरेश ।
सिद्धराज का माना जाये, राज्यादेश नवीन हमेश ॥२९१॥
नमस्कार कर व्यन्तर से कह, दिया पधारो अपने स्थान ।
ध्यान धरु तब आ जाना, कर देना वाछित काम महान् ॥२९२॥
मलयारानी वन पटरानी, सिहासन पर वैठी साथ ।
किस्मत जव दे साथ, साथ दिन देते, और साथ दे रात ॥२९३॥
कल की रात और कल का दिन, जव दोनो को आये याद ।
तव तन मे सिहरन सी उठकर, मन से छेडे वाद विवाद ॥२९४॥
अब आया है देशान्तर से, व्यापारी वह श्री वलसार ।
आकर मिला नए राजा के, सम्मुख रखा वडा उपहार ॥२९५॥
सिहासनासीन मलया को, देखा तुरत गया पहचान ।
डरता हुआ गया निज घर पर, चिन्ता खडी हुई असमान ॥२९६॥

मलया ने बतलाया सारा, इसका किया हुआ व्यवहार ।
मेरे से मेरा सुत छीना, वेचा मुझ को बीच बाजार ।।२९७।।

उसको ला कारा में डाला, ताले मारे लूटा घर ।
बचने का न उपाय सूझता, कंपे कलेजा थर थर थर ।।२९८।।

चन्द्रावती पुरी का स्वामी, वीरधवल नृप मेरा मित्र ।
सूरपाल भी परम मित्र है, स्थिति है मेरी वड़ी विचित्र ।।२९९।।

दुख में बने सहायक वो ही, सखा सत्य माना जाए ।
परख आपदा में ही होगी, रामायण यों फरमाये ।।३००।।

अभी आठ हाथी जो लाया, साथ कहीं द्वीपान्तर से ।
आठ लाख सौनैय्ये ला दूं, जो दाटे अपने कर से ।।३०१।।

सोमराज को राज बुझाकर भेजा, उन दोनों के पास ।
आयें आप बचायें मुझको, ऐसा मुझे परम विश्वास ।।३०२।।

दोनों राजाओं का चलता, इसके साथ पुराना वैर ।
मेरा काम बनेगा निश्चित, और नही दुश्मन की खैर ।।३०३।।

कारागृह में पड़ा पड़ा यह, करता विविध कल्पना मन ।
प्रकृति ने मंजूर कर लिया, तेरा करना शीघ्र दमन ।।३०४।।

समाचार ले सोम गया है, पथ में नृपति मिले आते ।
सूरपाल नृप वीरधवल नृप, सकुशल अपने घर जाते ।।३०५।।

इन्हें सूचना मिली किसी से, मलया पल्लीपति के पास ।
दुर्ग तिलकगिरी निकट वताया, पल्लीपति का जहां निवास ।।३०६।।

अपनी अपनी सेनाओ के, साथ चले आये ये अत्र ।
पल्लीपति को जीत लिया, मलया को ढूढ लिया सर्वत्र ॥३०७॥

मिली नही मलया ये वापिस, लौट रहे नृप अपने स्थान ।
सोम इन्हे मिल गया सामने, सबका भला करे भगवान ॥३०८॥

कहा सोम ने— कहलाया है, सार्थवाह बल ने ऐसे ।
इन दोनो ने मान लिया है, माने नही भला कैसे ॥३०९॥

आधा आधा धन बाटेंगे, जो भी बल से पायेगे ।
नृप को मार राज्य छीनेंगे, विजयी बन घर जायेंगे ॥३१०॥

सेना सहित चले आये ये, सागर तिलक नगर के पास ।
दूत भेज कर समाचार सब, कहलाये नृप से सोल्लास ॥३११॥

सार्थवाह बलसार सेठ को, कैसे पकड कर लिया कैद ।
दोनो राजाओ से उसका, बहुत बडा सबध अभेद ॥३१२॥

मित्र हमारा, बन्धु हमारा, पुत्र हमारा यें प्यारा ।
कारा मे क्यो डाला उसका, गुनह माफ कर दो सारा ॥३१३॥

कर सत्कार उसे घर भेजो, वरना हमसे युद्ध करो ।
सार्थवाह के साथ हमे भी, कारा मे अवरुद्ध करो ॥३१४॥

फल देने वाले तरुवर को, कौन काट देता कर से ।
बिगाडने वाले आगन को, उस मे पान भले बरसे ॥३१५॥

अपना बल तोलो, बल तोलो चढकर आने वालो का ।
फर्ज यही होता है पहले, सत्य सुनाने वालो का ॥३१६॥

अगली पिछली सोच समझ कर, निर्णय करना आप नरेश।
वरना मरना पड़ता जैसे, मरा अहंकारी लंकेश ॥३१७॥

सुनकर दूत कथन मन सोचे, जनक ससुर मिलकर आये।
घर बैठे ही दर्शन पाये, रोम-रोम तन विकसाये ॥३१८॥

कृत्रिम कोप दिखाकर कहता, सुनो दूत मेरी वानी।
एक देह दो हाथों वाला, होता ही है हर प्रानी ॥३१९॥

सेना बहुत बड़ी होने से, हमें नही भय लड़ने का।
तारों में बल कब होता है, एक सूर्य से भिड़ने का ॥३२०॥

सुत हो चाहे परम सखा हो, अपराधी को देना दंड।
न्यायी नृप का काम यही है, इसमें लाज न और घमंड ॥३२१॥

अपराधी की पीठ थापने, चढ चल आया है नरवर।
क्यों न लाज उसको आई जब, हुआ सफेद समूचा सिर ॥३२२॥

उल्लू को आश्रय देता है, अंधकार रजनी वाला।
उसकी हालत क्या होती है, होने पर रवि उजियाला ॥३२३॥

मृग को मनोदशा क्या होती, मृग पति के आ जाने पर।
बिजली के गिरने पर रक्षण, कर न सके तरुवर या घर ॥३२४॥

अन्यायी राजा को शिक्षा, देना धर्म हमारा है।
जा तेरे स्वामी से कहना, दुश्मन ने ललकारा है ॥३२५॥

सज्ज करो सैना मैं आता, बजवाता हूं रणभेरी।
योद्धाओं से सही न जाती, रण के लिए कभी देरी ॥३२६॥

मलया सुन्दरी से वतलाया, पिता मसुर का भेद सकल ।
मिल पायेगे आत्मीयो से, जीवन होगा धन्य सकल ॥३२७॥

सिद्धराज ले अपनी सेना, रण के वीच उत्तर आया ।
लडने लगे वीर योद्धागण, रणादेश जव मिल पाया ॥३२८॥

कटे शीश पर हटे न पीछे, मिटे मान सन्मान लिए ।
मर कर अमर वही नर वनते, स्वय जिन्होने प्राण दिए ॥३२९॥

खड्गा खड्गी, दडा दडी, शरा शरी कुताकुती ।
मुष्टा मुष्टी केशा केशी तलानली दता दती ॥३३०॥

तलवारो पर है तलवारे, गज से गज की शूड लडे ।
घोडो से घोडे भिडते है, कही मुड से मुड लडे ॥३३१॥

रथ से रथ पैदल से पैदल, लडते युद्ध मचा भारी ।
पक्ष विपक्ष समान वली हे, सेना एक नही हारी ॥३३२॥

सिद्धराज की सेना मे अव भगदड मचने लगी विशेष ।
सवल और निर्वल जव लडते, निर्वल की है हार हमेश ॥३३३॥

सूरपाल के वीरधवल के, सम्मुख आकर सिद्ध खडा ।
स्थगित चकित हो लोग देखते, अव होगा सग्राम वडा ॥३३४॥

सहायता मागी व्यन्तर से, अन्तर कर स्मरण लिया ।
सुर ने समरागण मे आकर, सिद्धराज का साथ दिया ॥३३५॥

रिपु के वाण रोक अधविच मे, दे देता इसको लाकर ।
उनके वाण उन्ही पर चलते, मार गिराते घिर जाकर ॥३३६॥

... की ध्वजा, छत्र, चामर, सिर मुकुट बाण से दिया गिरा।
बचाव करता इन दोनों का, सेनाओं से स्वयं घिरा ॥३३७॥

दोनों नृप बल हीन हो गये, काम नहीं करते जब बाण।
लाज बहुत आती है मन में, प्राण बने हो जब अत्राण ॥३३८॥

आँख उठाकर उपर देखे, इतना भी बल रहा न शेष।
सिद्धराज व्यन्तर को देता, अब अपना अंतिम आदेश ॥३३९॥

पत्र बाण मुख पर शर फेंका, शर ने जाकर किया प्रणाम।
लेख सामने रखकर वापिस, सकुशल आया अपने धाम ॥३४०॥

सूरपाल ने पत्र उठाकर, पढ़ा प्रेम से भरा हुआ।
पढने से पहले तो खुद ही उठा रहा था ड़रा हुआ ॥३४१॥

युद्ध कर किया बंद सभी आ, सुनने लगे पत्र सानन्द।
पूज्य पिता श्री, पूज्य श्वसुर श्री, प्रणमूं सविनय पद अरविन्द॥३४२॥

श्री चरणों को करुणा से ही, मुझे मिला ये राज्यासन।
मैं मिलने के लिए आ रहा, मुदित करे तन मन जीवन ॥३४३॥

प्रिया सहित मिल गया महाबल, प्रबल पुण्य बल अति अनुकूल।
दोनों आने लगे सामने, नभ से लगे बरसने फूल ॥३४४॥

सुत ने किया प्रणाम पिता ने, उठा हृदय से लिया लगा।
दिया बरसने नैनों को मुख, उपर ताला दिया लगा ॥३४५॥

पिता न बोले श्वसुर न बोले, बोले कहीं महाबल भी।
बोले प्रश्न न बोले उत्तर, बना संकुचित मतिबल भी ॥३४६॥

मौनावस्था मे दोनो का करवाया अव नगर प्रवेश ।
शत्रु नही ये पिता श्वसुर है, जाना इचरज हुआ विशेप ।।३४७।।

महलो मे मलया से मिल ये, पूरे रो भी सके नही ।
सुख क्यो मिला ? दुख जव अपने पूरे हो भो सके नही ।।३४८।।

वदला वातावरण शहर का, खुशियो का कुछ पार नही ।
कोई रहा नही दुखिया नर, कोई भी वीमार नही ।।३४९।।

ऐसा भी हो सकता है क्या ? प्रश्न निरर्थक करो नही ।
पूछ रहे क्या चलो देखलो, साथ चलू मैं डरो नही ।।३५०।।

हर चौराहे पर हर घर पर, मुँह-मुँह पर वात यही ।
नई वात नौ दिन तक चलती, प्रात और दिन रात यही ।।३५१।।

सभी मन्दिरो, उपाश्रयो मे, मुनियो के व्याख्यानो मे ।
इसी वात के सव व्यजन स्वर, वनकर गिरते कानो मे "३५२।।

पुरुपो स्त्रियो, वालको मे भी, चर्चा एक यही चलती ।
चर्चा अलग छोडने वाला, स्वय मान लेता गलती ।।३५३।।

काव्य, कहानी, उपन्यास, पद, रास, भजन, सगीत, कला ।
इस घटना के आगे होकर, सुना नही कोई निकला ।।३५४।।

आगम गत आश्चर्य हुए दश एकादशवा ये लो मान ।
कोई नही प्रमाण पूछता, जिसका हो प्रत्यक्ष प्रमाण ।।३५५।।

लिखलो खोल डायरी सवत्, तिथि-मिति-वार तथा तारीख ।
सुनी सुनाई मे अन्तर है, लिखी लिखाई रहती ठीक ।।३५६।।

लेखक कथाकार लोगों को, बहुत बड़ा आधार मिला।
किसके हाथों रखी गई, इस घटना की आधार शिला ॥३५७॥

जिसमें बीती जिसकी खातिर, जिसने ये बीताई बात।
बीताने वाले का जिसने, दिया साथ कर लम्बे हाथ ॥३५८॥

समय स्थान के साथ सभी का, करना ही पड़ता उल्लेख।
सुनो सत्य इतिहास बोलता, समाचरित अविवेक विवेक ॥३५९॥

दादा जी ने पूछा मेरा, पोता कहां करो अब वात।
उसने इससे छीन लिया था, और ले गया अपने साथ ॥३६०॥

सुत का दर्शन पाने की मन, इच्छा प्रबल जगी इस बार।
आज्ञा होते ही हाजिर कर, दिया गया कैदी बलसार ॥३६१॥

हम तीनों का, अरे दुष्ट तूँ, अपराधी है बहुत बड़ा।
तेरे खातिर इन दोनों को, कष्ट भोगना बहुत पड़ा ॥३६२॥

तेने इससे जो सुत छीना, है वह कहां उसे ला दे।
जो कुछ किया आज तक, उसके साथ सही तू बतलादे ॥३६३॥

हम सबको जीवित छोड़ो, तो लाकर सौंपूं सुत प्यारा।
चाहे कहीं रखा हो उसको, भरो सभा में हुंकारा ॥३६४॥

इसकी बात मान ली सबने, इसने सुत सौंपा लाकर।
आनन्दित हो गए सभी मन, प्यारे नन्दन को पाकर ॥३६५॥

रखा नाम क्या इसका पूछा, उसने बतलाया है "बल"।
सूरपाल नृप की गोदी में, खेल रहा बालक चंचल ॥३६६॥

सौ दीनारो की थैली को, शिशु ने खीच लिया तत्काल ।
'शतवल' नाम रखा दादे ने, अच्छी तरह लिया सभाल ॥३६७॥

सपरिवार जीवित छोडा पर, दिया देश से इसे निकाल ।
अशुभ नाम कर्मोदय से है, अशुभ भावना अशुभ त्रिकाल ॥३६८॥

करते समय क्रिया को देखो, देखो उसका भावी फल ।
जिसे आज हम सव कहते है, यही आज आयेगा कल ॥३६९॥

भूत भविष्यत समय नही है, वर्तमान क्षण है केवल ।
काम हमारे आने वाला, देता यही शुभा शुभ फल ॥३७०॥

वर्तमान पर चलने वाले, वडे विचक्षण लोग यहा ।
भूत भविष्यत का कर पाते, कोई नही प्रयोग यहा ॥३७१॥

एक समय को 'अद्धा' माना, और नही कुछ भी है काल ।
समय समझने वाले वदले, समय-समय पर अपनी चाल ॥३७२॥

एक पलक के झपकारे मे, समय असख्य चला जाता ।
चर्चा करे समय की हम सव, समय वुरा न भला आता ॥३७३॥

समय समय है वुरा भला क्या ? वुरे भले अपने परिणाम ।
परिणामो की धाराओ पर, वध मोक्ष का पडता नाम ॥३७४॥

सुत ने पितृ चरण मे अर्पण, किया राज्य अपना सारा ।
इसने माना मुझे मिला यह, पूज्याशीषो के द्वारा ॥३७५॥

अलग पिता का अलग पुत्र का, ये वो है जो जाने मन ।
उधेड वुन तेरे मेरे की, खडा करे सज्जन दुश्मन ॥३७६॥

चन्द्रयशा गुरुदेव केवली आए साथ शिष्य परिवार।
समाचार शुभ लेकर आया, वन पालक नृप के दरबार ॥३७७॥

राजा गए, गए पुरवासी, सुनने को प्रवचन प्यारा।
धर्म मर्म समझाया गुरु ने, श्री जिनवाणी के द्वारा ॥३७८॥

श्रावक और साधु का ऐसे, भेद धर्म के समझाये।
जिसकी जैसी इच्छा हो वह उसी धर्म को अपनाये ॥३७९॥

सूरपाल ने पूछा भगवन !, मलया को क्यों गया उतार।
नमस्कार कर मत्स्य जलधि में,बना अदृश्य स्वय तत्कार ॥३८०॥

धाय माय जो वेगवती मर, मत्स्य बनी वो गज आकार।
मत्स्य पीठ पर गिरी मुंह से, उसने गिना मंत्र नवकार ॥३८१॥

महामंत्र नवकार श्रवन कर, इसने अपना जोड़ा ध्यान।
पूर्व जन्म को देखा जाना, जाति स्मरण होने पर ज्ञान ॥३८२॥

ग्रीवा उठा इसे देखा फिर, मलया को पहचान लिया।
बेटी !, यहां कहां से आई, गिरी पीठ पर स्थान लिया ॥३८३॥

क्या उपकार करूं मैं इसका, क्या करनेलायक जलचर।
कहीं वसति में छोडूं इसको, सुख से सागर के तट पर ॥३८४॥

बहुत सुरक्षित लाकर छोड़ा, नमस्कार कर चला गया।
मांसाहार मत्स्य ने त्यागा, निज जीवन का भला किया ॥३८५॥

मलय और महाबल ने क्यों, पाये यौवन वय में कष्ट।
आप जानते और देखते, हमें सुनादें भगवन् ! स्पष्ट ॥३८६॥

अन्य नारी चरित्रो मे चम्पकमाला और पद्मावती का चरित्र भी शील-सौंदर्य युक्त है। चम्पकमाला के लिए कवि ने कहा है—

"शील स्वभाव सहज सुन्दरता, आकर्षक व्यक्तित्व महान।"

अपने पति के प्रति उसकी सहज निष्ठा और श्रद्धा है। पद्मावती का पुत्र प्रेम उत्सग और बलिदान से सयुक्त है। पुत्र के अभाव मे वह अपना जीना निरर्थक समझती है। पुत्र द्वारा प्रदत्त लक्ष्मीपुज हार के खो जाने पर वह आत्मदाह को तत्पर होती है। हार मिल जाने पर भी वह पुत्र के बिना अपना जीना धिक्कार मानती है। उसकी दृष्टि मे पुत्र महाबल कल्पवृक्ष है और लक्ष्मीपुज हार निंब है, पुत्र अमृत है तो हार जल की धारा, पुत्र रत्न है तो हार ककर—

पुत्र रत्न के बिना हार ले, जीऊ तो जीना धिक्कार।
कल्पवृक्ष दे वृक्ष निंब लू, सुधा त्याग लू जल की धार ॥
रत्न त्याग कर ककर ले लू, दो आज्ञा भृगुपात करूँ।
आत्मघात यद्यपि वर्जित है, (पर) मैं मन से अपघात करूँ ॥
[पृष्ठ 101]

कनकवती मानव रूप मे राक्षसी है। वह सौतिया डाह से ग्रस्त है, द्वेषवती है। प्रतिशोध की आग मे निरन्तर जलती रहती है और अन्तत अपने दुष्कर्मो का फल भोगती है।

नारी के देवी रूप मे कुलदेवी, विद्याधरी आदि के यथा प्रसग उल्लेख हैं।

पुरुष पात्रों मे मलयसुन्दरी के पिता वीरधवल और महाबल के पिता शूरपाल आदर्श राजा है। अपनी सतति के प्रति उनका अनन्य प्रेम और वात्सल्य भाव है। जीवन के अतिम समय मे वे सयम मार्ग के पथिक बन कर अपना आत्म-कल्याण करते हैं। वीरपाल, लोभानन्दी, लोभाकार जैसे दुष्ट पात्र भी है और गुणवर्मा जैसे परोपकारी पात्र भी। योगी तपस्वी, ज्योतिषी, भूत, वैताल

गायें चरती हुई देख पथ, मांगा ग्वाले से पाया।
भैंस दुही भर दिया घड़ा यह, लेकर सरवर पर आया ॥३९७॥

बैठा हुआ सोचता कोई, साधुसंत जो आ जाए।
बहराऊं पथ उनको जीवन, धन्य धन्यता पा जाए ॥३९८॥

मास मास उपवासी मुनिवर, आए वहां कहीं वन से।
इसने वह पथ बहराया है, हर्षित होकर तन मन से ॥३९९॥

बचा हुआ पय पिया स्वयं ने, मन के हुए शुद्ध परिणाम।
परिणामों की पावनता से पावन जीवन मृत्यु तमाम ॥४००॥

फिर सरवर के गहरे जल में, लगा डुबकियां करता स्नान।
पांव फिसलने पर वह डूबा, गये वहीं पर उसके प्रान ॥४०१॥

मर कर विजय नृपति के घर पर,जनमा है श्री राजकुमार।
नाम रखा कंदर्प बना नृप, सुनो सुनाऊं सब अधिकार ॥४०२॥

श्री प्रिय मित्र प्रियाओं से नित, रखता मन में द्वेष विशेष।
इसे एक प्रिय सुन्दर है, प्रिय उससे रखता प्रेम हमेश ॥४०३॥

यक्ष धनंजय के दर्शन हित, प्रिया सहित प्रिय मित्र चला।
मुनि के सम्मुख मिल जाने पर मिला शकुन ये नहीं भला ॥४०४॥

अपनी यात्रा सफल न होगी, ऐसे मन में पछताते।
मुनि पर करते हुए रोष रथ, रोक मारने लग जाते ॥४०५॥

समभावी मुनि खड़े हो गए मौन, लिया होकर ध्यानस्थ।
सुन्दर नौकर से स्त्री बोली, देखो इसके ढोंग समस्त ॥४०६॥

पृथ्वी स्थान पुरी मे रहता, गृहपति पूर्ण मुखी प्रिय मित्र ।
पुत्र नही था, तीन स्त्रिया थी, रुद्रा भद्रा पूर्ण पवित्र ॥३८७॥
प्रिय सुन्दर थी, प्रियातीसरी, इसने पाया पति का प्यार ।
दोनो का झगडा रहता था, पति से और शोक से खार ॥३८८॥
पति का सखा मदन प्रिय प्यारा, प्रिय सुन्दर पर नजर रखे ।
वना हुआ आसक्त इसी को, घूरे कामी नजर तके ॥३८९॥
अति परिचय होने पर इसने, प्रिय सुन्दर से बोला साफ ।
उसने उसको ठुकराया, है करो आप मत ऐसा पाप ॥३९०॥
आवें जावे पर न कभी भी, मुख से ऐसी बात करे ।
मित्र मित्र की पत्नी से मत विश्वासो की घात करे ॥३९१॥
हटा कदम पीछे पर मन से नही दुराग्रह त्याग सका ।
ऐसा करते हुए दोस्त वह, बुरे विचारो से न रुका ॥३९२॥
वाते करते हुए एक दिन, पति ने सब कुछ जान लिया ।
दोस्त नही ये दुश्मन है यो, स्वय दोस्त ने मान लिया ॥३९३॥
इसने जा कर घर वालो से हाल सुनाया है सारा ।
घरवालो ने बुरी तरह मे धिक्कारा है फटकारा ॥३९४॥
कुलीन है तो हमे नही अब, अपना मुह भी दिखलाना ।
आना नही लौटकर घर मे, चाहे जहा चले जाना ॥३९५॥
चला गया घर छोड, छोड पुर, पहुच गया है देशान्तर ।
मिला नही दो दिन तक भोजन, चले क्षुधातुर प्यासातुर ॥३९६॥

इन दोनों में रुद्रा में, भद्रा में कलह हुआ भारी ।
मन की बहुत बड़ी दुर्बलता, और बड़ी ये बीमारी ॥४१७॥
कलह शांत होने पर सोचा, मर जाना ही बेहतर है ।
बिना किसी से कहे सुने ये, गिरी कुएँ के भीतर है ॥४१८॥
रुद्रा जयपुर नृप की पुत्री, कनकवती बन गई तुरंत ।
वीरधवल राजा ने परणी, जिसका चरित घृणित अत्यंत ॥४१९॥
भद्रा मरकर बनी व्यंतरी, पहुंची पृथ्वी स्थान बाहर ।
पति को और शोक को देखा, जगी वैर की बड़ी लहर ॥४२०॥
सोये हुए साथ में दोनों, इन पर दी दीवार गिरा ।
गिरती है दीवार कहीं भीं, गिरती सिर पर नहीं स्थिरा[1] ॥४२१॥
तेरा पुत्र महाबल है वह, जिसको हम कहते प्रिय मित्र ।
वह प्रिय सुन्दर स्त्री है मलया, सुनलो अपना कथा चरित्र ॥४२२॥
मलय महाबल से पहले ही, रुद्रा भद्रा रखती द्वेष ।
उसे याद कर वही व्यंतरी, छिद्र ढूँढने लगी हमेश ॥४२३॥
वस्त्राभूषण चुरा चुरा कर, वट कोटर में ला रखती ।
करती नित्य उपद्रव लेकिन, मार नहीं उसको सकती ॥४२४॥
मिला महाबल को मलया से, लक्ष्मीपुंजक हार महान ।
उसने इसे चुराया घर से, कौतुक करती हुई प्रधान ॥४२५॥

---

१. पृथ्वी

ईंटो से भट्टे से लावो, आग इसे मैं वालूगी ।
किए हुए अपशकुनो वाला, सारा वैर निकालूगी ॥४०७॥
सुन्दर बोला मेरे पग मे, जूते नही पहनने को ।
काटो से पग विंध जायेगे, चलो मालकिन पथ देखो ॥४०८॥
छोडो मुनि को चलो आप लो, गिनो नही अपशकुन शकुन ।
सुन प्रिय मित्र कुपित हो बोला, इसके होती बडी चुभन ॥४०९॥
इस वड तरु की शाखाओ से, वाओ ऊधा लटकाओ ।
काटे नही लगे पैरो मे, उठो नौकरो ! रे जाओ ॥४१०॥
सुन्दर को ले तरु शाखा पर, वाध पैर लटकाया है ।
मुनि को बुरा भला कहती उस, स्त्री ने हाथ उठाया है ॥४११॥
रजोहरण छीना मुनिवर का, पत्थर मारे दी गाली ।
कर अपशकुन निवारण जाकर, यक्ष पूज शाति पाली ॥४१२॥
जिन धर्मानुरागिणी दासी, बोली ये तो पाप किया ।
इन दोनो ने किए काम का, मिलकर पश्चाताप किया ॥४१३॥
मुनि ने किया अभिग्रह ऐसा, धर्म ध्वजा जब पाऊगा ।
तभी यहा से कही दूसरे, स्थल हित कदम वढाऊगा ॥४१४॥
तुमने स्वय साधु मे मागी, क्षमा दिया ओघा लाकर ।
जिनधर्मी वन श्रमणोपासक, वने ज्ञान ज्योत्स्ना पाकर ॥४१५॥
वन्दन कर घर गए, पारणा, लेने मुनिवर घर आए ।
अशन-पान, वहरा कर कर से, वे दोनो अति हरपाए ॥४१६॥

आंखों से देखा, सच बोला, उसको रहना मौन पड़ा।
बोले सत्य, मृषा इक बोले, दोनों में है कौन बड़ा ॥४३६॥

पति ने स्त्री से वो अंगूठी, साम दाम कर कर ली प्राप्त।
वाक्य अनर्गल बोले उनसे, प्रेम शांति सुख हुआ समाप्त ॥४३७॥

व्यन्तर ने उस कनकवती की, नाक तोड़ ली निज मुख में।
लोभसार तस्कर प्रियवर से, जो मिलने आई दुख में ॥४३८॥

पति के मित्र मदन के मन का, प्रिय सुन्दर से राग विशेष।
नृप कंदर्प मलय सुन्दर पर, रहता था अनुरक्त हमेश ॥४३९॥

मलय सुन्दरी ने उस मुनि पर, कोप किया अति कष्ट दिया।
तीनवार निज पति से बिछुड़ी भोग कर्म का स्पष्ट लिया ॥४४०॥

मुनि से छीना रजोहरण ज्यों, इसके कर से सुत छीना।
दीना जैसे ओघा वापिस, पुत्र इसे भी ला दीना ॥४४१॥

जिसे किया उपसर्ग वही मैं, मुनिवर हूं केवल ज्ञानी।
अपनी पूर्व कहानी सुनते, आश्चर्यान्वित भवि प्रानी ॥४४२॥

राजा पूछे कनकवती वो, फिर तो कष्ट नहीं देगी।
एक उपद्रव और करेगी, पीछे वो भी विरमेगी ॥४४३॥

फिर अनंत संसार भमेगी, जिसका क्या सुनना कहना।
सुनना कहना उसका सार्थक, जिसको समता में रहना ॥४४४॥

मलय महाबल का भव पूछा, मैंने तुम से कहा अखिल।
भव स्थिति जान सभी भव्यों के, भव से विमुख बना है दल ॥४४५॥

कनकवती को पहनाया वह, पूर्व जन्म की जान वहन ।
वीर धवल राजा ने पूछा, प्रश्न वीच मे वडा गहन ॥४२६॥
सिवा स्वयवर मडप के, पहले न महावल पुत्र मिला ।
वात आपकी मिली नही ये, समाधान दो पुन दिला ॥४२७॥
सुनकर मलय महावल हसने, लगे परस्पर दोनो तव ।
मुनि ने खोल सुनाया वर्णन, सुन कर समझे सारे अव ॥४२८॥
नीच विचारो आचारो की, कनकवती को धिक्कारा ।
उच्चारण आचरण जीभ का, नारी का हो क्यो खारा ॥४२९॥
कुमार का अपहरण किया जव, उसपर मुष्टि प्रहार किया ।
उसके वाद नही आई वह, वैर भाव मन मार लिया ॥४३०॥
सुन्दर नौकर मर कर व्यतर, वन वसता वट तरुवर पर ।
वहा महावल जव आ पहुचा, पहचाना सोचे व्यतर ॥४३१॥
इसने ही वधवाया तरु से, अव मैं इसको दू कुछ कष्ट ।
शव के मुख से वोल उठा तू, कल वाधा जायेगा स्पष्ट ॥४३२॥
रुद्रा ने पति की अँगूठी, चुरा छिपाई अपने पास ।
करते हुए तलाश वना पति श्री प्रियमित्र उदास उदास ॥४३३॥
सुन्दर वोला अगूठी है, रुद्रा सेठानी के पास ।
आकुल व्याकुल वनो नही तुम, वोला हँसकर सुन्दर दास ॥४३४॥
सुनते ही सेठानी वोली, क्यो ले मेरा झूठा नाम ।
मैंने कव ली है अगूठी, रे नालायक ! नीच ! हराम ॥४३५॥

सभी अकेले खेले जाते, चाहे छैले अलवेले ।
समय चक्र घाणी ले पेले, ज्ञानी गुरु चाहे चेले ।।४५६।।

किसका नाम काम भी किसका, किसका धाम गिनाया जाय ।
ध्रौव्य छिपा दोनों के पीछे, नजर आ रहा जब व्यय आय ।।४५७।।

काया माया छाया का भ्रम, कोई नहीं पकड़ पाया ।
मेरा मेरा करते मरते, समय जागने का आया ।।४५८।।

बाह्या भ्यन्तर चक्षु खुल गए, मधुर वैन मुख से निकले ।
कल ही राज्य त्याग कर दूंगा, चाहे कुछ हो क्यों न भले ।।४५९।।

हुआ सवेरा वन पालक तब, आकर सूचित करता है ।
श्री गुरुदेव पधारे वन में, नृप उसका मन भरता है ।।४६०।।

नृप ने सुनी देशना, संयम, लेने के मन भाव जगे ।
राज्य भार अंगज को सौंपा, पुद्गल सब परभाव लगे ।।४६१।।

मलया रानी साथ महाबल, राजा ने धारा संयम ।
संयम की यात्रा पर निकले, बना मोक्ष का कार्यक्रम ।।४६२।।

गुरु से आज्ञा पाकर मुनिवर, लगे विचरने एकाकी ।
किसी संत की सेवा लेनी, देनी रही नहीं बाकी ।।४६३।।

सोम सदृश मन सौम्य निरंतर, निर्णय निश्चल मेरु समान ।
अप्रमत्त भारंड तुल्य मुनि, पवन सदृश स्पर्शे सब स्थान ।।४६४।।

शंख समान निरंजन उज्ज्वल, गगन समान निरालंबी ।
सर्वसहा समान सहिष्णु, अपरिग्रही निरारंभी ।।३६५।।

मलय महावल मिलकर वनते श्रमणोपासक व्रतधारी ।
समकित व्रतधारी आगारी, धन्य धन्य है ससारी ॥४४६॥

सूरपाल भूपाल महावल, सुत को दे शासन का भार ।
महाव्रतो का भार धार कर, उतर गये भव सागर पार ॥४४७॥

वीरधवल ने मलय केतु को, यही वुलाकर सौपा भार ।
रानी सहित सुगुरु चरणो मे, सयम मार्ग किया स्वीकार ॥४४८॥

कर सयम तप का आराधन, सुरवन नर वन, होगे मुक्त ।
वधन मुक्त वनाने वाली, सयम की पद्धति उपयुक्त ॥४४६॥

सागर तिलक नगर मे सेना पति को रख शतवल के साथ ।
पृथ्वी स्थान नगर नृप आया, व्यन्तर बना दाहिना हाथ ॥४५०॥

दुर्जय शत्रु समूह झुक गया, हुआ राज्य का वहुविस्तार ।
श्री जिन शासन की उन्नति मे, करता नित्य प्रयत्न हजार ॥४५१॥

पूजा भक्ति करे श्री जिन की, वनवाये प्रसाद नये ।
साधुभक्ति सार्धमि भक्ति के, अवसर ऊभे किये गये ॥४४२॥

नाम सहसवल रखा दूसरा, पुत्र हुआ है जव प्यारा ।
सव कुछ मिले उधार, उधारी मिले धर्म की कव धारा ॥४५३॥

सोये हुए नृपति के सम्मुख, दिव्या कृति आ एक खडी ।
मोह नीद मे क्यो सोया तू आशा तृष्णा लिए वडी ॥४५४॥

भोग अनन्त अनन्त रोग है, और अन्त सयोग वियोग ।
भोग भोगते हुए लोग सव, वनते स्वय स्वय के भोग ॥४५५॥

तांत्रिक और राक्षस-असुर जैसे पात्र भी यथाप्रसंग आकर अपनी भूमिका निभाते हैं और कथा में चमत्कारिक प्रभाव उत्पन्न करते है।

'मलयसुन्दरी रास' घटना और इतिवृत्त प्रधान है। घटनाओं के माध्यम से ही पात्र सक्रिय और गतिशील बनते है। पात्रो के मानसिक सघर्ष और अंतर्द्वन्द्व के लिए यहाँ कम अवसर है। रसात्मक स्थल की बजाय वर्णनात्मक स्थल यहां अधिक है। नगर वर्णन, राज्य वर्णन, जन्मोत्सव वर्णन, स्वयंवर वर्णन और कुतूहल वर्धक रहस्य-रोमांस वर्णन भाव-भाषा की दृष्टि से सहज बन पड़े है। भाषा सरल हिन्दी है। प्रसाद गुण संपन्न होने के कारण बोधगम्य है। ओज और माधुर्य की छटा यथाप्रसंग देखी जा सकती है। शमशान का यह वीभत्स वर्णन देखिये :—

"पड़ी शमशान भूमि में हंसती, खड़ खड़ करती खोपड़ियाँ।
बसती बहुत दूर लोगों की नहीं पास में झोंपड़ियाँ ।।
(पृ. 92)

वात्सल्य रस की सृष्टि इस बाललीला मे देखिये :—

झणझणाट करते पद घुंघरू, ठुमक ठुमक चलते धीरे।
रुक रुक तुतलाते बरसाते, मधुर वचन मुख से हीरे।
[पृष्ठ 24]

वीर रस का यह चित्र देखिये :—

"खड्गा, खड्गी, दण्डा-दण्डी, शरा-शरी, कुन्ता-कुन्ती।
मुष्टा–मुष्टी, केशा–केशी, तला–तली, दन्ता–दन्ती ।।
[पृष्ठ 160]

कवि का उद्देश्य चमत्कार प्रदर्शन न होकर सहज सात्विक रूप में मनोरंजन के साथ तप-संयम धर्म का निरूपण करना है। अतः आलंकारिकता की ओर कवि

महत्तरा मलया श्री देती, सारी जनता को उपदेश ।
सुनने वाले बड़े प्रेम से, सुनते हैं उपदेश हमेश ॥४८६॥

पृथ्वी स्थान पुरी मे आकर, दिया सहस वन को प्रतिबोध ।
शोक निवारण करवाया है, ले धार्मिक आमोद प्रमोद ॥४८७

दान सुपात्र हाथ से देना, यथा शक्ति कर तपश्चरण ।
विधि से करे सव की पूजा, सोवे लेकर चार शरण ॥४८८॥

बड़ी दान शालायें खोली, कोई आवे पावे दान ।
दान दया है अंग धर्म के, पाप मानना पाप महान ॥४८६॥

सविधि स्नात्र पूजोत्सव चलते, अष्टाह्निक अति जोरो से ।
जो न करे जिन पूजा-पूजा क्या करवाये औरो से ॥४६०॥

रथयात्रा श्री तीर्थयात्रा का भी करते आयोजन ।
आयोजन मे सार्धमिक जन, साथ साथ करते भोजन ॥४६१॥

कोई क्षेत्र न रहे अछूता, सातो क्षेत्र हरे रखते ।
श्री जिन शासन की उन्नति का ध्येय पवित्र सिरे रखते ॥४६२॥

महाजनो के पीछे पीछे, चलने वाले लोग घने ।
राजाओ के पीछे पुर के, जैन वहुत से लोग बने ॥४६३॥

प्रमुख पदो पर प्रमुख जनो की, नियुक्तिया ही की जाती ।
सभालने वाले नर को ही घर की चावी दी जाती ॥४६४॥

भरम निवारक भव जल तारक करम सहारक जैन धरम ।
मलय सुन्दरी महासती ने, किया ज्ञान उद्योत परम ॥४६५॥

चार तीर्थ की सबल स्थापना, करते तीकर्थर भगवान ।
वे न बोलते किन्तु बोलता, उनका निर्मल केवल ज्ञान ॥४९६॥

वीतरागता ध्येय हमारा, राग द्वेष से दूर रहें ।
नहीं मानने वालों को किस लिए कहो हम क्रूर कहें ॥४९७॥

मानें तो हम प्रमुदित होकर, करें प्रमोदन अनुमोदन ।
होती है जो भूल कहीं पर, करे बैंठ कर संशोधन ॥४९८॥

सात नयों से भिन्न न कोई, हम सब में सब है हम में ।
हम है ऊचे वे है नीचे रहे नहीं हम इस भ्रम में ॥४९९॥

सब में आत्मा, आत्मा आत्मा में है वो ही केवल ज्ञान ।
कर्मावरण हटाने पर है, ससारी श्री सिद्ध समान ॥५००॥

ऐसा एक न जोव जगत में, जिससे हुआ नहीं संबंध ।
अपना कौन पराया सारी, हो बकवास आज से बन्द ॥५०१॥

निबंधो संवधी हो यह संभव कभी न हो पाता ।
बंधा किनारे के खूंटे से पार जलधि से हो जाता ॥५०२॥

कर्म वर्गणाओं से छूटे-छूटे कार्मण सूक्ष्म शरीर ।
तव ये आत्मा बन सकती है, चिन्मय ज्योतिर्मय अशरीर ॥५०३॥

महत् महत्तर और महत्तम संयम तप आराधन कर ।
योगासन प्राणायामों से, ध्यान साधना साधन कर ॥५०४॥

संयम क्रिया सहज बन जाए दिखाव बनाव छुपाव नहीं ।
बनावटी संयम का पड़ता, देखा गया प्रभाव नहीं ॥५०५॥

कर्म निर्जरा करने का ही, केवल ध्यान रहे दिन रात ।
वात किसी से करे करे वो, सयम तपोवृद्धि की वात ॥५०६॥
पूर्ण ममाधि अवस्था मे ही, अत समय मे त्यागे प्रान ।
अच्युत कल्प नाम का पाया, द्वादशवा श्री स्वर्ग विमान ॥५०७॥
च्यव कर महा विदेह क्षेत्र मे, सयम ले शिव जायेगी ।
शिवगति से ससार भ्रमण के, लिए नही फिर आयेगी ॥५०८॥
एक श्लोक के चिन्तन से ही, कष्टाम्वुधि से पाया पार ।
ज्ञान दीप के सम्मुख टिकता, नही किसी पथ मे अधकार ॥५०९॥
कष्टो मे भी शीलधर्म की, रेखा से विचलित न वनी ।
मर्यादाओ पर मर मिटते, मान आन के ध्यान धनी ॥५१०॥
उपसर्गो मे बने न अस्थिर, श्रमण महावल वली महान ।
मार्ग साधु का सरल नही है, जीवन जीना क्षमा प्रधान ॥५११॥
अवमानना नही की जाए, सत पथ की नाक सिकोड ।
श्रद्धा विनय भाव जो जागे, तो दो हाथ सामने जोड ॥५१२॥
पार्श्वनाथ निर्वाण प्राप्ति के, वीत चुके पूरे सौ साल ।
मलय सुन्दरी तव जन्मी थी, ऐसा है उल्लेख विशाल ॥५१३॥
शख नरेश्वर के सम्मुख श्री केशी गणधर ने आख्यात ।
वैसा ही हम कहते सुनते, श्रद्धा भक्ति भाव के साथ ॥५१४॥
श्री जयतिलक सूरि विरचित यह सस्कृत पद्य चरित्र महान ।
उसका ले आधार लिखा है, हिन्दी पद्यो मे आख्यान ॥५१५॥

दोहे

बीकाणे श्री संघ का, मान स्थान सम्मान ।
सेवा से सहयोग से, सदा बढ़ाता शान ॥ १ ॥

मेरी निश्रा में यहां, करवाया उपधान ।
नेमी चन्द्र खजाणची, श्रावक सेठ महान् ॥ २ ॥

पुण्य प्रेरणादायिनी, हेमप्रभा जी जान ।
लिया लाभ सब ने सुखद, कर तप भाव प्रधान ॥ ३ ॥

संवत् पैंतालीस का, युग सहस्र सुखकार ।
पार्श्व जन्म दिन पौष वदि, दशम तिथि श्रीकार ॥ ४ ॥

मलय सुन्दरी चरित का, चौथा खंड समाप्त ।
शील संयमाराधना, जिसमें है पर्याप्त ॥ ५ ॥

गणि मणि काव्याराधना, सरल नहीं है काम ।
काम उसी का मान लो, जिसका कवि हो नाम ॥ ६ ॥

कथा बहुत रसप्रद सुखद, भाषा मिष्ट विशेष ।
गणि मणि का रुचिकर बने, मधुर मधुर उपदेश ॥ ७ ॥

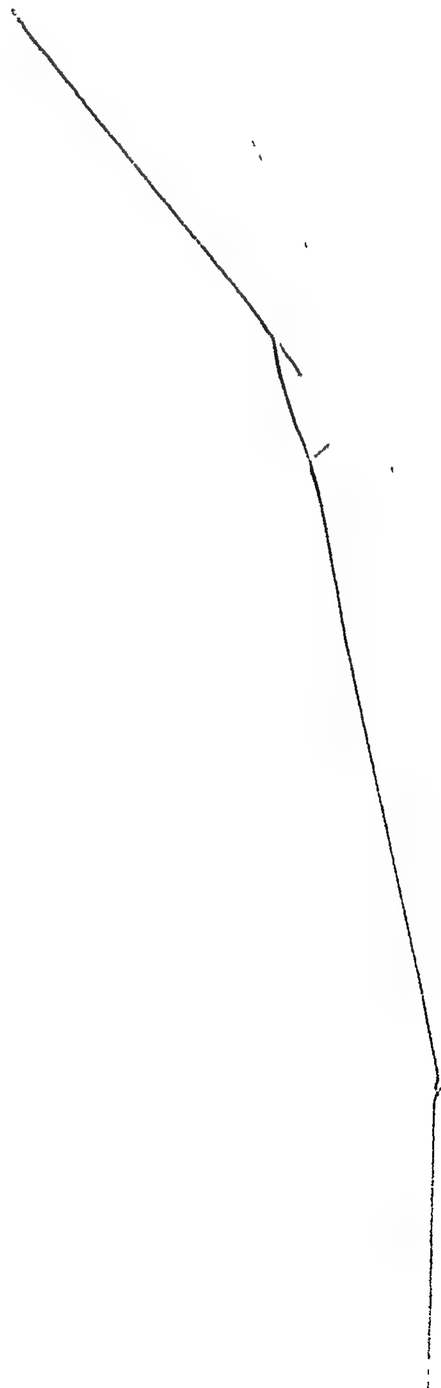
गुरुवर श्री जिनकान्ति का, मेरे सिर पर हाथ ।
जहां कहीं जाऊँ वहीं, रहे अहर्निश साथ ॥ ८ ॥

कान्ति सूरि गुरु की हुई, मुझ पर करुणा दृष्टि ।
गणि मणि करता ही चले, संयम तप की सृष्टि ॥ ९ ॥

नाम रत्नमाला सिरी, माँ साध्वी सुखकार ।
उनका मेरे पर सदा, वहुत वडा उपकार ॥१०॥
लघु भगिनी विद्युत्प्रभा, विदुपी सती सुजान ।
सयम मे सहयोग का, यथास्थान सम्मान ॥११॥
मलय महावल का लिखा, जोवन कर्म प्रधान ।
वक्ता श्रोता को मिले, चिन्तन शान्ति महान् ॥१२॥
ग्रहण करे गुण-गुण गुणी, मणि गणि का अनुरोध ।
सरचना से लीजिये, मन आमोद प्रमोद ॥१३॥
शिष्य वढे, शासन वढे, वढे गच्छ की वेल ।
हम सव मिल सहयोग दे, मिले जुले हँस खेल ॥१४॥







का लक्ष्य नही रहा है। वह स्वाभाविकता और सहजता का पक्षधर है। भाव बोध की स्पष्टता के लिए यथा प्रसग उपमा, रूपक उत्प्रेक्षा आदि सादृश्यमूलक अलकार ही विशेषत इस काव्य मे प्रयुक्त हुए हैं। एकाध उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

रूपक

१ शोक–सिंधु मे ऐसा डूबा जैसा डूबा हो आदित्य।

२ मणि-मति प्राची मे उगे, नवरचना-आदित्य।

उपमा

१ मित्र तुल्य सन्मित्र तुल्य, श्री वीरधवल राजा बलवान।

२ मुख सम मुखिया सरदारो का, आदर रखते अवयव अन्य।

उत्प्रेक्षा

१ चिन्ता ने निस्तेज कर दिया, वीरधवल का मुख मण्डल।
विकसित पुष्प पुज से मानो, निकल गई सारी परिमल॥

२ वसुन्धरा स्त्री, नगरी भी स्त्री, नही परस्पर ईर्ष्या भाव।
मानो बदल लिया दोनो ने, समय देखकर सहज स्वभाव॥

यह काव्य सास्कृतिक जीवन मूल्यो की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। धर्म व्यक्तिनिष्ठ होकर भी उसका प्रभाव समष्टिगत है। आदर्श राज्य के वर्णन मे कवि ने शासन का उद्देश्य लोक मगल माना है। आदर्श राज्य मे समष्टिगत हित सर्वोपरि है —

सामूहिकता मे मानवता, विकसित हो रह पाती है।
कही अकेली खडी शिखर पर, गीत नही ये गाती है।
[पृष्ठ 505]

राज्य की सम्पदा और सुविधा किसी एक के लिए नहीं वह सार्वजनिक और सबके लिए है—

सहज प्राकृतिक सार्वजनिक सब कर्मफलाश्रित श्रम पुरूषार्थ।
सबके लिए न्याय होता है, शब्द अर्थगत ज्यों गूढ़ार्थ॥

[पृष्ठ 6]

यहां राजा और प्रजा में द्वन्द्व, तनाव और संघर्ष नही है। राजा धैर्य, शौर्य, औदार्य, दक्षता, दान, सत्य, करुणा जैसे सद्गुणो का समुच्चय है। उसके अभाव में जैसे ये गुण निराधार हो जाते है। इसीलिए प्रजा राजा की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व समर्पित करने को तैयार है। राजा व्यक्ति नही, सिद्धान्त और संस्था है। राजा अपने वचन-पालन के लिए मरने को तैयार रहता है तो प्रजा के तन-मन में सूनापन छा जाता है। यही नही, पशु-पक्षी तक उदास और व्यथित हो उठते है—

पशुओं ने भी लिया न चारा, पक्षी चुगते चूर्ण नहीं।
काली चिड़िया किसी पथिक को, उड़ कर देती सूरा नहीं॥

[पृष्ठ 30]

इस काव्य में पिता-पुत्र के, पति-पत्नी के आदर्श सबंधों को रेखांकित किया गया है। यहां प्रेम है, पर उसका वासना से नही, आराधना से लगाव है; यहां सौन्दर्य है, पर वह मूर्च्छा जागृत नही करता, वह सत्य, सयम से युक्त होकर चमकता-दमकता है। यहां राजशक्ति, योगशक्ति और साधना-शक्ति है पर वह लोभ, क्रोध, और काम से नही जुडकर सेवा, सहयोग, उत्सर्ग और बलिदान से जुड़ती है। यहाँ प्रेम सुलाता नही, सदा जागृत रखता है। शौर्य और साहस उसके पंख है, जिनके बल पर वह वासना को लांघकर संयम-साधना का अंग बनता है। यहाँ व्यष्टि और समष्टि, प्रवृत्ति और निवृत्ति, रूप और शील का अद्भुत संगम है। इस कृति में मलयसुन्दरी अपने सौन्दर्य से दीप्तिमान है, पर महाबल का सहयोग पाकर ही वह सुभासित होती है। यहां महाबल है, पर वह अपने बल का प्रदर्शन

प्रतिशोध और क्रोध मे नही करता, वह परोपकार और सेवा के मलय से मयुक्त होकर अपने बल को महनीयता और माथकता प्रदान करता है।

आज के मदभ मे यह काव्य बडा उपयोगी और प्रासगिक है। आज जीवन की मलयसुन्दरी प्रदूषित है। "मलय" का अर्थ है—"चन्दन"। आज जीवन का चन्दन उपभोक्ता सस्कृति के दबाव से भोगवृत्ति और कामवृत्ति से विपाक्त और विकृत है। मलयसुन्दरी की रक्षा महाबल ही कर सकता है पर आज महाबल हिंसा और विनाश के साथ जुड गया है। शील का साथ छोडकर वह शस्त्र के साथ सयुक्त हो गया है। जब तक यह शस्त्र बल शास्त्रबल नही बनता, आत्मबल और परमात्म बल का अवलम्ब नही लेता, तब तक मलय की रक्षा सदिग्ध है। पग-पग पर विषैले काटे बिखरे हुए हैं। अन्त प्रकृति और बाह्य प्रकृति अनियन्त्रित इन्द्रिय-लिप्सा से दूषित है। जीवन का और समाज का भीतरी और बाहरी पचतत्व–भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश-दूषित प्रदूषित है। वह प्रलयमग्न है। उसे मलयमग्न बनाना है। महाबल को तेजस्विता, आन्तरिक वीरता धीरता देनी है। यह काव्य इस दिशा मे मार्गदर्शक है।

इस कृति के रचनाकार गणिवर्य मणिप्रभ सागर ओजस्वी कवि और प्रबुद्ध मनस्वी चिन्तक है। अपनी कृति मे स्थान-स्थान पर उन्होने अपने उद्देश्य को स्पष्ट किया है। इस कथा को उन्होने "चारु चरित्र नवीन 'अखण्ड चरित्र,' क्रम-क्रम मे रचना बडी विशिष्ट" कहा है। उनमे प्रतिभा है, पाडित्य है, पर वह सब अपने गुरु आचार्य श्री जिनकान्तिसागर सूरीश्वर जी को समर्पित है। कवि अत्यन्त विनीतभाव से मा शारदा से प्रार्थना करता है—

"शक्ति भक्ति दो शारदे ! मै तेरा सत्पुत्र ।
ध्यान रहे "मणि" से नही, भाषित हो उत्सूत्र ॥
अहकार जागे नही, बढे ज्ञान की भक्ति ।
उपासना सत ज्ञान की, आत्मा की अभिव्यक्ति ॥

[पृष्ठ 91]

कवि ने इस रचना में अपनी मति और श्रम का संयोग किया है—"मति-श्रम का सयोग" । उसने भाषा और शैली के सबंध में सकेत दिया है—**"भाषा विमल प्रभात सी, शैली उजली रात"** । यह कृति शील और सयम की आराधना रूप है । इसमे मलय–महाबल का जो चरित्र है, वह प्रेम प्रधान उतना नही है, जितना कर्म और संघर्ष प्रधान है । संघर्ष ऐसा नही जो उत्तेजना फैलाये, संघर्ष ऐसा जो संवेदना जगाये । जिसमें हम सब मिल सहयोग दे, मिले-जुले, हंसे खेलें, जिससे **"भगे अलसता-विवशता, तन-मन आये स्फूर्ति"** ।

इस कृति का रचनाकार केवल कवि नही है, वह भक्त और साधक भी है । आदि जिनेश्वर से वह 'नित्य मगल' का आशीर्वाद मांगता है । भगवान पार्श्वनाथ से सदा पास मे विराजने की अभ्यर्थना करता है । स्वय बुद्ध सिद्धार्थ से सीमित शब्दो में सर्वार्थ समेटने की प्रार्थना करता है और माँ सरस्वती के चरणो मे नत होकर अपनी मति को हंस के समान विवेक शील बनाने की भावना भाता है । यह विनय भाव कवि को ज्ञान, भक्ति और क्रिया की साधना में संबल प्रदान करता है । इसीलिए उसने अपनी कृति को एक ओर ज्ञान के प्रतीकार्थ मे सूर्य कहा है— **"मणि" मति प्राची में उगे, नव रचना-आदित्य"** तो दूसरी ओर ऊर्जा की धारक क्रियाशक्ति के प्रतीक रूप मे बाण कहा—**"रचना के कोदण्ड से, शोभे मणि भुजदण्ड"** ।

आशा है, यह कृति जन-मन के प्रेय-श्रेय भाव को समान रूप से जागृत करेगी ।

डॉ. नरेन्द्र भानावत
एसोशियेट प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
एवं
सम्पादक 'जिनवाणी' मासिक

21 जनवरी, 1990

मलय सुन्दरी रास

प्रथम खण्ड

दोहा

आदि जिनेश्वर जयतु जग, आदिम मंगल नित्य ।
"मणि"-मति प्राची में उगे, नवरचना – आदित्य ॥ १ ॥

पाशमुक्त श्री पार्श्व जिन, सदा विराजे पास ।
आस पास "मणि" के रहे, अविचल आतम उजास ॥ २ ॥

सिद्धार्थाङ्गज सिद्धिप्रद, स्वयं बुद्ध सिद्धार्थ ।
"मणि मुनि" के शब्दार्थ में, समेट दो सर्वार्थ ॥ ३ ॥

महिमा खरतरगच्छ की, फैले चारों ओर ।
"मणि" सुन पुलकित नित बने, भविजन चतुर चकोर ॥ ४ ॥

श्री जिन हरिसागर सुगुरु, श्री जिनकांति विशेष ।
"मणि" को रचना के लिए, दे अपना आदेश ॥ ५ ॥

कृपा करो मां शारदे !, दो चरणों में स्थान ।
"मणि"-मति हंस समान बन, रचना करे महान ॥ ६ ॥

कवि कुल का उज्ज्वल करे, "मणि" जो मेरा नाम ।
इसी लिए लू हाथ मे, रचना का शुभ काम ॥ ७ ॥
मलय सुन्दरी का लिखू, चारु चरित्र नवीन ।
"मणि" लाभान्वित हो सके, पाठक परम प्रवीन ॥ ८ ॥
दुर्जन दुष्ट करे नही, रचना पर दृग्पात ।
ग्रहण कीजिए दूर से, "गणि मणि" का प्रणिपात ॥ ९ ॥

तर्ज– राधेश्याम

मलय सुन्दरी और महाबल कु वर कथा सुन लो प्यारी ।
जोर किसी का कभी न चलता, कर्मों की लीला न्यारी ॥ टेर ॥

एक श्लोक का अर्थ समझ कर, दु खोदधि का पाया पार ।
'मलय सुन्दरी' के जीवन पर, शात चित्त से करे विचार ॥ १ ॥
ज्ञान अकारण-बन्धु, सहायक, अदृष्टार्थ बोधक सज्ज्ञान ।
केवलियो से इसे मिला है, तीनो रत्नो मे शुभ स्थान ॥ २ ॥
सत्य स्वरूप समझ मे आता, जब सज्ज्ञान प्रकाश मिले ।
प्रेम मिठास तभी मिलती मन–आपस मे विश्वास मिले ॥ ३ ॥
भरतक्षेत्र मे चम्पा नगरी, अलका की लघु भगिनी जान ।
एक स्वर्ग मे एक धरा मे, रखती अपनी अपनी शान ॥ ४ ॥
वसु धरा स्त्री नगरी भी स्त्री, नही परस्पर ईर्ष्या भाव ।
मानो बदल लिया दोनो ने, समय देखकर सहज स्वभाव ॥ ५ ॥

पूर्व भाग में मलयाचल गिरि, खड़ा खड़ा दे रहा सुगन्ध ।
बहते हुए वायु से कहता, नगरी पर से बहना मन्द ॥ ६ ॥
दक्षिण दिशि में सरिता बहती, कहती मेरा 'गोला' नाम ।
कलकल नाद सुनाती जाती, करती जाती अपना काम ॥ ७ ॥
रंग उमंग अंग में शीतल-जल में सहज तरंग उठे ।
बहती कहती जीवन हैं वह, जिस जीवन में रंग घुटे ॥ ८ ॥
उपजी कहाँ ? कहाँ पर आई ? लाई नव-जीवन धारा ।
रखती हुई सुरक्षित जीवन, लुटा चली जीवन प्यारा ॥ ९ ॥
सरिता तट पर बने हुए हैं, बाग बगीचे सुन्दरतम ।
हरियाली वाले क्षेत्रों में, ताप पड़ा करता है कम ॥ १० ॥
जब जी चाहे आओ, जाओ, बैठो, लेटो, लो विश्राम ।
रोक टोक का कभी न होता, सार्वजनिक स्थानों में काम ॥ ११ ॥
अन्न अधिक उपजाया करती, धरती माता धर मन हर्ष ।
पिछले वर्ष याद तब आये, जब कम निपजे चालू वर्ष ॥ १२ ॥
खाने पीने और पहनने, जब सब को पर्याप्त मिले ।
तब चोरी करने को कोई, अपने घर से क्यों निकले ॥ १३ ॥
आस पास के गांवों पर ही, आधारित पुर का व्यापार ।
एक दूसरे के पूरक बन, सुखी बना सकते संसार ॥ १४ ॥
सामाजिकता धार्मिकता का, मानवता का सत् सिद्धान्त ।
सदा बना करके रखता है, मानव जीवन शाँत नितान्त ॥ १५ ॥

*मित्र तुल्य मन्मित्र तुल्य, श्री वीर धवल राजा बलवान ।
प्रतिपालन करता जनता को, प्यारे पुत्र तुल्य पहचान ॥ १६ ॥
अरियो ने सिर नही उठाया, उठी देख नृप की तलवार ।
एकवार का वार बहुत तब, बार बार क्यो करे प्रहार ॥ १७ ॥
सेना का बल सत्य बाहुबल, और मनोबल जिसके पास ।
उसका नाम श्रवण कर अरिबल, खो देता अपना विश्वास ॥ १८ ॥
नही प्रजा का शोषण पीडन, कर न चुराया जाता है ।
अन्यायार्जित धन नृप जन से, कब ठुकराया जाता है ॥ १६ ॥
जिसको जो भी दुख हो, कह-सुन, उसे हटाया जाता है ।
कही नही छल, कही नही बल, मल बिसराया जाता है ॥ २० ॥
बहुत समय से खुला न ताला, शस्त्रो के भण्डारो का ।
विग्रह कही न हो तो हो क्या—सदुपयोग हथियारो का ॥ २१ ॥
विग्रह बिना समास नही यह, नियम व्याकरणकारो का ।
कर पाया अनुकरण नही जनता के नये विचारो का ॥ २२ ॥
कही न चोरी, कही न डाका, लूटपाट का काम नही ।
निंदिया नि शंकित हो आती, आतंको का नाम नही ॥ २३ ॥
जिसको जिसकी पड़े जरूरत, उसी समय वह मिल जाती ।
मानो पास पडौसी सारे, समगोत्रीय स्वजन न्याती ॥ २४ ॥

---

* सूर्य

सुख में साथी दुख में साथी, कोई भी किसको न हंसे ।
पता नहीं कब किसकी नैया, बीच भंवर में कहीं फंसे ।। २५ ।।
सामाजिकता के सूत्रों को, कोई नहीं तोड़ता है ।
अगर टूटता दिख जाये तो, मन से उसे जोड़ता है ।। २६ ।।
समय समय पर बनते रहते, नियम सभी की सहमति से ।
सहमत कोई कभी न होता, किसी तरह की अवनति से ।। २७ ।।
मुख सम मुखिया सरदारों का, आदर रखते अवयव अन्य ।
अंग और अंगी सम जीते, रखते प्रेम स्वभाव अनन्य ।। २८ ।।
हीन दीन गिन किसी अंग का, किया नहीं जाता अपमान ।
यथा शक्ति सेवा करने का, सबको अवसर मिला समान ।। २९ ।।
मन अभिमान नहीं करते, कर, यथा स्थान धन सेवा दान ।
मेरा नहीं अकेले का धन, समाज का यह बड़ा निधान ।। ३० ।।
यह चाहे तो अभी लूट ले, मुझ से क्या हो रखवाली ।
सब के साथ मनाई जाती, होली हो या दीवाली ।। ३१ ।।
सामूहिकता में मानवता, विकसित हो रह पाती है ।
कहीं अकेली खड़ी शिखर पर, गीत नही ये गाती है ।। ३२ ।।
मानव मानव सारे भाई, भाई-भाई में खाई ।
जहाँ और जब बात बनी तब, मार शत्रुओं से खाई ।। ३३ ।।
किसी एक के लिए न न छाया, किसी एक के लिए न धूप ।
किसी एक के लिए नहीं रंग, किसी एक के लिए न रूप ।। ३४ ।।

किसी एक के लिये न विद्या, किसी एक के लिये न ज्ञान ।
किसी एक के लिये नही तप, किसी एक के लिये न दान ॥ ३५ ॥
किसी एक के लिये नही बल, किसी एक के लिये न सूझ ।
किसी एक के लिये न पूनम, किसी एक के लिये न दूज ॥ ३६ ॥
किसी एक के लिये न धरती, किसी एक के लिये न वायु ।
किसी एक के लिये नही सुख, स्वास्थ्य, समृद्धि बडी आयु ॥ ३७ ॥
किसी एक के लिये न सेवा, सान्त्वन शुभ सहयोग विशेष ।
किसी एक के लिए न होता, मुनि भगवतो का उपदेश ॥ ३८ ॥
सहज प्राकृतिक सार्वजनिक सब, कर्म फलाश्रित श्रम पुरुषार्थ ।
सब के लिए न्याय होता है, शब्द अर्थ गत ज्यो गूढार्थ ॥ ३९ ॥
एक व्यवस्था एक न्याय है, भले किसी का हो अपराध ।
नीचे वाली रकम बडी तब, कैसे कोई क्या दे बाद ॥ ४० ॥
लाँच और रिश्वत के द्वारा, बच पाता जब अपराधी ।
सत्पुरुषो के लिए पली यह, सभी तरह मे बरबादी ॥ ४१ ॥
ऊँचे ऊँचे बने जिनालय, ध्यानस्थित जिन प्रतिमाएँ ।
पूजा करने वाले कहते, हम भी श्री जिन बन जाये ॥ ४२ ॥
कायोत्सर्ग स्थित मुद्रा मे, राग द्वेष का लेश नही ।
इससे बढकर समवसरण मे, होता कुछ उपदेश नही ॥ ४३ ॥
भाव सहित जिन दर्शन वदन, पूजन कर भवि तर जाते ।
मदिर से घर घर से मदिर, फिर जाते हे फिर आते ॥ ४४ ॥

आशातना न होने देते, अरिहंतों भगवन्तों की।
सातों क्षेत्र सरस रह पाये, गति-विधि ये पुनवंतों की ॥ ४५ ॥
साधु साध्वियां आते रहते, करते रहते चौमासा।
श्री आचार्य देव के द्वारा, धर्मोद्यम रहता खासा ॥ ४६ ॥
श्रावक और श्राविकाएँ मिल तपाराधना करते नित्य।
सामायिक, पौषधव्रत, सवर श्रुताभ्यास सेवा औचित्य ॥ ४७ ॥
अन्य धर्मियों से भी रखते, मेल मिलाप विशेष हमेस।
जिन मत की सब करे प्रशंसा, करे नहीं कोई भी क्लेश ॥ ४८ ॥
बदले धर्म, धर्मगुरु अपना, कोई इस पर रोक नहीं।
चाहे कोई किसी संत को, धोके या दे धोक नहीं ॥ ४९ ॥
अपने अपने धर्मो का सब, खुलकर करते सदा प्रचार।
किन्तु किसी की स्वतंत्रता पर, करते बिल्कुल नहीं प्रहार ॥ ५० ॥
यांत्रिक मांत्रिक तांत्रिक, वैष्णव, शैव और कापालिक लोग।
अपनी अपनी विधियों का सब, करते ऐच्छिक नित्य प्रयोग ॥ ५१ ।
राजकीय कार्यो में सबका, पूर्णतया रहता सहयोग।
वीर धवल राजा का मानो, पुण्योदय या शुभ संयोग ॥ ५२ ॥
'चंपकमाला' 'कनकवती' दो, महारानियाँ नरवर की।
स्त्री के बिना न शोभा होती, यहाँ किसी के भी घर की ॥ ५३ ॥
स्त्री से घर है, घर से स्त्री है, दोनों का संबंध बडा।
वह क्या घर है, वह क्या स्त्री है, जिसके हित घर बंद पड़ा ॥ ५४ ॥

चपकमाला ने पाया है, पटरानी का ऊँचा स्थान ।
शील स्वभाव सहज सुन्दरता, आकर्षक व्यक्तित्व महान ॥ ५५ ॥
पटरानी के पद के पीछे, है उत्तरदायित्व बडा ।
पद सभाल नहीं पाता वह, जो रहता बेभान पडा ॥ ५६ ॥
सबको साथ लिये चलती जो, वह हो सकती पटरानी ।
शृगारो मे डूबी रहती, रूपगर्विता अभिमानी ॥ ५७ ॥
चपकमाला की शोभा मे, सब स्वर सब व्यजन तैयार ।
मानो सरस्वती देवी का, इसके लिए खुला भडार ॥ ५८ ॥
'कनकवती' का कम न कही था, रूप रग-लावण्य स्वभाव ।
तरल तेज तारुण्य नृपति पर, कैसे डाले नही प्रभाव ॥ ५९ ॥
उम्र पचास वर्ष राजा की, फिर भी हुई नही सतान ।
राजमहल भी सूना लगता, सूना लगता यथा श्मसान ॥ ६० ॥
राजा हो रानी हो चाहे, नही कर्म के सम्मुख जोर ।
सब सुख नहीं कही भी होते, देखो करो जरा कर गौर ॥ ६१ ॥
इन्दुकला सी इन दोनो की, बढती प्रीति हमेश रही ।
कभी नही बध्यत्व-व्यथा की, कथा भूप के पास कही ॥ ६२ ॥
इन दोनो के साथ भूप का, जीवन बीत रहा सानन्द ।
स्नेह प्राप्त होते रहने पर, देता दीप प्रकाश अमन्द ॥ ६३ ॥
सध्यारानी परमसुहानी, लगी उतरने धरती पर ।
सूर्य रश्मियाँ चली सूर्य के, साथ क्षितिज के पार उधर ॥ ६४ ॥

दिन भर किए हुए श्रम से थक, श्रमिक सभी लेते विश्राम ।
फिर से शक्ति प्राप्त करने को, माना आवश्यक आराम ॥ ६५ ॥

विहग घोंसलों में घुसने के लिए लौटने लगे सभी ।
अंधेरे को दूर भगाने, इनके पास न टार्च अभी ॥ ६६ ॥

नभ मंडल धुंधलाता जाता, बढ़ता देख अंधेरे को ।
हवाइयाँ उड़ती मुख की ज्यों, पड़ा देख अरि घेरे को ॥ ६७ ॥

सभी कर्मचारी महलों के, सावधान बन गये विशेष ।
अनजाना नर कर न सके बस, अंधेरे के साथ प्रवेश ॥ ६८ ॥

पहरेदार खड़े हैं दर पर, रोक रहे हैं आने से ।
चूके जो कर्त्तव्य गये फिर, खाने और कमाने से ॥ ६९ ॥

सभा विसर्जन करके राजा, जा महलों की छत ऊपर ।
दृश्य निहार रहे नगरी का, नजर घुमाकर इधर उधर ॥ ७० ॥

इतने में आ खड़ा हुआ है, युवक एक दरवाजे पर ।
द्वारपाल से बोला नृप से, मिलने जाने दो भीतर ॥ ७१ ॥

जा न सकेंगे अभी आप यों, उत्तर देता है प्रतिहार ।
मिलना जो आवश्यक हो तो, और कभी आयें सरकार ॥ ७२ ॥

इसी समय मिलना आवश्यक, मुझे न रोको, जाने दो ।
नृपति प्रसन्न बनेंगे, प्रत्युत, अपनी बात सुनाने दो ॥ ७३ ॥

नृप ने देख लिया ऊपर से, बोले, लाओ मेरे पास ।
द्वारपाल सुन, साथ ले गया, आज्ञा ऊपर कर विश्वास ॥ ७४ ॥

खडा द्वार पर आकर वापिस, आज्ञा अर्पित कर प्रतिहार।
विनीतता से रखे युवक ने, नृप के सम्मुख सहज विचार ॥ ७५ ॥

गया युवक, पर प्रभाव डाला, वीरधवल नृप के मन पर।
विचारधारा बदल गई है, आगन्तुक से मिल, सुनकर ॥ ७६ ॥

निश्चित समय नहीं होता है, सुख दु ख सुनने के खातिर।
चौबीसो घटे सेवा हित, डाक्टर रहता है हाजिर ॥ ७७ ॥

'अभी नही' कहने वाला नृप, नही प्रजा प्रिय हो पाता।
प्रजापुत्र दुख रात जगाये, सुख से जनक न सो पाता ॥ ७८ ॥

अधेरी गलियो मे घूमा करते, राजा वेश बदल।
कौन कहाँ पर क्या कहता है, सुनते उनमे हो शामिल ॥ ७९ ॥

क्या ऐसा करने वाले नृप, वुद्धू थे या भोले थे।
अपने अपने राज्यो के वे, रतन बडे अनमोले थे ॥ ८० ॥

चिन्ता ने निस्तेज कर दिया, वीर धवल का मुख मडल।
विकसित पुष्पपुज से मानो, निकल गई सारी परिमल ॥ ८१ ॥

शोक सिंधु मे ऐसा डूबा, जैसे डूबा, हो आदित्य।
इतने मे आ गई रानिया, जैसे आया करती नित्य ॥ ८२ ॥

राजा ने देखा न प्रेम मे, आँख उठाकर इनकी ओर।
ये दोनो डर गई, सोचती, क्या हम पर है नजर कठोर ॥ ८३ ॥

क्या अपराध हुआ हमसे जो, मिला नही प्रियवर का प्यार।
क्या न पसद आगमन अपना, या न पसद किये श्रृगार ॥ ८४ ॥

करने लगी प्रार्थना, प्रभुवर ! कैसे इतने आप उदास ।
क्यों न हमारी ओर झांकते, क्यों न बुलाते अपने पास ॥ ८५ ॥
अभी अभी तो दिवानखाने, में बैठे लेते आनन्द ।
अभी अभी क्या हुआ बताओ, किया हमारे से मुखबन्द ॥ ८६ ॥
दुख हो तो उस दुख में शामिल, करो हमें भी करुणाकर ।
पड़े नृपति के श्रवणों में ये, विनय प्रेमरस मिश्रित स्वर ॥ ८७ ॥
गर्दन उठी, उठी हैं आँखें, वीर धवल की खुली जबान ।
मुझे तुम्हारे आने का बस, जरा नहीं हो पाया ज्ञान ॥ ८८ ॥
सुनो प्रिये ! चिन्ता का कारण, तुमसे नहीं छिपाऊँ मैं ।
संभव है अब उसे सुनाकर, युक्ति मुक्ति की पाऊँ मैं ॥ ८९ ॥
भार हृदय का हल्का होता, मन की व्यथा सुनाने से ।
पीड़ा हल्की होती फोड़ा, फूट पीप बह जाने से ॥ ९० ॥
अपने पुर में वणिक पुत्र दो, लोभानंदी 'लोभाकर' ।
करते बडी दुकान परस्पर, स्नेही सगे सहोदर नर ॥ ९१ ॥
लोभाकर के पुत्र एक था, गुणवर्मा जिसका अभिधान ।
लोभानंदी के न हुई है, अब तक कोई भी सन्तान ॥ ९२ ॥
होती है सन्तान देख लो, कर्म शुभाशुभ के अनुसार ।
हानि लाभ का पता चले तब, जब कोई खेले व्यापार ॥ ९३ ॥
कई स्त्रियों से पाणिग्रहण कर, देखा पर फल आया शून्य ।
अन्तराय टूटी न, उदय में, कृत या कारित आया पुन्य ॥ ९४ ॥

दुकान पर बैठे थे दोनो, आया एक युवक सुन्दर ।
इन दोनो ने विठलाया है, आगन्तुक को कर आदर ॥ ९५ ॥

आये परिचित भले अपरिचित, पूछे कुशल करे सम्मान ।
भारतीयता के नाते हम, मानव मानव एक समान ॥ ९६ ॥

प्रीति भक्ति से बना प्रभावित, युवक नित्य आता जाता ।
कुछ दिन बाद धरोहर अपनी, रखने को यो फरमाता ॥ ९७ ॥

रखो आपके पास प्रेम से, मेरा रस का तुवा आप ।
आऊँगा तव ले लूगा यो, कहा सेठ लोगो से साफ ॥ ९८ ॥

उनने उसे उठा खूटी पर, लटका दिया सुरक्षित कर ।
कौन करे सदेह वस्तु जव, रखने को दे अपने घर ॥ ९९ ॥

रखकर युवक गया पीछे से, गर्मी मे रस पिघल गया ।
झरने लगा पडा वह तुवा, वूद वूद रस निकल गया ॥१००॥

नीचे पडी कुदाल लोह की, वनी स्पर्श से सोने की ।
वात सिद्ध हो गई स्पष्ट अव, भरा सिद्ध रस होने की ॥१०१॥

लोभ जगा इन दोनो के मन, उस तूवे को छिपा दिया ।
लोभाकुल दिल ने दुनियाँ मे, नही कौनसा पाप किया ॥१०२॥

वही युवक फिर आया अपना, तुवा उसने माग लिया ।
उन दोनो ने मधुर वोलकर, उत्तर ऐसा उसे दिया ॥१०३॥

चूहो ने काटी रस्सी वह फूटा, रस विखरा सारा ।
रखे सभाल उसी के टुकडे, लो जोडो तुवा प्यारा ॥१०४॥

समझदार सुन समझ गया सब, बोला बोलो झूठ नहीं ।
करो नहीं विश्वासघात लो, माल मुफत में लूट नहीं ॥१०५॥

ये उसके टुकड़े है इसमें, मुझे हो रहा है संदेह ।
उचित नहीं है उसे छुपाना, देह छिपा पाए न प्रमेह ॥१०६॥

अगर न स्वीकारोगे देना, मैं इसका बदला लूंगा ।
चाहे परदेशी हूँ लेकिन, तुमको मजा चखा दूंगा ॥१०७॥

फिर भी डरे नहीं हुंकारे, नटते रहे बराबर ही ।
सत्य सिद्ध करते जाते हैं, कहकर झूंठ सरासर ही ॥१०८॥

युवक सोचने लगा नृपति से, करूं शिकायत जो सारी ।
रस की तुम्बी वो ले लेगा, किसे नहीं लक्ष्मी प्यारी ॥१०९॥

सीधी अंगुलि घी न निकलता, ये ना सुनते मेरी बात ।
जैसे को तैसा बन करके, दिखलाने होंगे दो हाथ ॥११०॥

विद्यावान् युवक ने स्तंभन-विद्या का कर लिया प्रयोग ।
स्तंभित किया वहीं दोनों को, बने अचंभित सारे लोग ॥१११॥

हिले डुले ना काया दोनों, रहे वही के वहीं खड़े ।
चला गया है युवक वहां से, किससे अड़े लड़े झगड़े ॥११२॥

लगे टूटने हाथ पाँव सब, बनी सधियां शिथिल सभी ।
बड़ी भयानक पीड़ा होती, सही सुनी भोगी न कभी ॥११३॥

जिसने सुना उसी ने इनको, फटकारा है धिक्कारा ।
अकृत्यों का दुष्कृत्यों का, पड़े भुगतना फल सारा ॥११४॥

गुणवर्मा था गया कही पर, आया उसने जब जाना ।
पिता और चाचा का सारा, पाप-दोप दुख पहचाना ॥११५॥
गली गली मे मुह मुह पर, निन्दा है अपने घर की ।
किए प्रयास छुडाने के पर, इच्छा उल्टी ईश्वर की ॥११६॥
मान्त्रिक तान्त्रिक यान्त्रिक आए, कर न सके कोई उपचार ।
खरच किए कितने ही पैसे, गया परिश्रम सब बेकार ॥११७॥
नही कही भी रास्ता दिखता, खडे खडे वे चिल्लाते ।
स्नेही स्वजन सखा घरवाले, निरुत्साह हो झल्लाते ॥११८॥
पत्नी पुत्र करे क्या बोलो, नही किसी के पास इलाज ।
उसी युवक को ढूंढ लाइये, सुत मे कहता सकल समाज॥११९॥
शान शक्ल से जो पहचाने, उस नौकर को साथ लिया ।
उसी युवक को ले आने को, सुत ने शीघ्र प्रस्थान किया ॥१२०॥
वन उपवन गिरि गह्वर घर-घर, गाँव शहर मे जाए जी ।
जिसका कुछ भी पता नही, उस नर को कैसे पाए जी ॥१२१॥
किससे पूछे ? क्या पूछे ? क्या, उत्तर दे उत्तरदाता ।
नावें जमा बाद मे पूछा, जाए पहले तो खाता ॥१२२॥
पथ मे ही बीमार पडा चर, उसे वही छोडा पीछे ।
दो वृपभो वाले रथ को अथ, वृपभ अकेला ही खीचे ॥१२३॥
चूर चूर हो गई देह थक, मन ने साहस हार दिया ।
मावधामि कार्य केवल यह, पद्य एक स्वीकार किया ॥१२४॥

शून्य शहर के दरवाजे पर, आकर क्षण भर रुका खड़ा।
एक युवक मिल गया सामने, जगा कुतूहल प्रेम बड़ा ॥१२५॥

सुन्दर नगर नहीं नर कोई, इचरज वाली बात यही।
बात पूछ लूँ इससे सारी, बतला देगा सही-सही ॥१२६॥

इससे पहले उसने इससे, पूछा—यहाँ कहाँ आया ?।
थका पथिक, रुकने की इच्छा, लेकर रुककर सुख पाया ॥१२७॥

आप कौन हैं ? और अकेले, शून्य शहर है क्यों ? सारा।
इच्छा है ये हाल हकीकत, सुनू आप श्री के द्वारा ॥१२८॥

उसने कहा- भद्र ! ले सुन ये "कुशवर्द्धन" पुर है सुन्दर।
शूराग्रणी 'शूर' राजा थे- पहले इस पुर के अन्दर ॥१२९॥

उनके हम दो तनय 'विजय' 'जय', जय बैठा सिंहासन पर।
अहंकार आ गया मुझे मैं, निकला बाहर छोड़ नगर ॥१३०॥

पहुँचा चन्द्रावती घूमता, वन में देखा सिद्ध महान्।
उसे हुआ अतिसार करुणाया, सेवा की गिन धर्म प्रधान ॥१३१॥

स्वार्थ रहित सेवा करने पर, सेवा का फल मिलता है।
दिल वाले का दिलवाले पर आखिर में दिल हिलता है ॥१३२॥

अथ वह स्वस्थ बना कुछ दिन में, नाम ठाम पूछा मेरा।
पाठ सिद्ध दो विद्यायें दे, दूर कर दिया अंधेरा ॥१३३॥

रस तुंबी दे कहा- सिद्धरस, दुर्लभ है रखना संभाल।
बिन्दु मात्र के संस्पर्शन से, लोहा स्वर्ण बने तत्काल ॥१३४॥

श्री पर्वत पर चला गया वह, सिद्ध पुरुष उपकारी जन ।
किन शब्दों से करूँ बताओ, कृतज्ञता ज्ञापन वर्णन ॥१३५॥
चन्द्रावती पुर मे रहते, लोभानदी लोभाकर ।
उनके यहा रखा रत्न तुबा, मन करता विश्वास अमर ॥१३६॥
लक्ष्मीपुर जा कुछ दिन रुककर, निजपुर गमनोत्सुक मन बन ।
रत्नतुम्बी लेने को पहुँचा, करता पाद विहार भ्रमण ॥१३७॥
उनने उसको छुपा लिया है, दिया मुझे उत्तर झूठा ।
मैंने स्तभित किया वही पर, बहुत बुरा हूँ मै रूठा ॥१३८॥
ले प्रतिशोध इधर घर पहुँचा, सूना मिला शहर सारा ।
गुणवर्मा सुन हाँ-हाँ करता, युवक यही है वह प्यारा ॥१३९॥
पर मै अपना परिचय दूगा, सुन लूगा जब आगे की ।
रोको नही कथा कह डालो, सूने शहर अभागे की ॥१४०॥
दिखा नही नर एक कही पर, गया राजमहल चल कर ।
बैठी वहाँ अकेली भाभी, पूछ लिया उससे खुलकर ॥१४१॥
रोने लगी पूछने पर वो, बिठलाया देकर सत्कार ।
देवर भाभी का होता है, मा बेटे सा शुचि व्यवहार ॥१४२॥
देवर जी ! वन मे रहता था, एक मास उपवासी सत ।
लोकप्रिय रक्ताम्बर धारी, परोपकारी यथा बसत ॥१४३॥
उसे पारणा करवाने को, भूपति ने बुलवाया घर ।
हवा डालने को मै बैठी, राजाज्ञा से लिए चमर ॥१४४॥

वह मेरे पर हुआ विमोहित, निशि में आया मेरे पास।
काम प्रार्थना करता, अनुनय, भय दिखलाता देता त्रास ॥१४५॥

इधर द्वार स्थित नृप ने सारी, बातें सुन ली कानों से।
बधवाया है अपराधी को, कौन बचाये प्रानों से ॥१४६॥

सुबह शहर में उसे घुमाया, लोग हंसे देकर ताली।
निंदनीय जो काम करे वो, जनता से खाये गाली ॥१४७॥

वध्य स्थान में वध करवाया, जैसे मारे जाते चोर।
मरकर राक्षस बना दुष्ट वह, दुश्मन मन का बना कठोर ॥१४८॥

अपने पूर्व-वैर से प्रेरित, आया नरवर को मारा।
प्रजा भगी भय के मारी पुर, शून्य हुआ उसके द्वारा ॥१४९॥

भाग रही थी मैं भी मुझको, रोक लिया दिखला कर रोष।
ले आऊँगा तुझे यहीं मैं, रहो यहीं मानो सन्तोष ॥१५०॥

तुझे नहीं भय चिंता, तेरी, चिंता करने वाला मैं।
दिन में कही कहीं निशि में, प्रच्छन्न विचरने वाला मैं ॥१५१॥

मैंने कहा जीतकर इसको, भाई का ले लूं प्रतिशोध।
गया राज्य लौटाऊँ मन में, उफन रहा है भारी क्रोध ॥१५२॥

उसका कोई मर्म बतायें, आप जानती हों जैसा,
साहस पूर्वक कहता हूँ मैं, कर दिखलाऊँगा वैसा ॥१५३॥

सोये राक्षस के पैरों में, घी की मालिश करने से।
ऐसी निंदिया आती, जैसी आती आखिर मरने से ॥१५४॥

पुरुप स्पर्श से जैसी निंदिया, आती है उमको तत्काल ।
नारी के कर स्पर्श घर्प से, आते हैं उमको जजाल ॥१५५॥

पता पुरुप का पा जाने पर, पाव हटा लेता है वो ।
मालिश करने वाले को, यमलोक दिखा देता है वो ॥१५६॥

सुन भाभी की वात सहायक, नर पाने को निकल पडा ।
मिला सामने आता तू वस, परोपकारी पुरुप वडा ॥१५७॥

अपने दुख की जिसे न चिन्ता, पर दुख दूर करे तत्काल ।
परमार्थी पुरुपो का जीवन, वदनीय महनीय विशाल ॥१५८॥

धोता नही कलक स्वय का, जग को धवलित करे शशी ।
पर दुख दूर करे इसमे ही, रहे मानते परम खुशी ॥१५९॥

अग पराया ढकने को ये, कप्ट उठाता स्वय कपास ।
पर दुख हारी मगलकारी, पुरुप दिखाते हर्पोल्लास ॥१६०॥

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
तरणी, धरणी, तरणी, तरणी, तरुवर, सत, नदी, वरसात ।
९
परोपकारी "नर" नव करते परहित जीवनदानी वात ॥१६१॥

पृथ्वी का सव भार पीठ पर, कछुआ लादे रहता है ।
हाय मर गया हाय मर गया, कभी न मुख मे कहता है ॥१६२॥

धान्य स्वय कव खाये धरती, देती दुनिया को खाने ।
दाने मे कर देती देखो, कई हजार गुने दाने ॥१६३॥

१ सूय, २ धरती, ३ नावा, ४ औपधि

अगर सहायक आप बनो तो, प्रजा पुनः बस पायेगी ।
मुझे राज्य मिल जायेगा, यश-गीत आपके गायेगी ।।१६४।।

नहीं अकेले से कुछ होता, सब कुछ होगा दोनों से ।
मेरु शिखर कब छूआ जाए, जन्म जात नर बोनों से ।।१६५।।

कष्ट कथा यह स्पष्ट सुनादी, महादुष्ट है राक्षस वो ।
तू मालिश करना पैरों में, जिससे वह निंदिया वश हो ।।१६६।।

स्तंभनकर्त्री विद्या द्वारा, स्तंभित उसे करूंगा मैं ।
वश करने वाली विद्या से, परवश उसे करूंगा मैं ।।१६७।।

गुणवर्मा ने गुण करने को, भरा सहज में हुंकारा ।
हो तो भला किसी का कर दे, जो होवे अपने द्वारा ।।१६८।।

सामग्री अभिमंत्रित करके, छुपे महल में अब प्रच्छन्न ।
अंधेरा होने पर आया, राक्षस दुर्मति कामासन्न ।।१६९।।

यहां कहां से आज आ रही, मानव के होने की गंध ।
भद्रे! बता सत्य क्या? किसको? किया किसी कोने में बंद ।।१७०।।

मैं ही हूँ मानव महलों में, मेरे सिवा न कोई अन्य ।
सुनकर शांत हो गया राक्षस, लगा मानने जीवन धन्य ।।१७१।।

फिर सोचा आयेगा कैसे, किसे मौत अपनी प्यारी ।
मानव हंता राक्षस हूँ मैं, मेरी तो मथुरा न्यारी ।।१७२।।

पांव पसार पलंग पर सोया, पाँव दबाती विजया पास ।
आई नींद शांति से गहरी, गहराया मन का विश्वास ।।१७३।।

विजया खिसक गई धीरे से, गुणवर्मा आया स्त्री बन ।
कोमल हाथो से करता है, दोनो पावो मे मर्दन ॥१७४॥
विजय स्तभनी विद्या का इन, करता जाप त्रिताप हरम् ।
मर्त्यगध पा राक्षस उठता, शय्या से वारवारम् ॥१७५॥
ज्यो ज्यो उठता त्यो त्यो मालिश, गुणवर्मा करता दे जोर ।
गहरी नीद घेरती जाती, विस्मृत वाले चलते दौर ॥१७६॥
जाप पूर्ण होने पर छोडा, गुणवर्मा ने पद-मर्दन ।
राक्षस ने अब सहज उठाई, शय्या से अपनी गर्दन ॥१७७॥
युवक सामने खडे देख दो, वढा मारने को तत्काल ।
मार नही पाया तव वोला, अपने आपे को सभाल ॥१७८॥
दास आप लोगो का हूँ मैं, मेरे योग्य करो आदेश ।
मालिक मालिक ही होता है, जाति, समय, वय नही विशेष ॥१७९॥
विजय चन्द्र ने कहा भरो ये, धन कण कच्चन से भडार ।
उजडे हुए शहर को अच्छे, ढग से पुन करो तैयार ॥१८०॥
छिडको सव सडको पर पानी, फूल सुगन्धित वरसाओ ।
शहर छोड कर चले गए उन, लोगो को वापिस लाओ ॥१८१॥
महा सचिव सेनापति लौटे, लौटी सारी प्रजा सुखी ।
अपनी जन्मभूमि मे वसकर, कोई रह पाये न दुखी ॥१८२॥
विजयचन्द्र को राज्यासन पर, सचिवो ने अभिषेक किया ।
विकट समय मे सत्त्व वुद्धिवल, कार्य आखसे देख लिया ॥१८३॥

नमे नहीं नमने वाले भी, छोटे और बड़े सारे ।
अपराधों का अन्यायों का, सहज-सहज में आया सार [illegible] ॥
गुणवर्मा से कहा विजय ने, मैंने जो कुछ पाया है ।
तेरी सहायता ने सारा, यहां कमाल दिखाया है ॥ ४॥
मांग तुझे जो भी ईप्सित हो, चाहे ले ले राज्य अखिल ।
तेरी मेरी देह भिन्न है, किन्तु एक दोनों के दिल ॥ ५॥
चन्द्रावती पुरी में स्तंभित, पूज्य पिताजी, काकाजी,
उनको बंधन मुक्त कीजिए, अगर आप मन में राजी ॥ ६॥
सुनकर बोला हालाहल से, उपजी कैसे अमृत धार ।
विचित्रता यह विधि की भारी, तू करता है पर उपकार ॥ ७॥
तेरा कथन नहीं टालूंगा, धरा उलट हो जावे पर ।
तुम खुद ही कर पाओगे ये, काम समय हो आने पर ॥ ८॥
सुनलो कारण स्पष्ट करूं मैं, एक तुंग गिरि एक सरोवर ।
देवाधिष्ठित गुप्त कूपिका[1], उसका जल गुण वाला और [illegible] ॥ ९॥
उसका मुंह खुल-खुलकर, बारंबार हुआ करता है बंद । १०॥
स्तंभित नर का पुत्र वहां से, ले आए पानी सानन्द ॥
तीन बार छिड़के जिस पर भी, बंधन मुक्त बने वो नर । ११॥
पानी लाते समय डरे वो, उसके भीतर जाये मगर ॥ १२॥

---
१ कुंई

इसके सिवा उपाय न कोई, बंधन मुक्त बनाने का।
समझ गये तुम आशय मेरा, सारा भेद सुनाने का ॥१९३॥
गुणवर्मा ने कहा सुनो जी !, यह भी काम मुझे करना।
पितृ मुक्ति के बिना पुत्र का, एक तुल्य जीना मरना ॥१९४॥
विजयचन्द नृप साथ हो गया, सामग्री, सारी ली साथ।
मुह खुलते ही गुप्त कुई मे, उसे उतारा हाथो हाथ ॥१९५॥
डोरी थामे खडा विजय वहि, जल ले वह ऊपर आया।
मुह खुलते ही बाहर लाया, मन इच्छित जल फल पाया ॥१९६॥
राक्षस को आज्ञा दी, घोडे बनो, ले चलो हमे वहा।
चन्द्रावती पुरी मे बधन, बधे पिता पितृव्य जहा ॥१९७॥
सुत ने पूज्य पिता पर वह जल, तीन बार अथ छाटा है।
बधन सारे टूट गए ज्यो, पग से निकला काटा है ॥१९८॥
लोभानन्दी बधा पडा है, सुत के बिना छुडाये कौन।
बिना पुत्र के गति न पिता की, सूत्र नही रख सकता मौन ॥१९९॥
किया उसे सस्थापित घर मे, गुणवर्मा के कहने से।
सभालने मे बाधा पडती, दुकान मे नित रहने से ॥२००॥
गुणवर्मा से कहा विजय ने, करो सचिव बनना स्वीकार।
पद लो धन लो चाहे जितना, मानो प्रेम भरी मनुहार ॥२०१॥
प्रत्युत उसने किया नृपति का, स्वागत विविध प्रकार भला।
स्वस्तुवा कर दिया समर्पित, जो घर भीतर रखा मिला ॥२०२॥

जाते समय विजय ने इसको, दिया प्रेम से रसतुंवा ।
मिला सभी कुछ मानो इसके, लटके मोती का लुंबा ॥२०३॥

इसे छोड़ कर जाना मुश्किल, फिर भी छोड़ गया नरवर ।
कितना ही हो प्रेम परंतु, निजघर परघर में अन्तर ॥२०४॥

आज अभी गुणवर्मा आकर, सुना गया सच बीती बात ।
प्राभृत प्रचुर रखा चरणों में, विनय भाव से जुड़ते हाथ ॥२०५॥

पिता और उसके चाचे का, न्यास हड़पने वाला दोष ।
माफ कर दिया मैंने मन से, मान लिया आत्मिक संतोष ॥२०६॥

सूर पुत्र ने गया–राज्य ले लिया, वैर निज भाई का ।
गुणवर्मा ने साहसपूर्वक, साथ दिया सन्यासी का ॥२०७॥

मुक्त बनाया पूज्य पिता को, कर दो बार मरण स्वीकार ।
गुणवर्मा के लिए हृदय में, उमड़ रहा है स्नेह अपार ॥२०८॥

यह तो हुई कहानी भद्रे !, इससे चिन्ता उपजी मन ।
मेरे कोई पुत्र नही है, चिन्ता का यह है कारण ॥२०९॥

बिना पुत्र के गुरुदेवों की, कौन करेगा अर्चाएँ ।
धर्म स्थान के उद्धारों की, कौन करेगा चर्चाएँ ॥२१०॥

वंश चलेगा कैसे मेरा, कौन बनेगा फिर आधार ।
क्या मैं ही होऊँगा मेरे, कुल के लिए कठोर कुठार ॥२११॥

पड़ा बंध में लोभानदी, सुत होता तो बनता मुक्त ।
मुझे यही है चिन्ता देवी !, उपर्युक्त चिन्तन उन्मुक्त ॥२१२॥

पति दुख मे दुखित बन करके, बोल उठी चंपकमाला।
जला रही है मेरे मन को नाथ! यही चिन्ता ज्वाला ॥२१३॥
है वे धन्य मनुष्य जिन्हो की, गोदी मे बालक हँसते।
हटते नही हटाने पर भी, बमामसी धँसते फँसते ॥२१४॥
झरणझरणाट करते पद घुंघरू, ठमक ठमक चलते धीरे।
रुक रुक तुतलाते बरसाते, मधुर वचन मुख से हीरे ॥२१५॥
सूनापन जीवन-आंगन का, मिटता बालक होने से।
बालक नही जनमता राजन्!, बालक बालक रोने से ॥२१६॥
किया जिन्होने पुण्य धर्म कुछ, उनने बालक पाये हैं।
कहते कहते रानी की, आँखो, मे आँसू आये है ॥२१७॥
आँसू पोछे अगोछे मे, रानी ने धीरज धारा।
बोली नाथ! बात सब सच्ची-करो धर्म तन-धन द्वारा ॥२१८॥
अंतराय जब टूटेगी तब, जनमेगी घर पर संतान।
बिन भक्ति के बिना प्रेम के, किसने दिया किसे वरदान ॥२१९॥
चिन्ता का परित्याग किए बिन, पुण्य कार्य कब हो पाता।
अंतराय टूटे बिन इच्छित, फल न हस्तगत हो पाता ॥२२०॥
देवाराधन के द्वारा हम, पाएँ अपना ईप्सित फल।
कुछ भी हासिल करना मुश्किल, जब तक जगे न आत्मिक बल ॥२२१॥
पथ प्रशस्त बतलाने वाली, प्रिये! धन्य हो धन्य तुम्हे।
नहलाए निर्मल धारा से, बरस हरष पर्जन्य तुम्हे ॥२२२॥

मनसा पूरन करने वाले, देव कौन से कहो प्रिये !
लगी उतावल मेरे मन में, सुनो मौन मत रहो प्रिये ॥२२३॥

नाथ ! हमारे ऋषभदेव जी, वीतराग भगवान प्रथम ।
आप जानते और मानते, निभा रहे जो कुल का क्रम ॥२२४॥

उन लोकोत्तर पुरुषों से हम, करें न भौतिक अभिलाषा ।
हो जाए सम्यक्त्व मलिन जग, बुझे नहीं मन की प्यासा ॥२२५॥

इस शंका को स्थान नहीं है, करूं उपस्थित तर्क महान ।
क्योंकि मुझे भी जैन धर्म का नाथ ! प्राथमिक पूरा ज्ञान ॥२२६॥

प्रभु पूजन से वृद्धि पुण्य की, अन्तराय का होता क्षय ।
मनवांछित फल देती पूजा, अंतिम फल है सुख अक्षय ॥२२७॥

रानी की सुन वाणी नृप ने, प्रभु पूजन प्रारम्भ किया ।
जो कुछ किया किया विधिपूर्वक, नहीं कहीं भी दंभ किया ॥२२८॥

सुख से बैठे हुए एक दिन, राजा रानी करे विनोद ।
जीवन जीने को आवश्यक, माना है आमोद-प्रमोद ॥२२९॥

चम्पकमाला रानी का मुख, सहसा बना दीन श्री हीन ।
फड़क रहा है नेत्र दाहिना, आयेगी आपदा नवीन ॥२३०॥

लुट जाए सर्वस्व, गिरे या, बिजली आए कोई रोग ।
आशंकायें उठती मन में, पहले क्या समझें हम लोग ॥२३१॥

बढ़ती जाती है बेचैनी, हृदय हो रहा है व्याकुल ।
महारानी के वचन श्रवन सुन, बोले राजा वीर धवल ॥२३२॥